प्रकाशक
'गाँधी' हिन्दी-पुस्तक-भण्डार
प्रयाग ।
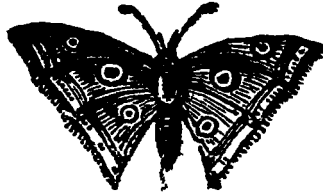
मुद्रक—
सूरजप्रसाद खन्ना,
हिन्दी-साहित्य प्रेस,
प्रयाग ।

विषय-सूची

जीवन और श्रम।

पहला प्रकरण।

आदमी और भला आदमी।

इस संसारमें मनुष्यका जीवन, बहुतसे अंशोंमें, काम करनेके लिये ही है। साधारणत. मनुष्यको सब दशाओंमें काम ही करना पड़ता है। जो आदमी "आदमी" कहा जा सकता हो, उसे सदा काम करनेके लिये तैयार रहना चाहिए। ईमानदार और परिश्रमी आदमी अपने गुजारेके लिये काम करना आवश्यक समझता है, पर वास्तवमें सभी दशाओं और सभी अवस्थाओं में मनुष्यके लिये काम करना बहुत ही आवश्यक है।

ऐसी दशामें जब कि और लोग काममें लगे हो, कोई आदमी निकम्मा रह कर क्यों कर अपनी प्रतिष्ठा बनाये रह सकता है? और कैसे अपने उत्तरदायित्वसे बच सकता है? काम सबसे अच्छा शिक्षक है; क्योंकि वह दूसरे मनुष्यों और पदार्थोंसे साक्षात्कार कराता है। जीवन-चरित्रोंके अवलोकनसे पता चलता है कि जितने बड़े आदमी हो गये हैं, वे सब अपने काममें खूब

परिश्रम करते थे और बड़े ही दृढ़ तथा कार्य्य-क्षम होते थे। इस समय संसारमे जितना ज्ञान, जितनी विद्या, जितनी उन्नति और जितनी सभ्यता दिखाई देती है वह सब मुख्यत' मनुष्यके हाथ तथा मस्तिष्कके कार्य्यका ही फल है।

परिश्रम ही प्रत्येक मूल्यवान् पदार्थका मूल्य है। विना परिश्रमके कुछ हो ही नही सकता। कठिन परिश्रम और अध्यवसायसे ही लोग बड़े बने हैं। चाहे वे कितने ही बुद्धिमान् और प्रतिभाशाली क्यो न हो, पर वे परिश्रमसे नही बच सकते। आशा और उत्साह-पूर्वक काम करनेमे बड़ी ही प्रसन्नता होती है। एक महात्माका कथन है—"परिश्रम न करनेसे बढ़कर परिश्रम-साध्य और कोई काम नहीं है। वह मनुष्य धन्य है जो अपने जीवनको किसी महान् और श्रेष्ठ कार्य्यके लिये अर्पित कर देता है और बुद्धिमत्ता-पूर्वक अपने कर्त्तव्य निश्चित करता है।"

परिश्रम करके जितने समयमे आप कुछ धन सग्रह करेगे उससे आधे समयमे ही वह धन खाली बैठे रहनेसे नष्ट हो जायगा। जीवनमे 'परिश्रम न करनेसे बढ़ कर हानिकारक बात और कोई नही हो सकती। प्राय युवक लोग परिश्रम-साध्य कार्य्योंसे डरते और बचते है। पर ऐसे लोग किसी प्रकारका सुख या आनन्द प्राप्त नही कर सकते। उनके लिये सदा कामसे छुट्टी ही रहती है, उन्हे विश्राम करनेका अवसर ही नही मिलता। ऐसे लोगोके द्वारा कभी कोई काम नही होता। एक विद्वान्ने कहा है—"कुछ काम न करना मानो जीते जी मर जाना है। जो आदमी ईश्वर या मानव-जातिके किसी कामका नही है वह मृतक के समान है। संसारकी आवश्यकताओ और परिवर्त्तनोसे उसका कोई सम्बन्ध ही नहीं होता। वह केवल अपना समय नष्ट करता है और बड़े ही

निन्दनीय रूपसे संसारकी उपज खाता है। मृत्यु आने पर वह मर जाता है और अपने जीवनमे कभी कोई अच्छा काम नही करता। यदि उसका कोई कार्य्य होता भी है तो वह या तो निरर्थक होता है या हानिकारक। सच पूछो तो अकर्म्मण्यता संसारमे सबसे बढ़कर नाशक है।”

बड़े बड़े महात्माओंके कथनानुसार परिश्रम न करनेवाला मनुष्य बड़ा भारी अपराधी और डाकू है। जो मनुष्य परिश्रम करता है वह कभी किसी प्रकारका अपराध या अनुचित कर्म्म नही कर सकता। निकम्मा आदमी सदा बुरे काम ही करेगा और यदि वह कोई बुरा काम न भी करे तो भी खाली बैठे रहना ही क्या कम बुराई है? ऐसा आदमी दयाका पात्र होनेके अतिरिक्त ताड़न के योग्य भी है। कुछ काम न करने और स्वार्थी बन कर आनन्द करनेसे बढ़ कर और कोई बुरी बात नही है। आत्म-पोषणसे नीति और मनुष्यत्वका नाश होता है और ऐसे दोषोकी सृष्टि होती है जिनका नाश मृत्युसे पहले नही होता।

विद्वानोका मत है कि सब प्रकारके दुष्कर्म्म देखनेमे सुखदायक जान पड़ते है। ये दुष्कर्म्म तो अकर्म्मण्य मनुष्योको अपनी ओर आकृष्ट करते ही है, इससे बढ़ कर स्वयं अकर्म्मण्य मनुष्य स्वयं ही दुष्कर्मोंकी ओर प्रवृत्त होता है। पर जो मनुष्य केवल आत्म-पोषण करता हुआ दुष्कर्मोंमे प्रवृत्त रहता है, नाश सदा उसके पीछे पीछे लगा फिरता है और अन्तमे उसे घोर दु:ख होता है। अकर्म्मण्य मनुष्यका न तो चित्त प्रसन्न रहता है और न शरीर स्वस्थ। अधिकांश लोग यदि समयका सदुपयोग करे तो उन्हे ऐसे असंख्य अवसर मिल सकते हैं जिनमे वे अपने सुखकी बहुत कुछ वृद्धि कर सकते है। जो थोड़ा बहुत समय हम यो ही नष्ट कर

देते है यदि उसका सदुपयोग हो तो उससे होनेवाले सुन्दर परिणामोको देख कर हमे परम आश्चर्य्य होगा। तेजीसे बीतनेवाले समयका हमे उपयोग करना चाहिए और उससे निधि प्राप्त करना चाहिए; नहीं तो वह सदाके लिये हमारे हाथसे जाता रहेगा। युवावस्थाके दिन सोनेके समान, प्रौढ़ावस्थाके दिन चाँदीके समान और वृद्धावस्थाके दिन सीसेके समान होते है। जो मनुष्य बीस वर्षकी अवस्थामे कुछ भी ज्ञान प्राप्त नही करता और तीस वर्षकी अवस्थामें कोई काम नही करता, चालीसवें वर्ष उसके पास कुछ भी नही रहता।

सभी अवस्थाओ और सभी दशाओंमे हमे समयका पूरा पूरा ध्यान रखना चाहिए और सदा सब काम ठीक समय पर करना चाहिए। जो मनुष्य ठीक समय पर काम नही करता वह सदा शिथिल, दुःखी और चिन्तित रहता है। एक बार एक आदमी राजा तृतीय जार्जसे जब निश्चित समयसे कुछ देर करके पहुँचा तब उन्होंने उसके समयके पाबन्द न होनेकी कुछ शिकायत की। इस पर उस आदमीने कहा कि "किसी कामके कभी न होनेकी अपेक्षा उसका देरसे होना अच्छा है।" राजा जार्जने उत्तर दिया-"नही यह तुम्हारी भूल है। मैं कहता हूँ कि देरसे होनेकी अपेक्षा कभी न होना अच्छा है।" संसारकी और सब बातोंमें देर हो सकती है पर नाशमे कभी देर नहीं होती।

जब तक मनुष्य न चाहे तब तक उसका जीवन कभी नष्ट नहीं हो सकता। यदि हम चाहे तो अपनी भी उन्नति कर सकते हैं और साथ साथ दूसरोको भी उन्नत कर सकते हैं। हम अपने आपको भी श्रेष्ठ बना सकते है और दूसरोको भी। पर इसके लिए हमें अपने विवेक और ज्ञानका धैर्य्य-पूर्वक उपयोग करना चाहिए।

बहुतसे लोगोमे अनेक प्रकारकी योग्यताएँ और शक्तियाँ हैं; पर उन सबका उपयोग करनेके लिये धैर्य्य-पूर्वक श्रम करनेकी आवश्यकता होती है। राजा राममोहनराय, स्वामी विवेकानन्द, दयानन्द, महादेव गोविन्द रानडे, गोपाल कृष्ण गोखले आदि अपने जीवन-कालमे उतना ही श्रम करते थे जितना साधारण मजदूर और कमानेवाले लोग करते है। जब तक मनुष्य धैर्य्य-पूर्वक और निरन्तर खूब परिश्रम न करे तब तक वह विज्ञान, राजनीति या साहित्य आदिमे कभी पारंगत नही हो सकता।

महान् पुरुषोमे सबसे बड़ा गुण यही होता है कि वे बड़े ही धीर और परिश्रमी होते हैं। न तो वे कभी अपने कार्य्यसे विमुख होते हैं और न कभी थकते है। वे प्रत्येक क्षणका उचित उपयोग करते हैं। जो मनुष्य धैर्य्य और विचार-पूर्वक प्रत्येक वस्तुका निरीक्षण करता और उसके सम्बन्धकी सब बातोका ज्ञान प्राप्त करता है वह बड़ा भारी आविष्कारक हो जाता है। वह प्रत्येक वस्तुका मूल तत्त्व जान लेता है। प्रत्येक मनुष्यको यथासाध्य ऐसा प्रयत्न करना चाहिए जिसमे वह किसी बातको देखकर उसका मूल तत्त्व जान ले। प्रसिद्ध विद्वान् और तत्त्ववेत्ता न्यूटन कहा करता था कि और लोगोकी अपेक्षा मुझमे यही विशेषता है कि जब तक किसी प्रश्न की पूर्ण-रूपसे मीमांसा नही हो जाती तब तक मैं सदा उसे अपने ध्यान में रखता और उस पर सोचा विचारा करता हूँ।

एक विद्वानका मत है कि हमारा शरीर एक बाग़ है और हमारा इच्छा-बल उसका माली है। यदि हम उसमे बबूल बोएँगे तो कांटे होगे ओर आम बोएँगे तो स्वादिष्ट फल होगे। यदि हम अकर्म्मण्य या सुस्त होगे तो उसकी जमीनको खराब कर देंगे और यदि परिश्रमी होंगे तो उसमें खाद देकर उसे उपजाऊ बना

देंगे। ये सब बातें हमारी इच्छा-शक्ति पर ही निर्भर है। और वास्तवमे इच्छा-शक्ति ऐसी ही चीज है। लेकिन उसके लिये धैर्य्य और साहसकी आवश्यकता है। जिस समय कठिनाइयाँ आ पड़े उस समय दृढ़ता-पूर्वक अपने काममें लगे रहनेकी आवश्यकता होती है जिसे हम अध्यवसाय कहते हैं। कार्य्यकारिणी शक्ति के निरन्तर उपयोग को ही अध्यवसाय कहते है और यदि बराबर अध्यवसाय-पूर्वक परिश्रम किया जाय तो वही आगे चलकर प्रतिभाका रूप धारण कर लेता है। किसी मशीनके पहिएमे जितना ही अधिक बल होगा वह अपने सामनेकी रुकावट को उतनी ही सरलतासे दूर करके बराबर घूमता जायगा। यही सिद्धान्त मनुष्य के लिये भी है। अपने सामनेकी रुकावट दूर करनेमे आपको उतनी ही सफलता होगी जितना आप उसमे बल लगावेगे। यदि किसी दूसरे मनुष्यकी अपेक्षा आपमे बल कम हो तो उसकी पूर्ति आप अधिक समय तक अपने बलका प्रयोग करके कर सकते हैं। जीवनके आरम्भमे न तो मनुष्यको स्वयं ही अपनी प्रतिभाका ज्ञान होता है और न दूसरे लोग ही उससे परिचित होते है। लगातार कई बार प्रयत्न करने पर तब उसे मालूम होता है कि मै उन कामोके योग्य हो गया हूँ जिनमे सफलता प्राप्त करके और लोग धन्य हुए है। जो झरना किसी पहाड़ परसे केवल एक पतली धार के रूपमे निकलता है वह केवल सदा दृढ़ता-पूर्वक आगे बढ़ते रहने के कारण ही पहले नदी और तब आगे चलकर भारी नद ही नही बल्कि अथाह समुद्रका एक अंग बन जाता है।

बहुत से लोग ऐसी कठिनाइयोसे घबरा जाते है जो अनेक अवस्थाओमे वास्तवमे हमे सहायता देनेवाली होती है। वे हमे अनुभव कराती हैं और दृढ़ता-पूर्वक काममे लगे रहनेके लिए

उत्तेजित करती हैं। घटनाओंकी कोई स्वतंत्र सत्ता नहीं होती। उनका परिणाम मनुष्यकी योग्यता और आचार आदि पर निर्भर रहता है। कभी कभी प्रतिभा-शिखर पर पहुँचनेके लिये दरिद्रता ही सीढ़ी बन जाती है। जिसे दुर्बल मनुष्य खाई समझते है बलवानोके लिये वही खजाना हो जाता है। केवल सम्पन्नताके कारण ही बहुतसे लोग विशेष योग्य नहीं हो सकते। तात्पर्य्य यह कि सब कुछ केवल इच्छासे ही हो सकता है। जिस कामके करनेकी इच्छा हो फिर उसके लिये उपायोकी कमी नहीं रह जाती।

जीवनमे कोई मनुष्य सदा एक ही स्थान पर नहीं रह सकता। जो मनुष्य आगे नहीं बढ़ता वह अवश्य पीछे खसकता है। इसलिये उचित यही है कि यदि मार्गमे कठिनाइयाँ हो तो हम उन्हे दूर करके आगे बढ़े। सर फिलिप सिडनीका सिद्धान्त बहुत ही अच्छा था। वे कहा करते थे—"या तो मैं कोई रास्ता निकालूँगा और या कोई रास्ता बना लूँगा।" आराम से "बच्चे" बनते है "मनुष्य" बनानेवाली तो कठिनाई है। बहुतसे सम्पन्न लोग ऐसे है जिनकी सर्वोत्तम शक्तियोंका विकाश केवल कठिनाइयोका सामना करनेके कारण ही हुआ है। आचार-सम्बन्धी दृढ़ताकी सबसे अच्छी परीक्षा तभी होती है जब किसी व्यक्तिकी बाह्य अवस्थामे कोई आकस्मिक परिवर्त्तन होता है और यदि यह परिवर्त्तन हृदयको कुछ दुःख पहुँचानेवाला हो तो उनके कारण होनेवाली परीक्षा और भी अधिक ध्यान देने योग्य और महत्त्वपूर्ण होगी। यदि वह मनुष्य दृढ़ हुआ तो इस परिवर्त्तनके कारण वह अपने बल पर ही खूब काम करके यथेष्ट महत्त्व और प्रसिद्धि प्राप्त कर लेगा।

कष्टकी उपमा एक मजबूत हाथसे चलाये जानेवाले भारी हलसे दी जा सकती है। वह खराब जमीनमे खूब गहरी काट करता है। लेकिन उसकी इस गहरी कटाईसे उसका भीतरी भाग खुल जाता है, जिस पर प्रकृतिके उपजाऊ प्रभाव पड़ते है और जिसके परिणाम-स्वरूप बहुत अच्छी फसल होती है।

भारी विरोध या अड़चन भी आदमीके लिये बड़ी भारी न्यामत है। उससे शक्ति, अध्यवसाय और आचार-बलको उत्तेजना मिलती है। इस प्रकार अड़चने हमारी सहायक होती है। मनुष्य साहसी हो सकता है लेकिन बिना अध्यवसायके साहसका महत्त्व बहुत ही कम होता है। केवल आवेश-युक्त विचारोके उठने और नष्ट हो जानेसे ही मानव-जातिकी उन्नतिमे बहुत कम सहायता मिलती है। चाहे बीचमे बारबार विफल ही क्यो न होना पड़े तो भी बड़े बड़े काम तभी होते है जब मनुष्य उनके लिये निरन्तर परिश्रम करता रहता है। एक वेल्श कहावतका अभिप्राय है कि "विफलताएँ ही सफलताके खम्भे है।" यह तो हुई कामकी बात, अब विश्रामको लीजिए। यह एक कहावतसी बन गई है कि बिना परिश्रमके विश्राम होता ही नही। तो भी बहुत अधिक परिश्रम करने और सदा काममे ही लगे रहनेसे यह भी सम्भव है कि मनुष्य विश्रामका सुख उठानेके योग्य ही न रह जाय। जिस मनुष्यका सारा समय केवल परिश्रम करनेमें ही बीतता है वह अपने प्राकृतिक उच्च गुणो तक नहीं पहुँच सकता, उसके प्राकृतिक सुन्दर गुणोका कभी विकास नही हो सकता। बल्कि कभी कभी तो यह भी देखा जाता है कि बहुत अधिक परिश्रमके कारण लोगोके अनेक सद्भावो और सद्गुणोका नाश भी हो जाता है। कुछ लोग आगे चल कर यथेष्ट विश्राम करनेके विचारसे इतना

अधिक परिश्रम करते है कि कुछ ही समयके उपरान्त उनकी ऐसी अवस्था हो जाती है कि वे काम छोड़ कर आनन्दका अनुभव करनेके योग्य ही नही रह जाते। उनका मन मारा जाता है, विचार-शक्ति शिथिल हो जाती है और वे किसी और मर्जकी दवा नही रह जाते। वे एक दिन भी काम नहीं छोड़ सकते। उन्ह जो फुरसत मिलती है वह उनके लिये किसी कामकी नही रह जाती। उन्हे तुरन्त ही फिर काममे लग जाना पड़ता है—वैताल फिर पेड़ पर जा लटकता है।

बहुत अधिक काम फिर "काम" नही रह जाता, वह "पीसना" हो जाता है और "पिसाई" मे कभी आनन्द नही आ सकता—उलटे आनन्द घट जाता है। काम इसलिये नहीं है कि हम उसके पीछे अपने प्राण दे दे। वह इसलिये है कि ईमानदारीसे हम उसके द्वारा अपना गुजारा करे। क्योंकि केवल आनन्द-मंगल ही तो हमे खानेको देगा नही, पेट पालनेके लिये तो हमे काम ही करना पड़ेगा। धनसे मनुष्यका आचरण बिगड़ जाता और हृदय कठोर हो जाता है। पर इसमे भी सन्देह नहीं कि दरिद्रता मनुष्यके उत्साह और जीवन-शक्तिका नाश कर देती है, उसके मार्गमे अनेक प्रकारकी कठिनाइयाँ उत्पन्न कर देती है और मनुष्यके लिये ईमानदार, धर्मात्मा और प्रतिष्ठित रहना कठिन कर देती है।

इसलिये कभी किसी काममे अति नही करनी चाहिए। मनको परिष्कृत करने, अच्छी अच्छी शक्तियोको बढ़ाने और जीवनका वास्तविक सुख भोगनेके लिये काम बहुत ही उत्तम और आवश्यक है। इसी लिये हम देखते हैं कि इतिहास और विज्ञान आदि बहुत अच्छे अच्छे काम प्रायः रोजगारी या कामकाजी आदमी ही करते हैं। दिन रात व्यापारके कामोंमें लगे रहनेसे मनुष्यके आनन्दका

नाश हो जाता है। लार्ड बेन्थनका मत है कि बुद्धिमान् मनुष्यको अपने मनमें किसी न किसी प्रकारकी कामना रखनी चाहिए। जिस मनुष्यका किसी विशेष पदार्थ पर अनुराग नहीं होता उसे किसी चीज़ या बातमें आनन्द नहीं आता।

प्रत्येक मनुष्यको कई तरहके कामोको छेड़ रखना चाहिए। उनमेंसे एकको तो अपना प्रधान काम बना लेना चाहिए और उसे बराबर करते रहना चाहिए, और शेष फुटकर कामोंको फ़ुरसतके समय करना चाहिए और उन्हे बराबर बदलते रहना चाहिए। विश्राम करनेका वास्तविक उपाय यही है और इसीसे जीवनका सौन्दर्य्य रक्षित रहता है। इस तरह हम सदा प्रसन्न रहेंगे और हमें सदा यही मालूम होगा कि हम विश्राम कर रहे हैं। फ़ुरसतके समय चित्त प्रसन्न करनेके बहुतसे उपाय हैं। हमारे लिये प्रकृति अपने विलक्षण सौन्दर्य्यका अनन्त भण्डार खोल देती है। हम उसकी अनन्त विभिन्नताओंका निरीक्षण कर सकते हैं, उसके काम देख सकते हैं और उसके भेद जान सकते हैं। पशु, वनस्पति, खनिज पदार्थ आदि वैज्ञानिक अन्वेषणके लिये बहुत हैं। पुस्तक-प्रेमियोंके लिये साहित्य भी कुछ कम नहीं है। जातियोंके प्राचीन और अर्वाचीन इतिहास हैं जिनमें स्वयं अपने लाभके लिये तथा जगत्की सभ्यताकी वृद्धिके लिये लोगों पर शासन करने और उन्हे शिक्षा देनेके अच्छे अच्छे प्रकार मिलते हैं। इसके अतिरिक्त अनेक प्रकारके जीवन-चरित्र, काव्य और नाटक आदि हैं जिनसे बहुत अच्छा मनोरञ्जन हो सकता है।

यूरोपके बड़े बड़े विद्वानों, लेखकों और शिल्पियोंमें अनेक ऐसे मिलेंगे जो अपनी फ़ुरसतका समय बिताने और छुट्टी मनानेके लिये तरह तरहके दूसरे काम करते हों। कोई कवि चित्रकारी

करता था और कोई चित्रकार पद्य बनाता था। कोई कसरत करने लग जाता था और कोई शिकार खेलने निकल जाता था। वहीं उन्हे प्रकृति का निरीक्षण करने और विज्ञान-सम्बन्धी बहुतसी बाते जाननेका भी अवसर मिलता था। यदि फुरसत के समय हम ताश या शतरजका ध्यान छोड़ कर शहरके बाहर की किसी पहाड़ी पर चढ़ जायँ अथवा किसी नदीमे नाव खेते हुए दूर तक निकल जायँ तो उससे केवल हमारा मनोविनोद ही नही होगा, बल्कि हमारा स्वास्थ्य भी सुधरेगा और मनके भाव भी शुद्ध और सुन्दर होगे। यदि हम अपने आँगनमे ही कुछ गमले रख कर अथवा कही थोड़ीसी ज़मीन तैयार करके उसमे सुन्दर सुन्दर फूलोके पेड़-पौधे लगावे तो क्या उससे हमारे चित्तको कुछ कम प्रसन्नता होगी? विलायतमे कई ऐसे विद्वान् और लेखक हो गये है जो फुरसतका समय बिताने के लिये भेड़े, बकरियाँ, घोड़े, कुत्ते, सूअर और तरह तरहके दूसरे पशु-पक्षी पालते थे। प्रसिद्ध कवि शेलीको जब और कोई काम नही रहता था तब वह टेम्स नदीमे कागज़की नावे बना बना कर ही छोड़ा करता था। उसको इस प्रकार नावे बना कर बहानेका इतना शौक था कि जब उसे कागज़ नही मिलता था तब वह बैक आफ इङ्गलैण्डके नोटोकी नावे बनाता था। डिकेन्स, सूदे और वर्ड्स्वर्थ गजबके चलनेवाले थे वर्ड्स्वर्थ सदा टहलते समय ही पुस्तके पढ़ता था। यही कारण है कि उसकी कवितासे बहुत अच्छा और बहुत अधिक प्रकृति-प्रेम झलकता है। एक बार एक आदमी वर्ड्स्वर्डके मकान पर गया। और सब कुछ देखकर उसने नौकरसे पुस्तकालय दिखलानेके लिये कहा। नौकरने उसे पुस्तकालयमे ले जाकर कहा—"यही हमारे मालिकका पुस्तकालय है, पर उनका अध्ययन सदा खेतोमे ही

होता है ।" और भी अनेक बड़े बड़े चलनेवाले हो गये हैं जो वहुत ही वृद्धावस्थामे भी नित्य दस दस मील चला करते थे और पैदल वड़ी वड़ी यात्राएँ किया करते थे। उनका स्वास्थ्य सदा बहुत ही अच्छा रहता था। इसी प्रकार कोई जीन-सवारीका शौकीन था और कोई कुश्ती और मुक्केबाजी देखनेका। बेलजियमके प्रधान मन्त्री ग्लैडस्टन जंगलोमे जाकर अपने हाथसे पेड़ काटा करते थे। यहां तक कि एक व्यक्ति अपनी नाक पर मोरका पर खड़ा करने की साधना करता था। जान हण्टर मधु-मक्खियोका निरीक्षण करता था और सर जानलवक चिउँटियो, मधु मक्खियो और वर्रे आदिका। इन दोनोके ही मनोविनोदसे वैज्ञानिक दृष्टिसे अच्छा लाभ हुआ था। हण्टरने मधु-मक्खियोके सम्बन्धमें जिन बातोका पता लगाया था वे आज तक निर्विवाद मानी जाती हैं और सर लवकने जो पुस्तक लिखी है उसे देखकर यह निश्चय नही किया जा सकता कि चिउँटियो और मधु-मक्खियो के धैर्य्य और परिश्रमकी प्रशसा की जाय अथवा उनके निरीक्षकके धैर्य और परिश्रमकी।

वहुतसे लोगोने अपना काम करते हुए तरह तरहकी मशीनो का भी आविष्कार किया है। इन आविष्कर्त्ताओंमे पादरी कार्टराइट वड़े ही विलक्षण थे, जिन्होने एंजिन चलनेवाले करघे और ऊन साफ करने और ईंटे तथा रस्से वनानेकी मशीनोका आविष्कार किया था। खेत बोनेकी मशीनका आविष्कार पादरी बेलने अपने फुरसतके समयमें किया था। इग्लैण्डमे उस समय मजदूर सस्ते थे, इसलिये वहां तो यह मशीन न चली पर अमेरिकामें जहां मजदूर बहुत महँगे थे, इसका खूब प्रचार हुआ। तब एक शताब्दीके उपरान्त इंगलैण्ड और स्काटलैण्डमे भी उसका खूब प्रचार हुआ।

इसी प्रकार कोई ग्रहोंका वेध करके उनके सम्बन्धकी नई नई बातो का पता लगाता था और कोई किसी धातुका आविष्कार करता था। पर इस सम्बन्धमे सबसे मज़ेदार बात डा० एडमकी है। डाक्टर महाशय एडिन्बराके हाईस्कूलके रेक्टर थे और उन्होंने कई अच्छी अच्छी किताबे लिखी थी। जब आपको फ़ुरसत मिलती थी तब आप बूगे नामक अपने एक मित्रकी दूकान पर चले जाया करत थे और वहीं कभी चाकुओ और कैंचियां पर सान देते थे और कभी सानका चक्कर चलाते थे। बूगे भी ग्रीक और लैटिन भाषाका बड़ा भारी पण्डित था, इसलिये एक वार दो अँगरेज भले आदमी जो विश्वविद्यालयमे पढ़ते थे, ग्रीक भाषा का एक वाक्य समझनेके लिये उसके पास आये। वह वाक्य बूगेकी समझमें तो नही आया, पर वह जरा मसखरा था, इस लिये उसने कहा—"यह तो बहुत ही सहज है। हमारा चक्कर चलानेवाला मज़दूर ही तुम्हे यह समझा देगा।" यह कह कर उसने डा० एडमसे कहा—"जरा इधर तो आना।" उनके आने पर उसने वह ग्रीक वाक्य उन्हे दिखलाया और उन विद्यार्थियोको उसका अर्थ समझानेके लिये कहा। एडमने चश्मा लगा कर बहुत ही विद्वत्ता-पूर्वक उस वाक्यका पूरा पूरा अर्थ उन लोगोको समझा दिया और साथ ही अपने बतलाये हुए अर्थके समर्थनमें बड़े बड़े विद्वानोकी सम्मतियां भी बतला दीं। और तब वे फिर सानका चक्कर चलाने चले गये। मज़दूरकी विद्वत्ता देख कर विद्यार्थियोको परम आश्चर्य्य हुआ। उन्होंने कहा कि हमने सुना था कि एडिन्-बराके साधारण व्यापारी भी बड़े विद्वान् होते है, पर इस वाक्यकी अभी जो व्याख्या हमने सुनी है वह हमारी आशासे कहीं अधिक है।

प्राणि-शास्त्र, वनस्पति-शास्त्र और भूगर्भ-शास्त्र आदिका अध्ययन बहुत ही सहजमे हो सकता है और उससे हमारे मनोविनोदके साथ साथ संसारका बहुत कुछ उपकार भी हो सकता है। यदि और कुछ न हो तो कमसे कम हमे बहुत-सी उपयोगी बाते तो अवश्य मालूम हो जायँगी और कभी न कभी वे हमारे काम भी आवेगी। जिन लोगोको इस बातकी चिन्ता रहती है कि हम अपना समय किस प्रकार बितावे उनसे बढ़ कर मूर्ख और अभागा संसारमे कोई नही है। एक महात्माका वचन है—"कसी बड़े साम्राज्यके प्रधान मन्त्रीको भी उतना सार्व-जनिक काम नही हो सकता जितना एक बुद्धिमान् मनुष्यको अपना निजका काम हो सकता है। यदि मन्त्रीको अकेले रहनेकी कम फुरसत मिलती हो तो बुद्धिमान्को लोगोका साथ करनेके लिये कम फुरसत होती है। मन्त्रीको तो केवल अपनी जातिके ही थोड़े बहुत काम करने पड़ते है पर बुद्धिमान्को परमेश्वर और प्रकृतिके समस्त कार्य्योंका विचार करना पड़ता है।"

एक और महात्माका उपदेश है—" ज्ञानार्जन और आशा, सुशीलता, धैर्य्य और सन्तोष आदि गुणोके विकाशके लिये परि-श्रम और प्रयत्नकी आवश्यकता होती है। × × × × × परिश्रमसे पहले मनुष्यकी आत्मा उदार और उन्नत होती है। परिश्रमी मनुष्य तुच्छ और छोटी बातोसे कभी सन्तुष्ट नही होता, बल्कि वह श्रेष्ठ पदार्थोंकी आकांक्षा करता है और उन्हे प्राप्त करने-के लिये वीरता और साहस-पूर्वक अपनी निजकी शक्तियोसे कठिनाइयो और अड़चनोको दूर करता हुआ निरन्तर प्रयत्न करता रहता है। × × × × × श्रेष्ठ मनुष्य कभी मक्खीकी तरह दूसरोका इकट्ठा किया हुआ शहद खाना पसन्द न करेगा

और न गीदड़ोकी तरह दूसरोके किये हुए शिकार पर हाथ साफ करनेकी नीयत रखेगा, वह अपने निर्वाहके लिये स्वयं ही किसी न किसी प्रकारका प्रयत्न करेगा। परिश्रम हमारे समस्त आनन्दोमे अपूर्व माधुर्य्य उत्पन्न कर देता है, क्योकि जब तक मनुष्य अपने कर्त्तव्योका पूर्ण-रूपसे पालन नही कर लेता तब तक वह किसी प्रकारका आनन्द अनुभव नही कर सकता। पर जब वह अपने सब काम कर लेता है तब अच्छी तरह आराम कर सकता और सुख उठा सकता है। तब उसे भोजनमे भी स्वाद मिलता है, सैर सपाटे आदिमे भी आनन्द मिलता है और खूब अच्छी तरह नींद भी आती है।"

परिश्रममे सबसे बड़ा गुण तो यह है कि वह मनुष्यको सदा बुराइयोसे दूर रखता है। जो मनुष्य सदा काममे खूब लगा रहता हो उसे बुराइयोकी ओर प्रवृत्त होनेका अवसर ही न मिलेगा। सुस्ती और अकर्म्मण्यतासे बढ़ कर और कोई दुर्गुण नही है। निकम्मा आदमी समाजका बोझ होता है। वह संसारके सब पदार्थोंका नाश करता है और उत्पन्न कुछ भी नहीं करता, वह समाजका भूषण तो कभी हो ही नही सकता, हाँ कलंक अवश्य होता है। यही सुस्ती और अकर्म्मण्यता बड़े बड़े महल गिरा देती है। निर्दोषता और सद्गुणोका सबसे अच्छा रक्षक परिश्रम ही है। वह दोषो और अपराधोको सदा दूर रखता है, हृदय-मन्दिरकी रक्षा करता है और दुष्कर्म्ममे प्रवृत्त होनेका अवसर ही नही देता।

यदि हम धनवान् हो तो केवल अपने ही परिवारके लोगोके लिये नही बल्कि औरोके लाभके लिये भी अपने धनका प्रबन्ध करनेके लिये हमे परिश्रम करनेकी आवश्यकता होगी। यदि

हम प्रतिष्ठित हों तो अपनी प्रतिष्ठा बनाये रखने और दूसरोंके सामने उत्तम आदर्श उपस्थित करनेके लिये भी हमे परिश्रम करना पड़ेगा। परम कुलीन मनुष्य भी परिश्रम करने से नहीं बच सकता। यदि वह यह समझता हो कि हमारा काम निकम्मे रहनेसे भी चल सकता है तो उसे अवश्य परम दुःखी भी होना पड़ेगा। क्योंकि यदि वह किसी कामका न होगा और परमेश्वर तथा संसारकी कोई सेवा न करेगा तो उसे प्रसन्नता प्राप्त करनेका भी कोई अधिकार न होगा। साधारण आदमीका ज्ञान आदि भी कम होगा और कर्त्तव्य भी थोड़ा होगा। पर भले आदमीका ज्ञान भी बहुत अधिक होगा और कर्त्तव्य भी अनेक होंगे। भले आदमीके हृदयमें उत्साह और बल होगा, उसकी विद्या और बुद्धि औरोंसे बढ़ी-चढ़ी होगी, उसका कुल श्रेष्ठ होगा, उसके संगी-साथी अच्छे अच्छे लोग होंगे, उसके पास धन, बल और अधिकार होगा, समाजमे उसका अच्छा आदर होगा, उसे यथेष्ट समय और अवकाश होगा और वह सब प्रकारसे ऐसी स्थितिमे होगा जिसमें उसके द्वारा ससारका बहुत कुछ कल्याण हो सके। और वास्तवमें वही आदमी भला आदमी कहला सकता है जो सार्वजनिक कल्याणके लिये पूर्ण परिश्रम करता है और मित्रोंके उपकारके लिये आनन्द-पूर्वक कष्ट सहता है। भले आदमीका काम इतना मोटा तो नही होता, पर वह कष्ट-साध्य अवश्य होता है। केवल शारीरिक श्रम ही कठिन नहीं होता, हल, फावड़ा और हथौड़ा चलानेके अतिरिक्त और भी अनेक परिश्रम-साध्य काम होते हैं। सभी कामोंमे पसीना नहीं बहता, दिमाग़से भी विना पसीना बहाये अच्छे अच्छे काम हो सकते हैं। लोगोंको उपदेश, उत्साह या सांत्वना देनेमे जीभ भी

बहुत कुछ परिश्रम कर सकती है । सत्कार्य और परोपकारका ही काम आदमीके लिये बहुत है। और यही सब काम ऐसे हैं जिनमे भले आदमियोको परिश्रम करनेकी आवश्यकता होती है।

छोटी जातिके लोग तरह तरहकी कई बातोसे किसीको भला आदमी समझते है। किसी दीन-दुखिया बुढ़ियाको यदि कोई रुपया आठ आना दे दे तो वह उसीको बहुत भला आदमी समझती है और यदि कोई इक्केवाला किसीसे दूना किराया जट ले तो वह उसीको भला आदमी समझता है। मध्यम वर्गके लोग भी प्राय. किसीकी भलमंसीका अनुमान उसकी उस आर्थिक उदारतासे ही करते है जो बहुतसी दशाओमें आवारेपनकी उदारतासे कम नहीं होती। थैकरेका मत है कि जो आदमी ईमानदार, नेक, उदार, वीर और बुद्धिमान् हो और अपने इन सब गुणोका उत्तम रीतिसे उपयोग करे वही भला आदमी है। एक और महात्माके अनुसार सच्चे वीर और सज्जन मनुष्यमें धर्म्म-भाव, उदारता, न्याय-परायणता, समझदारी, दूरदर्शिता, सुशीलता, दृढ़ता, सच्चाई, स्वतंत्रता, कर्म्मण्यता, आशा और वीरता ये बारह गुण होते है। इसमे इतना और बढ़ाया जा सकता है कि उसमे सहिष्णुता तथा दूसरोके विचारो और सम्मतियोका आदर करनेका भाव भी होना चाहिए।

असली भला आदमी किसी विशिष्ट वर्ग या जातिमे ही नहीं होता। एक दरिद्र कृषक भी भला आदमी हो सकता है और कोई बहुत बड़ा अमीर भी। हर एक आदमी भला आदमी और सज्जन हो सकता है। टूटी-फूटी झोपड़ीमें रहनेवाले एक दरिद्र किसानमें भी आपको भलमनसी मिल सकती है। भलमनसी केवल बड़े आदमियोके ही पल्ले नहीं पड़ी है। छोटेसे छोटा आदमी भी बात-

चीत और विचारोकी दृष्टिसे भला आदमी हो सकता है। वह ईमानदार, सच्चा, साहसी और आत्मावलम्बी हो सकता है। किसी नीचाशय धनवान्‌की अपेक्षा एक उच्चाशय निर्धन कही अच्छा होता है। नीचाशय धनवान्‌के पास सब कुछ होते हुए भी कुछ नही होता और उच्चाशय निर्धनके पास कुछ भी न होते हुए सब कुछ होता है।

सदाचारके चित्र मे सद्‌व्यवहार मानो अन्तिम पालिश है। एमर्सनका कथन है—"सौन्दर्य्यसे सद्‌व्यवहार कही बढ़ कर है। वह चित्रो और मूर्तियोसे कहीं अधिक आनन्ददायक होता है। उच्च कलाओमे वह सर्व-श्रेष्ठ है।" डा० जान्सन ने कहा है-"सदा नम्र सद्‌व्यवहार करो, उसका अभाव किसी न किसीको अवश्य खटकता है।" स्वर्गीय महात्मा महादेव गोविन्द रानडेका व्यवहार सदा सबके साथ सद् और नम्रतापूर्ण होता था। एक दिन आप हाईकोर्टसे पैदल घर जा रहे थे। रास्तेमे एक बुढ़ियाने आपसे कहा-"जरा मेरा बोझ उठा कर मेरे सिर पर रखा दो।" आपने तुरन्त उसका बोझ उठा कर उसके सिर पर रख दिया। एक बार रास्तेमे एक आदमीके धक्केसे रानडे महाशयकी पगड़ी कीचड़मे गिर गई। उसने बहुत क्षमा प्रार्थना की, पर आपने उत्तर दिया कि इसमे तुम्हारा कोई दोष नही है, यह तो अचानक एक घटना हो गई है। अमेरिकन सयुक्त राज्योके राष्ट्रपति मि० किन्सी सदा सबके साथ यहाँ तक कि हब्शियोके साथ भी, सद्‌व्यवहार करते थे। एक बार आप आमनिबस (किराये पर चलनेवाली एक प्रकारकी बहुत बड़ी गाड़ी) मे सवार होकर कहीं जा रहे थे। रास्तेमे एक हब्शी स्त्री भी उसी गाड़ी पर सवार हुई। पर भीड़ बहुत थी, इसलिये उस स्त्री को कही बैठनेका स्थान नही मिला।

राष्ट्रपति क्निसीने तुरन्त उठ कर अपने स्थान पर उस स्त्रीको बैठा दिया और आप बराबर खड़े रहे। इस प्रकार मानो आपने असद्व्यवहार करनेवाले गाड़ीमे बैठे हुए और लोगोकी बिना कुछ कहे सुने यथेष्ट भर्त्सना की।

हमारी प्रकृतिके खुरदुरे किनारो पर सद्व्यवहार एक प्रकार की गोठका काम देता है और उनके द्वारा दूसरोको कष्ट नही पहुँचने देता। वह बड़ा ही भला आदमी था जिसने कहा था कि किसीको गाली देना और खोटा सिक्का देना दोनो बराबर है। जब तक मनुष्यका व्यवहार नम्र और सुजनता पूर्ण न हो तब तक, चाहे वह कितने ही उच्च और प्रतिष्ठित कुलका क्यो न हो, वह कभी भला आदमी नही कहा जा सकता। उच्च कुलमे उत्पन्न मनुष्य भी नीच डरपोक और अकर्म्मण्य हो सकता है। इसमे सन्देह नही कि किसी मनुष्यको अपने उच्च कुल और श्रेष्ठ पूर्वजोके उत्तम और महत्त्व-पूर्ण कार्य्योंका स्मरण करके स्वयं भी श्रेष्ठ कार्य्य करनेके लिए उत्तेजना मिल सकती है, पर कभी कभी उच्च कुलके लोगोके आचरण भी बड़े ही नीच होते है। श्रेष्ठ कार्यों से मनुष्य अपने उच्च कुलका भूषण होता है और निकृष्ट कार्य्योंसे कलंक।

श्रेष्ठ मनुष्य सदा श्रेष्ठ कुलमे ही उत्पन्न नही होते। बहुतसे महान् पुरुष कनिष्ट वर्गमे ही उत्पन्न हुए हैं। प्लेटो किसी उच्च वंश का नही था, पर दर्शनने उसे उच्च बना दिया। वाल्मीकिजी चाण्डाल थे, पर अपने सत्कार्योंसे ऋषि बन गये। कृष्णके जन्मके समय उनके पिता वसुदेव बहुत ही साधारण स्थितिके मनुष्य थे और अपनी स्त्री सहित अपने साले कंसके यहाँ कैद थे। कालिदास चरवाहे थे, कबीरदास जुलाहे थे और नामदेव दरजी थे। चाणक्य, चैतन्य, सूरदास, तुलसीदास, नरहरि, बीरबल

और टोडरमलने बड़े ही दरिद्र कुलमें जन्म लिया था। शिवाजी, नेपोलियन और माधवराव सिन्धिया आरम्भमें साधारण सैनिक ही थे। शेक्सपियरका बाप ऊन बेचता था और कारलाइलका बाप राजगीर था। आधुनिक महापुरुषोंमें से जस्टिस रानडे, बहेरामजी मलाबारी, सेठ जावजी दादाजी चौधरी, दादा भाई नौरोजी, बदरुद्दीन तैय्यबजी, काशिनाथ त्र्यबक तैलग आदिका जन्म बहुत ही साधारण स्थितिके माता-पिताके यहाँ हुआ था। तथापि इन लोगोंने अपने परिश्रम और सदाचार आदिके कारण इतना यश प्राप्त किया था जितना किसी अच्छे राजा महाराजाको भी नसीब नहीं हो सकता।

नम्र और सुशील मनुष्य सदा प्रसन्न रहेगा। प्रसन्नतासे मनुष्यकी जितनी शोभा बढ़ती है उतनी हीरों और मोतियोंके जड़ाऊ गहनोंसे भी नही बढ़ सकती। प्रसन्नतामे कुछ खर्च नही होता तो भी वह अमूल्य है। वह मानव-प्रकृतिका सर्वोत्तम अंश ढूँढ़ती है। वह लोगोंके दोष और त्रुटियाँ नही देखती, बल्कि स्वभावत' अच्छी अच्छी बातोका ध्यान रखती है। उसके द्वारा मधुर बचनो और दया-पूर्ण विचारोंका प्रसार होता है, जिससे समाजमे आनन्दकी वृद्धि होती है। प्रसन्नता मनका सौन्दर्य्य है और शारीरिक सौन्दर्य्यकी तरह उसके सामने प्राय' और सब बातें दब जाती हैं।

कहा है—"जिसका हृदय प्रसन्न रहता है उसका मुख भी प्रसन्नतापूर्ण दिखाई देता है।" यह भी कहा है—"प्रसन्न हृदय औषधिके समान उपकार करता है।" बिना आनन्दके मानव-जीवनका काम ही नहीं चल सकता। बहुतसी दशाओंमें आनन्द से ही सफलताकी प्राप्ति होती है। बड़े बड़े कामोंमें जो कठिनाइयाँ

होती हैं उनका सामना करनेके लिए मनमे एक ऐसे गुणकी आवश्यकता होती है जिससे वह विचलित या निरुत्साह न हो जाय। आनन्द-वृत्तिसे मनमे यह गुण आ जाता है। शान्त आत्मा, शुद्ध हृदय और उत्तम स्वभावका आनन्द एक प्रधान लक्षण है। वह मनुष्यकी उदारता, गुण-ग्राहकता और निरभिमानताका भी परिचायक है। बड़े बड़े कार्य्योंसे भी उतना कल्याण नही होता जितना प्रसन्नता-पूर्वक कही हुई छोटी छोटी बातोसे होता है। भारी प्रपातकी अपेक्षा छोटेसे झरनेका बहाव अधिक उपयोगी होता है। झरनेके धीरे धीरे बहनेमें अपूर्व सौन्दर्य्य होता है, पर प्रपातके कारण सदा बिनाश ही होता है। यही दशा हमारे जीवन की दैनिक बातोंका है।

संसारकी सारी समस्याओंकी मीमांसा सहानुभूतिसे ही होती है–बिना उसके कोई बात समझमें ही नही आती। बिना सहानुभूतिके मनुष्य सहनशील नही हो सकता। प्रत्येक मनुष्यकी आन्तरिक योग्यता उतनी ही होती है जितना उसमें सहानुभूतिका बल होता है। जिस मनुष्यमें सहानुभूतिकी कमी हो वह कभी पूर्ण सदाचारी नहीं हो सकता। बहुतसे लोग दिन रात अपने ही आनन्द-मंगल और अपनी ही चिन्तामें लगे रहते है और कभी इस बातका ध्यान नहीं करते कि कौन व्यक्ति उनकी दया या सहायता का पात्र है। सहानुभूतिके अभावके कारण ही संसारमे बहुतसे स्वार्थान्ध मनुष्य दिखलाई देते हैं। "मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे" और "प्रेम एव परो धर्म्मः" आदि वाक्योंमें ऐसे सिद्धान्त भरे हुए हैं जिनके अनुसार कार्य्य करनेसे यह संसार ही स्वर्ग बन सकता है।

हर एक भले आदमीका आचरण नीति और धर्मके तत्त्वोंके अनुकूल और बहुत ही उच्च श्रेणीका होगा। वह कभी ऐसा ऋण

नहीं लेगा जिसका चुकाना उसकी सामर्थ्यसे बाहर हो। जो मनुष्य उसकी अपेक्षा निर्धन होकर भी शान शौकतसे रहनेके लिये औरोंसे ऋण लेगा, उसकी वह निन्दा करेगा। जो केवल लोगोंको दिखलानेके लिये खूब बढ़िया कपड़े पहने और खूब खर्च करे वह कभी भला आदमी नहीं कहा जा सकता, वह भले आदमीका केवल स्वांग है। और लोग भी कभी ऐसे आदमियोंको भला आदमी नहीं समझते और उनकी असलियत तुरन्त ताड़ जाते हैं। पर एक भला आदमी दूसरे भले आदमीको तुरन्त ही पहचान लेता है। वे स्वभावत एक दूसरेकी ओर आकर्षित होते हैं और उसके गुणोंका आदर तथा प्रशंसा करते हैं। भले आदमी और भले आदमीके स्वांगमे यह अन्तर है कि भला आदमी तो अपने कुत्ते पर भी दया करेगा, पर स्वांग अपनी स्त्री पर भी दया नहीं करेगा। भला आदमी उदार-हृदय होगा। सम्भव है कि धन-दानके सम्बन्धमे वह उदार न हो; क्योंकि जो दान पात्रापात्रका विचार किये बिना ही दिया जाता है वह प्राय. बहुत हानिकारक होता है। पर इसमे सन्देह नहीं कि उसके विचार अवश्य उदार होंगे और वह प्राय. पात्रो पर ही दया दिखलावेगा।

प्रत्येक मनुष्यका सच्चा महत्त्व इसी बातमे है कि उसे अपने जीवनके सच्चे उद्देश्यका पूरा पूरा ज्ञान हो। जिस मनुष्यको पूर्ण आत्म-ज्ञान होगा अथवा जो अपने विवेककी आज्ञाका पालन करेगा वह अपना उद्देश्य और कर्त्तव्य भी जान सकेगा। अनुभव हमे बतलाता है कि हम स्वयं जो कुछ बनना चाहते हैं वही बन जाते हैं। प्रत्येक मनुष्य अपना महत्त्व या मूल्य स्वयं ही निश्चित करता है; क्योंकि हम अपनी इच्छाके अनुसार ही महान् या नीच होते हैं। यदि हम ईमानदार, सच्चे और दयालु होना चाहते हैं तो

धीरे धीरे हम वैसे ही हो जाते है। आरम्भमे इस प्रयत्नमे हमे जो कठिनाइयाँ होती है वे आगे चल कर धीरे धीरे कम होती हैं। हमारी कर्म्मण्यता, सुजनता और उदारता आदि धीरे धीरे व्यवहारमे आनेके कारण बढ़ती जाती है। पहले जिस बातके लिये हमे प्रयत्न करना पढ़ता था वही अब हमारे लिये सहज और स्वाभाविक हो जाती है। और इस प्रकार मनुष्य अपने आपको उदार, न्याय परायण, परदुःख-कातर, नम्र, सहनशील और सज्जन बना लेता है।

सच्चे भले आदमीकी पहचान यह है कि उसे अपनी प्रतिष्ठाका ध्यान होगा और उसमे सहानुभूति, सुजनता, सहनशीलता और उदारता होगी। केवल संसारको दिखलानेके लिये ही नही बल्कि सब दशाओंमे वह सदा सच बोलेगा और उचित कार्य्य करेगा। इसीलिये वह कभी किसी ऐसे कामके लिये वचन नही देगा जो उससे न हो सकता हो। जो भला आदमी होगा वह झूठी बातोसे अपने आपको कभी न गिरावेगा, बल्कि यदि सत्य बोलनेके कारण उसे कोई विपत्ति भी सहनी पड़ेगी तो उसे वह प्रसन्नतासे सह लेगा।

वास्तविक भला आदमी कभी अपने बलका अनुचित प्रयोग न करेगा और कभी अपने अधीनो पर अत्याचार न करेगा। मनुष्य अपने बराबरवालोके साथ, अपनी स्त्री अपने बच्चो और अपने नौकरोके साथ, अफसर अपने अधीनस्थ कर्म्मचारिय के साथ, शिक्षक अपने शिष्योके साथ, मालिक अपने नौकरोके साथ और अमीर आदमी गरीबोके साथ व्यवहार करनेमे यदि अपनी शक्तिका अनुचित प्रयोग न करे तो समझना चाहिए कि वह सचमुच भला आदमी है। ऐसा आदमी सदा अपने आपको वशमे

रखेगा। बिना अपने आप पर विजय प्राप्त किये मनुष्य भला आदमी हो ही नही सकता। इसके लिये स्वार्थ-सम्बन्धी कामनाओको दबाने, और निकृष्ट श्रेणीकी इच्छाओको रोकनेकी आवश्यकता होती है। इसी लिये भले आदमीके गुणोमे सयम भी सम्मिलित है। सयमसे मनुष्यका मस्तिष्क स्वच्छ रहता है, आचरण शुद्ध रहते है और शरीर नीरोग रहता है। सम्पन्न मनुष्यके लिये परम आवश्यक गुण सयम है और दरिद्रके लिये धर्म्म, सन्तोप या सहनशीलता।

जो मनुष्य धीर और सहनशील हो, जो दूसरोका आदर करे, जो दीन-दुखियोके प्रति सहानुभूति दिखलावे और जो लोगोके साथ वैसा ही व्यवहार करे जैसा वह स्वयं अपने साथ कराना चाहता है, वही सच्चा भला आदमो है। सदा दूसरोका आदर करो, उनके साथ प्रेमपूर्ण व्यवहार और मधुर बाते करो। एक महात्माका कथन है—“सुजनता ईश्वरीय गुण है। ईश्वर अपनी महान् सुजनताके कारण ही भले और बुरे सबको प्रकाश और वर्षासे लाभ पहुँचाता है।” भला आदमी सदा न्याय-परायण और दृढ़ होता है। जो काम जिस प्रकार करने योग्य होता है, उसे वह उसी प्रकार करता है। वह क्षमा भी करता है और ताड़न भी, पर वह कभी किसी अनुचित कृत्यका बदला नही लेता। वह इस विषयमे महात्मा सुकरातका अनुकरण करता है। इस महात्मासे एक वार एक आदमीने कहा—“यदि मै तुमसे बदला न ले सकूँ तो मै मरजाऊँ।” इस पर उस महात्माने उत्तर दिया—“यदि मै तुम्हे अपना मित्र न बना सकूँ तो मै मर जाऊँ।”

भला आदमी कभी भयभीत नही होता। वह भारीसे भारी-जोखिम सहकर भी साहस-पूर्वक अपने पड़ोसी या साथीकी सहा

यता करता है। वीरोका अभी अन्त नहीं हुआ है। अभी बहुतसे ऐसे लोग हैं जो डूबते हुए पुरुषा या स्त्रियाको बचानेके लिए अपने प्राणों तककी परवा न करेंगे अथवा जो असहायोको बचाने के लिये जलती हुई आगमे कूद पड़ेगे। आजकलके समाजके इतिहासमे इस प्रकारके अनेक उदाहरण मिलेंगे। रोगियों और दीन दुखियोकी सहायता और सेवाके लिये सेवाश्रम, अनाथालय और चिकित्सालय आदि खुलवानेवाले अब भी बहुतसे लोग है। युद्ध तथा शान्तिकालमे दूसरोकी सहायताके लिये अपने प्राण तक दे देनेवाले अब भी बहुतसे लोग है। पहली फ्रेंच राज्यक्रान्तिके समय मारशल डी माडशीने बहुतसे पादरियो आदिकी रक्षा की थी। इस अपराधमे जब उसे फांसी दी जाने लगी तब भीड़मेसे किसी ने कहा—"साहस करो। माडशी! साहस करो!" इस पर उसने घूम कर कहा—"साठ वर्षकी अवस्थामे मै अपने राजाके लिए किलेकी टूटी हुई दीवार पर चढ़ गया था, आज चौरासी वर्षकी अवस्थामे ईश्वरके वास्ते टिकठी पर चढ़नेके लिए मुझमे साहस का अभाव न होगा।"

छोटी छोटी बातोमे साहस बड़ा ही उपयोगी होता है। हर एक आदमी बहादुर नहीं हो सकता, पर वह "आदमी" अवश्य हो सकता है। साहससे ही मनुष्य जीवनकी कठिनाइयोका सामना कर सकता और उन पर विजय पा सकता है। साहस हमे अच्छे कामोमे लगे रहने और बुरे कामोसे बचनेके योग्य बनाता है। वह हमे अपना ऋण चुकाने और दूसरोके भरोसे पर न रहनेके योग्य बनाताहै। वह हमे स्वतंत्रता-पूर्वक बोलने तथा ऐसे अवसर पर चुपरहनेके योग्य बनाता है जब कि हमारे बोलनेसे औरोकी क्षति होतीहो। वह हमसे अपनी अज्ञानता और भूलें स्वीकार कराता है।

वह हमारे दोष निकालता और यथासाध्य हमारा आचरण सुधारता है। आरम्भमे चाहे ये सब काम कठिन जान पड़ते हों, पर तो भी नैतिक साहससे ये काम हो अवश्य जाते है। गुलामीके लिये केवल कायर मनुष्यका ही जीवन है। साहसी मनुष्य कुछ सीखनेके लिये जीता और जीवन निर्वाह करना सीखता है। जब वह उचित और श्रेष्ठ कार्य करता है तब लोगोमे उसका आदर होता है। और यदि लोग उसका आदर न भी करे तब भी उसे उसकी चिन्ता नही होती। क्योंकि जब मनुष्य सच्चे हृदयसे अपने कर्त्तव्योका पालन करता है तव वह कभी लोगोकी निन्दा या स्तुतिकी परवा नहीं करता।

स्त्रीको पुरुषकी अर्द्धांगिनी कहते है। प्रत्येक सत्पुरुषके घरमे वह जीवनका परम आनन्द है। स्त्रियां बहुधा प्रसन्न-चित्त, कोमल स्वभाव की और उदार होती है। अँगरेजीमे स्त्रीके लिये "लेडी" शब्द का व्यवहार होता है, जिसके मूल ऍग्लो-सैक्सन शब्दका शब्दार्थ "अन्नपूर्णा" होता है। हमारे यहां भी स्त्रियो को घरकी "लक्ष्मी" और "अन्नपूर्णा" कहते है। गृहस्थीका सारा सुख और सारा सुप्रबन्ध स्त्रिया पर ही निर्भर करता है। उनमें एक प्रेम-भाव ऐसा प्रबल होता है जिसकी सहायतासे सदा सब कठिनाइयों पर विजय प्राप्त हो सकती है। गाथेका कथन है—"परिश्रमसे जो काम सारी उमरमे भी कठिनतासे हो सकता है वह प्रेमके द्वारा एक क्षणमे हो जाता है।" सन्त अॅगरीका बचन है—"प्रेम स्वयं ही ज्ञान है, समस्त ज्ञानोकी उसीसे उत्पत्ति होती है।" हृदयमे प्रेमसेही सुजनताकी उत्पत्ति होती है और तव वह सुजनता हमारे बाहरी व्यवहारोमे दिखाई देती है।

स्त्रियोका सौन्दर्य बहुत ही कम आकर्षक होता है। उनकी

कोमलता, सत्यता, निष्ठा, व्यवहारकी सात्विकता, दूसरोका आ-
दर, उत्तरदायित्वका ज्ञान और अच्छी आदते ही सबसे अधिक
आकर्षक होती है। प्रत्येक स्त्रीमे आकृतिका सौन्दर्य न तो आव-
श्यक होता है और न स्थायी। समय पाकर वह सौन्दर्य नष्ट हो
जाता है। लेकिन प्रेम और कोमलता आदि स्थायी है और उन्ही
से गृहस्थी तथा समाजका बन्धन शिथिल नही होने पाता। स्त्रियो
का कर्त्तव्य पुरुषोके कर्त्तव्यसे भी भारी होता है। पुरुषोको तो
केवल धन कमाना पड़ता है, पर स्त्रियोको गृहस्थीका बाकी सारा
प्रबन्ध करना पड़ता है। पिताकी अपेक्षा माताके कर्त्तव्य अधिक
होते है, क्योकि बालकोके चरित्र आदिका गठन उन्ही पर अव-
लम्बित होता है। धन्य है वह पुरुष जिसके घरमे ऐसी सुयोग्य
लक्ष्मी हो और धन्य है वे बालक जो ऐसी सुयोग्य माताके गर्भ
से उत्पन्न हो।

यद्यपि आचरणकी शुद्धता स्त्री और पुरुष दोनोके लिये
समान रूपसे परम आवश्यक है तथापि सृष्टिकी आदिसे लेकर
अब तक अपने आचरणको स्त्रियोने जितना अधिक शुद्ध रखा है,
उतना, दुःख है कि पुरुषोने नही रखा। स्त्रियोमे एक दूसरी विशे-
षता यह है कि उन्हे सदा घरमे ही रहना पड़ता है और सांसा-
रिक झझटोसे उनका कोई सम्बन्ध नही होता। और थके-मॉदे,
दुखी तथा चिन्तित पुरुष शान्ति, सुख तथा सान्त्वना पानेके लिये
उनके पास जाते है। समाजकी उन्नति और अवनति भी स्त्रियो
पर ही निर्भर है। बालकोका सुधार जितने सहजमे स्त्रियॉ कर
सकती है उतने सहजमे पुरुष कदापि नहीं कर सकते, और उन्ही
बालको पर समाजकी उन्नति और अवनति निर्भर करती है।

दूसरा प्रकरण।

बड़े आदमी बड़े कर्म्मण्य होते हैं।

वर्त्तमान सभ्यता बहुतसे अंशोमे प्राचीनकालके परिश्रम का ही फल है। नीति, ज्ञान, कला और विज्ञानकी सभी बड़ी बड़ी बातोकी पूर्ति हमारे पूर्वज काम करनेवालोने ही की है। प्राचीनकालके लोगोने जो कुछ भण्डार संग्रह कर रखा है, प्रत्येक पीढी उसमे कुछ न कुछ वृद्धि करती है, और इस प्रकार ज्ञान और विज्ञानका भण्डार आगेकी पीढ़ीको मिलता है। परिश्रम करनेवालोमे सबसे ऊंचा स्थान मानसिक परिश्रम करनेवालो अथवा मस्तिष्कसे काम करनेवालोका है। वे ही लोग समाजके धनी और महाजन है। समाजका काम धन और कुलीनतासे नही चलता, बल्कि मस्तिष्क और कार्यसे चलता है। सदासे समाजमे कार्य्यकारिणी शक्तिका ही सबसे अधिक आदर होता है। बड़े बड़े काम करनेवालोको चाहे कितने ही कष्ट और अपवाद क्यो न सहने पड़े हो, पर तो भी अब तक उनकी आत्माएँ हम पर शासन करती है। दर्शनमें, कपिल, गौतम और कणाद अभी तक जीवित है। कवितामे वाल्मीकि, व्यास और कालिदास अभी तक अमर हैं। पर उनके समयके राजाओ और महाराजाओका कोई नाम भी नही जानता।

प्राचीन कालके महापुरुषोंने बहुत ही परिश्रम-पूर्वक हमारे लिये ज्ञान आदिका बहुत बड़ा भण्डार तैयार किया है। बहुतसे लोगोंमे तो कार्य्य करने की प्रवृत्ति किसी दैवी शक्तिके समान प्रबल थी। उनकी समझमे कार्य्य-क्षेत्र इतना विस्तृत और जीवन इतना संकुचित था कि वे एक क्षणको भी व्यर्थ नही जाने देते थे। यदि उनके अस्तित्वके लिये नही तो कमसे कम उनके प्रसन्न रहनेके लिये कार्य्य अवश्य आवश्यक था। काम उनके रोएँ रोएँमे पैवस्त हो गया था। जस्टिस रानडे कभी अपना एक क्षण भी व्यर्थ नही जाने देते थे। वे सदा कुछ न कुछ अध्ययन किया करते थे और किसी न किसी विषयका मनन किया करते थे। यहाँ तक कि अस्वस्थताकी दशा मे भी वे कभी काम नही छोड़ते थे। मृत्युसे केवल दो दिन पहले तक रुग्णावस्थामे जब घरके लोगोने देखा कि आप सदा कुछ न कुछ परिश्रम किया करते है तक डाक्टरने आपको काम बन्द कर देनेकी सम्मति दी। उस समय आपका महाबलेश्वर जानेका विचार था। जब लोगोंने आपकी अधिक पढ़ाईके कारण चिन्ता प्रकट की थी तब आपने कहा था—"जिस पढ़नेमे मन लगता है, समाधान होता है और छोटी मोटी वेदनाएँ भूल जाती है, उसे छोड़नेसे क्या विश्रांति मिलेगी? बिना कोई काम किये यदि निरर्थक जीवन बितानेका समय आ जाय तो तत्काल ही अन्त हो जाना उससे कही अच्छा है।" जिस दिन रातको आपकी मृत्यु हुई थी उस दिन आपका शरीर कुछ स्वस्थ जान पडता था। दिन भरका नियमित कार्य्य करके सन्ध्या-समय आप गाड़ी पर हवा खाने गये थे। सन्ध्याको लौटने पर आपको मालूम हुआ कि दुर्भिक्ष-कमीशनके मेम्बर जयपुरके दीवान रायबहादुर कान्तिचन्द्र

मुकुर्जीका कमीशनके नागपुर पहुँचने पर अचानक देहान्त हो गया। उस समय आपने कहा था—"काम करते हुए मरना भी कैसा आनन्ददायक है।"

यद्यपि महान् पुरुष सदा घोर परिश्रम ही करते रहते हैं और कभी कोई क्षण व्यर्थ नही जाने देते तो भी अपने कामसे उनका कभी सन्तोष नही होता। वे जो कुछ करते हैं उसे वे बहुत ही साधारण और तुच्छ समझते हैं और उसके सम्बन्धमे उनके हृदयमे बहुत ही उच्च आदर्श अथवा आकांक्षा होती है। सच्चा प्रतिभाशाली मनुष्य अपने कार्य्यसे कभी सन्तुष्ट नही होता। अपने विचारोंको पूर्ण रूपसे कार्य्यमे परिणत करनेमे वह अपने आपको असमर्थ पाता है। एक बार एक मूर्त्तिकारने एक मूर्त्ति बनाई थी। उसे देख कर एक राह-चलतेने उसकी बहुत प्रशंसा की। इस पर उस मूर्त्तिकारने कहा—"अगर कही तुम वह मूर्त्ति देख पाते जो (अपने मस्तक पर उँगली रख कर) यहाँ है तब तुम समझते कि मूर्त्ति कैसी होती है।" अर्थात् वह मूर्त्तिकार वास्तवमे जैसी मूर्त्ति बनाना चाहता था उसके मुकाबलेमे उसकी बनाई हुई मूर्त्ति कुछ भी नही थी। यद्यदि प्रसिद्ध कवि वरजिल को अपना "एनडे" नामक काव्य तैयार करनेमे ग्यारह वर्ष लग गये थे तथापि उसकी समाप्ति पर वह उससे इतना असन्तुष्ट था कि वह उसे जला देना चाहता था। प्रसिद्ध लेखक वालटेयरनें कहा था कि मेरा एक भी ग्रन्थ मेरी रुचि और इच्छाके अनुकूल नही हुआ।

ग्रन्थकारोके सम्बन्धमे तो एक प्रसिद्ध ग्रन्थकारने यहाँ तक कहा है कि यदि केवल ऐसे ही ग्रन्थ प्रकाशित किये जायँ जिनसे उनके लेखक पूर्णरूपसे सन्तुष्ट हो तो बहुत अधिक ग्रन्थ अप्रका-

शित ही रह जायँ। बात यह है कि मनमें जो उच्च कोटिके और आदर्श विचार उत्पन्न होते है बहुधा वे लिखनेमे छूट जाते हैं। कलमकी अपेक्षा मन कही अधिक दौड़ता है और प्रायः बहुत दूर की बाते सोचा करता है। जब तक कलमसे उन विचारोंको लिखना आरम्भ किया जाय तब तक उनका सौन्दर्य्य पहुँचके बाहर हो जाता है। यदि वे विचार किसी प्रकार लिखे भी जा सके तो भी उनका बहुत कुछ सौन्दर्य्य लिखनेमे ही नष्ट हो जाता है। इसमे सन्देह नहीं कि यह बात बहुतसे अंशोमे सभी बड़े बड़े कला-कुशलोके सम्बन्धमे ठीक घटती है कि विचार सदा शब्दोसे बहुत बड़े होते है और कृति चाहे कितनी ही सुन्दर क्यो न हो पर तोभी प्रतिभा सदा उससे बढ़ कर ही होती है। और इसीलिये बहुतसे लेखकोंको अपने लेखो आदिमे अनेक बार बहुत कुछ परिवर्त्तन करना पड़ता है।

बहुतसे बड़े बड़े काम करनेवाले ऐसे भी हो गये है जिन्होने अपना पुराना पेशा छोड़ कर अपनी रुचिके अनुकूल कोई नया काम आरम्भ किया हो और उसमे अच्छी सफलता प्राप्त की हो। माता-पिता अपने बालककी रुचिका विना ध्यान किये ही उसे काममे लगा देते है और जब वह सयाना होता है तब उस कामसे असन्तुष्ट होकर उसे छोड़ देता और अपने मनके मुताबिक किसी नये काममे लग जाता है। यहां असन्तोष उसका सहायक होता है। इस असन्तोषके सम्बन्धमे एक कहानी है। एक बार एक राजाके घर एक लड़का हुआ। उसे उपहार देनेके लिये बारह परियां बारह तरहके गुण लेकर आई। किसीने उसे बुद्धि दी, किसीने बल और किसीने रूप दिया। बारहवी परीके पास असन्तोष था, इसलिये राजाने उसका उपहार नही लिया। बड़े होने

पर बालकमे और सब गुण तो थे, पर असन्तोष नहीं था। वह अपनी वर्त्तमान अवस्थामे ही सदा सन्तुष्ट रहता था, इसलिये कोई बड़ा काम न कर सका और उसका सारा जीवन यो ही बीत गया। तब कहीं जाकर राजाको असन्तोषका महत्त्व मालूम हुआ।

पाश्चात्य देशोमें ऐसे बहुतसे लोग हो गये हैं जिन्होने बहुत दिनो तक एक काम करके कोई सफलता नहीं प्राप्त की और तब दूसरे काममे लग कर अच्छा यश और नाम कमाया। पर उनमे से अधिकांश लोग ऐसे ही है जो और और कामोको छोड़ कर कला, साहित्य या विज्ञानके क्षेत्रमें आये। और इसमे दूसरी विलक्षणता यह है कि उनमे अधिक सफलता ऐसे ही लोगोको हुई जो पहले सेना-विभागमे रह चुके थे। सैनिक बहुधा धीर, वीर और साहसी होते है और इसीलिए वे साहित्य या विज्ञान आदि के कार्य्योंमे पड़नेवाली कठिनाइयोको सहजमे ही पार कर लेते है और निरन्तर परिश्रम करते रहते है।

विज्ञान या साहित्य-सम्बन्धी कार्य्य करनेवाल लोग बहुधा अपने आपको भूल जाते हैं। उन्हे केवल अपने अन्वेषण और मननमें ही सबसे अधिक आनन्द मिलता है। ऐसे लोगोको कठिनाइयां भी बहुत सहनी पड़ती हैं और निरन्तर बहुत अधिक परिश्रम भी करना पड़ता है। पाश्चात्य देशोंमे अनेक ऐसे कवि और लेखक आदि हो गये हैं, जो केवल कुछ ही घण्टे विश्राम करते थे और महीनों तक अपनी कोठड़ीमें बन्द रह कर ही लगातार काम किया करते थे। हंगरीका पेटर नामक गणितज्ञ गरमीके दिनोंमें केवल चार घण्टे सोता था। दूसरी बात यह है कि ऐसे लोग अपने लाभ, मान या किसी और प्रकारके स्वार्थके लिये कभी कोई काम नहीं करते, उनका मुख्य उद्देश्य केवल विद्या और कला

आदिकी उन्नति करना ही होता है। प्रसिद्ध लेखक स्पिनोजाका एक ग्रन्थ, राजा चौदहवॉ लूई अपने आपको समर्पित कराना चाहता था और उसके बदलेमे वह उसे पेन्शन देना चाहता था। पर स्पिनोजाने पेन्शन लेनेसे इन्कार कर दिया और वह ग्रन्थ उसे नहीं अर्पित किया।

ज्योतिषियोको अपने काममे कितना परिश्रम करना पड़ता है, इसका अनुमान विचारवान् पाठक स्वय ही कर सकते हैं। ग्रहोके सम्बन्धकी बातोका पता लगानेके लिये रातरात भर आकाशकी ओर ताकते हुए ही उन्हे अपना जीवन बिता देना पड़ता है। भास्कराचार्य्य और वराहमिहिर आदिको ज्योतिष-सम्बन्धी अपने सिद्धान्त स्थिर करनेमे जो कठिनाइयॉ हुई होगी, उनका अनुमान सहजमे नहीं हो सकता। ब्रेहे नामक ज्योतिषी अपनी वेधशालासे इक्कीस बरसोमे शायद ही कभी बाहर निकला हो। गेलीलियोकी सारी उमर आकाश ताकते ही बीती थी। फ्लेमस्टीड नामक एक गरीब पादरीने बीमार रह कर और दूसरे बहुतसे काम करके भी तिहत्तर वर्षकी अवस्था तक निरन्तर परिश्रम करके आकाशीय स्थिर तारोके सम्बन्धमे भ्रम-पूर्ण सिद्धान्तोंकी त्रुटियॉ दूर की थी। युरोपके सर्व-श्रेष्ठ ज्योतिषी ब्रेडलेने बहत्तर वर्षकी अवस्था तक निरन्तर तारो आदिका वेध किया था। प्रसिद्ध ज्योतिषी विलियम हरशलेने चौरासी वर्षकी अवस्था तक और उसकी बहिनने अट्ठानवे वर्षकी अवस्था तक ग्रहोका वेध किया था। इन सब उदाहरणोसे ज्योतिषियोके परिश्रमका तो पता लगता ही है; साथ ही और दो बातोंका भी पता लगता है। एक तो यह कि लोगोका यह विश्वास भ्रम-पूर्ण है कि ग्रहोका वेध करनेसे ऑखें कमजोर हो जाती हैं और

दूसरी बात यह सिद्ध होती है कि ज्योतिषियोकी आयु प्राय अधिक होती है।

अलेकजेण्डर वान हम्बल्ट भी बड़ा परिश्रमी हो गया है। उसने अनेक प्रकारके और बहुत अधिक काम किये हैं। दिन भर तो वह अपने और और कामोमे लगा रहता था और रातको विज्ञान सम्बन्धी विषयोका अध्ययन तथा मनन करता था। अपनी मृत्युसे तीस वर्ष पहलेसे वह नित्य प्रातःकाल चार बजे उठा करता था और रातके आठ बजे तक बराबर काम करता था। उसका यह क्रम नब्बे वर्षकी अवस्था तक रहा। उसे बहुत अधिक विषयोका बहुत अच्छा ज्ञान था। प्रत्येक बुद्धिमानके लिये उसने तीन बातोकी आवश्यकता बतलाई है। एक तो चित्तकी शान्तिकी, दूसरे किसी प्रकारके वैज्ञानिक श्रमके अनुराग की और तीसरे उस आनन्दको शुद्ध अनुभव-शक्तिकी—जो प्रकृति सदा प्रदान करनेके लिये तैयार रहती है। उसने युवावस्थामे ही भिन्न भिन्न वैज्ञानिक विषयो पर अनेक अच्छे लेख लिखे थे। एक ग्रन्थ वनस्पतियोके सम्बन्धमें, एक शरीर-शास्त्र पर और एक भूगर्भकी गैसोके सम्बन्धमे लिखा था, उसे खनिज शास्त्रका भी पहलेसे ही बहुत अच्छा ज्ञान था। बोनप्लेण्डके साथ वह दक्षिण अमेरिका गया और वहाँ पाँच वर्ष तक उन दोनोने ऐसे ऐसे प्रदेशोमे भ्रमण किये, जहाँ तब तक वैज्ञानिक निरीक्षणके लिये कभी कोई युरोपियन गया ही न था। वहाँ से लौट कर बारह वर्ष तक वह पेरिसमे रहा और वहाँ उसने उन विषयो पर कई अच्छे अच्छे और बहुत बड़े ग्रन्थ लिखे, जिनका ज्ञान उसने दक्षिण अमेरिकामे प्राप्त किया था। इसके उपरान्त उसने युरोपके अन्यान्य देशोमे भ्रमण किया और वहाँ अपने अनेक ग्रन्थ प्रकाशित कराये।

उसका बड़ा भाई विलियम वान हम्बल्ट उससे भी बढ़ कर परि-श्रमी और विद्वान् था। चालीस वर्ष तक वह युरोपका सबसे बड़ा दार्शनिक अ.र भाषाशास्त्र-वेत्ता माना जाता था। वह कहा करता था—

"मनुष्यके लिये काम उतना ही आवश्यक है, जितना खाना और सोना। जो लोग कुछ भी काम नही करते, वे भी यही सम-झते हैं कि हम कुछ न कुछ कर रहे है। संसारमे एक भी आदमी ऐसा नहीं है, जा अपने आपको निकम्मा समझता हो।" वास्तवमें यह बात बहुत ही ठीक है। कोई अपनी जीविकाके लिये, कोई आनन्दके लिये, कोई धनके लिये, कोई प्रसिद्धिके लिये, और कोई केवल इसलिये कि वह बिना काम किये रह ही नहीं सकता, सदा कुछ न कुछ काम करता रहता है। मनुष्यके अस्ति-त्वके लिये काम बहुत ही आवश्यक है।

जान डाल्टनने अनेक वैज्ञानिक आविष्कार किये थे। इसके लिये जब उसे एक अवसर पर बधाई दी जाने लगी, तब उसने कहा कि "इस समय मेरी तरह और जो लोग काम कर रहे हैं, उन्हे देखते हुए मैं अपने सम्बन्धमे केवल इतना ही कहना चाहता हूँ कि औरोकी अपेक्षा मुझे इसी लिये अधिक सफलता हुई है कि मैं निरन्तर परिश्रम करता रहा हूँ। मुझमे औरोकी अपेक्षा विशेष प्रतिभा नही है। मेरी समझमे परिश्रम और अध्यवसायसे ही मनुष्य दूसरोसे आगे निकल जाता है।" वास्तवमे वह स्वयं बड़ा ही परिश्रमी था। इकहत्तर वर्षकी अवस्थामे लकवेकी बीमारीसे कुछ ही अच्छे होने पर वह फिर अपने काममे लग गया था और यही काममे लगा रहना ही उसकी सारी सफलताका मूल है। अधिकांश महान् पुरुषोने अपनी

प्रतिभाके बलसे नहीं, बल्कि दृढ़ निश्चय और अनन्त कार्य्य-कारिणी शक्तिके कारण ही महत्ता प्राप्त की है।

सुप्रसिद्ध महात्मा कार्टिन लूथरमें काम करनेकी बहुत अधिक शक्ति थी। वह भाषाशास्त्र-वेत्ता, तार्किक, उपदेशक और राज-नीतिज्ञ था। युरोपमे उसके जीवन-कालमे कोई ऐसा बड़ा काम नहीं हुआ, जिसका बहुत बड़ा अंश उसके द्वारा न हुआ हो। युवावस्थामे ही उसने इतने अधिक ग्रन्थ और लेख आदि लिखे थे, जितने अ.र लोगोने सारे जीवनमे भी न लिखे होगे। तीन वर्ष मे उसके चार-सौ छियालीस ग्रन्थ प्रकाशित हुए थे। उसका पहला प्रकाशित ग्रन्थ "दृढ़ निश्चय" पर था। संगीत पर उसका नया अनुराग था और वह कहा करता था कि इसकी सहायतासे मनुष्य बहुतसे दोषोसे बचा रहता है। खाली तो वह कभी रह ही नही सकता था। आधुनिक जर्म्मनीकी बहुत कुछ उन्नति और अभ्युदय उसीके परिश्रमका फल है।

काल्विन भी दिन रात परिश्रम किया करता था। उसने एक बार अपने एक मित्रको लिखा था—"मेरी किताबका प्रारम्भिक अंश लेनेके लिये एक आदमी खड़ा था, इसलिये मुझे करीब बीस पेज दोहराने थे। इसके अतिरिक्त मुझे व्याख्यान देना था, उप-देश देना था, चार पत्र लिखने थे और दस बारह प्राथियोको व्यवस्था देनी थी।" वह क्षणभर भी खाली नही रहता था। वह इतना अधिक परिश्रम करता था कि उसका दिमाग खराब हो गया था, तो भी वह बड़े ही संयमसे रहता था, इसलिये वह पचपन वर्ष तक जीता रहा। अपनी अन्तिम बीमारीके समय जब कि वह कठिनतासे सांस ले सकता था, उसने लैटिनसे फ्रेंचमे एक ग्रन्थका अनुवाद किया था, एक अनुवाद दोहराया था और

एक ग्रन्थकी टीका लिखी थी। उसके मित्र उसे अधिक परिश्रम करनेसे रोकते थे, पर वह सदा यही उत्तर दिया करता था कि मैंने अभी किया ही क्या है ? ईश्वरने मुझे जिस कामके लिये बनाया है, मुझे वह काम करने दो।

प्रसिद्ध विद्वान् जान नाक्सने भी बड़ी बड़ी कठिनाइयाँ सह कर बहुत कुछ काम किया था। पादरी और शासक उसे सदा तंग करते रहते थे, और उनके डरसे वह इधर उधर भागता फिरता था। पर तो भी कभी उसने अपना काम नही छोड़ा। गुलाम बन कर उसे दो वर्ष-तक एक फ्रान्सीसी नाव पर मल्लाही करनी पड़ी थीं और बराबर कोड़े खाने पड़े थे। यद्यपि उस समय उसका स्वास्थ्य बहुत ही बिगड़ गया था, तो भी दासत्वसे मुक्त होते ही वह फिर अपने मानसिक परिश्रममे लग गया। वह लोगोमें जागृति उत्पन्न करनेके लिये चारो ओर घूमने लगा। यद्यपि सरकारने उसे बागी ठहराया था, पर तो भी लोग उसका आदर और साथ ही रक्षण करते थे। अपने परिश्रम, अध्यवसाय, योग्यता और साहस आदिके कारण वह सदा उत्तमता-पूर्वक अपने कर्त्तव्योका पालन करता रहा। पादरियोके निन्दनीय कृत्योका विरोध उसने कभी नही छोड़ा। उसके मरने पर लार्ड मार्टनने कहा था—"यह कभी किसी आदमीसे डरना जानता ही न था।"

ईसाई धर्म्मके वेस्लियन मेथोडिस्ट सम्प्रदायका संस्थापक जान वेस्ली भो बड़ा ही परिश्रमी था। पचास वर्ष तक वह नित्य चार बजे सबेरे उठता था और पाँच ही बजे, जहाँ उसे कोई आदमी दिखाई पड़ता, वही वह उपदेश आरम्भ कर देता था। उपदेश और धर्म्म-प्रचार आदि के लिये उसे प्रतिवर्ष चार पाँच हजार मीलोका भ्रमण करना पड़ता था।

इसी बीचमे वह बहुत कुछ लिखता पढ़ता भी था और अपनी किताबे भी छपवाता और बेचता था। पुस्तकोंकी अपेक्षा कार्य्यको वह बहुत अच्छा समझता था। एक बार उसने अपने एक शिष्यसे कहा था—"किताबोके फेरमे ही न रह जाना, छटाँक भर प्रेम, सेर भर ज्ञानसे कहीं अच्छा होता है।" अपने जीवनमे ही उसने अपने सम्प्रदायकी बहुत कुछ उन्नति करली थी। वह इतना परिश्रमी था कि छियासी वर्षकी अवस्थामे भी वह दिन में दो दो और तीन तीन बार नित्य उपदेश दिया करता था। वह बड़ा ही संयमी था और कभी किसी प्रकारका नशा नही करता था। मानसिक श्रम करनेवालेके लिये इस गुणकी बहुत बड़ी आवश्यकता होती है कि इच्छा होते ही उसे तुरन्त नीद आजाय। वेस्लीमे यह गुण था। वह कभी किसी रातको न जागता था। अमेरिकाके सुप्रसिद्ध आविष्कारक एडिसनमे भी यह गुण है कि वे जब चाहते है, तब सो जाते है। यदि कभी कही उन्हे पन्द्रह मिनटका भी समय मिलता है, तो वे तुरत सो जाते हैं।

यह तो हुई उच्च विषयोके ग्रन्थोकी बात। अब ग्रन्थोके मान की बात लीजिए। रिचर्ड बैक्सटरने और और काम करनेके अतिरिक्त भिन्न भिन्न विषयो पर एक-सौ पैंतालीस ग्रन्थ लिखे थे। प्राइन नामक एक ग्रन्थकारके सम्बन्धमे कहा जाता है कि उसने अपने जीवनमे औसत आठ-सौ चौपेजी पेज लिखे और छपवाये थे। पर ऐसे लेखकोके लिखे हुए अधिकांश ग्रन्थ अब नहीं मिलते, उस समय भी उनका आदर बहुत ही कम होता था। डा० कैम्बेलने भी बहुतसे ग्रन्थ लिखे थे। एक बार एक आदमीने उनसे उनके लिखे हुए समस्त ग्रन्थ माँगे। दूसरे ही दिन उसके घर गाड़ी भर किताबे पहुँची और उनके दामका बिल सिर्फ सत्तर पाउण्ड

का था। पादरी स्निडबर्ग कहा करते थे कि "मैंने जो कुछ लिखा है, वह दस छकड़ो पर भी कठिनतासे लादा जा सकता है।" हॅन्स सेश नामक जर्मन मोची गजबका लिक्खाड़ था। बहुतसे जूते बनानेके सिवा उसने अपने जीवनमे प्राय. दो-सौ नाटक और प्रहसन तथा प्रायः सात-सौ किस्से लिखे थे। मोसर नामक एक दूसरे जर्मन लेखकने चार-सौ अस्सी ग्रन्थ लिखे थे। क्रूंज नामक एक और जर्मनने अकेले एक विश्वकोश तैयार किया था; जो बहत्तर चौपेजी जिल्दोमे समाप्त हुआ था। भारतवर्षमे भी अनेक बड़े बड़े लेखक हो गये हैं। बाल्मीकि और व्यासको जाने दीजिए, चन्दवरदायी और सूरदासने भी कुछ कम नही लिखा है। देवके लिखे हुए लगभग डेढ़-सौ ग्रन्थ हैं, जो अभी तक अप्रकाशित पड़े है। आधुनिक गद्य लेखकोमे स्वर्गीय पं० बालकृष्ण भट्ट, स्वर्गीय भारतेन्दु बा० हरिश्चन्द्र और पं० भीमसेन शर्म्मा भी उल्लेखनीय है। भट्टजीके हिन्दीप्रदीपकी फाइलोका बड़ा भारी ढेर लग जाता है, जिनमेंके अधिकांश लेख स्वयं भट्टजीके लिखे हुए ही है। भारतेन्दुजीके ग्रन्थोकी संख्या लगभग डेढ़-सौकी है। पं० भीमसेनका आर्य्यसमाजी और सनातनधर्म्मी साहित्य मिल कर भी कुछ कम नही होता। उर्दूके लेखकोमे पं० रत्ननाथ सरशार और कवि दागने बहुत अधिक लिखा है। फारसी भाषामे फिरदोसीका शाहनामा बहुत बड़ा ग्रन्थ है और उसका सबसे बड़ा गुण यह है कि शुद्ध फारसीके अतिरिक्त अरबीका एक भी शब्द उसमे नही आने पाया है। बंगलामे रवीन्द्र बाबूके लिखे हुए ग्रन्थोका मूल्य सत्तर रुपये है। बंकिम बाबूने भी बहुत अधिक ग्रन्थ लिखे है। गुजराती भाषामे नारायण हेमचन्द्रने प्रायः साढ़े तीन-सौ ग्रन्थ लिखे है। मराठीमे

श्रीयुत हरिनारायण आपटेके लिखे हुए ग्रन्थोकी सख्या भी बहुत अधिक है।

गिबनको अपने "रोमन साम्राज्यका उत्थान और पतन" नामक ग्रन्थके लिखनेमे पन्द्रह वर्ष लगे थे। कविराजा मुरारिदान को "जसवन्त जसोभूषण" लिखनेमे भी पन्द्रह ही वर्ष लगे थे। सर-जान सिक्लेयर भी बहुत भारी लेखक थे। इक्यासी वर्षकी अवस्था तक वे बराबर काम करते रहे। अपने जीवनमें उन्होने अट्ठारह खण्डोमे दस बहुत बड़े बड़े ग्रन्थ लिखे थे और एक-सौ साठ खण्डोमे दूसरे चार बहुत बड़े ग्रन्थ अपने रक्षणमे छपवाये थे और भिन्न भिन्न विषयो पर तीन-सौ सड़सठ छोटी मोटी पुस्तके लिखी थी। इन सबसे बढ़ कर लिट्रे नामक एक फ्रान्सीसी लेखक था। उसने बासठ वर्षकी अवस्थामे भाषाका एक कोश बनाना आरम्भ किया था। वह शब्द-कोश क्या था, मानो प्रत्येक शब्दका पूरा पूरा इतिहास था। व्युत्पत्ति, उच्चारण आदि सब कुछ उसमे दिया हुआ था और अच्छे अच्छे लेखकोके भिन्न भिन्न प्रकारके प्रयोगोके उदाहरण भी उसमे दिये गये थे। बासठ वर्षकी अवस्थामे कोशका कार्य्य प्रारम्भ करके चौदह वर्षमे उसने तीन तीन हजार पेजके चार खण्ड तैयार किये थे। इतने थोड़े समयमे इतना काम कदाचित् ही किसी अकले आदमीने किया हो। उसे और और काम भी रहते थे, इसलिए कोशका काम वह तीसरे पहर तीन बजेसे छ. बजे तक और फिर भोजनके उपरान्त सन्ध्या सात बजे से रात तीन बजे तक किया करता था। उसके सोनेका समय तीन बजेसे आठ बजे तक था।

सूदे भी सदा लिखता पढ़ता ही रहता था। उसके मनमे अनेक उत्तमोत्तम विचार उठते थे; पर अपने जीवनमे वह उनकी

पूर्त्ति न कर सका तो भी उसने प्राय. सौ ग्रन्थ और एक-सौ तीस अच्छे लेख लिखे थे। शिलरने अपने जीवनके अन्तिम पन्द्रह वर्षोमे ही अपने सर्वोत्तम ग्रन्थ लिखे थे। इन पन्द्रह वर्षोंमे एक दिन भी ऐसा नही बीता था, जिसमे उसे एक न एक शारीरिक कष्ट न हुआ हो।

बहुतसे लोग केवल स्वार्थके लिये ही मानसिक परिश्रम करते है। वे ज्ञान-विज्ञान आदिमे कोई वृद्धि नही करते; केवल अपना चित्त प्रसन्न करते है। मेजो फैएटीने संसारकी वहुतसी भाषाएँ सीखी थीं, पर कभी एक अक्षर भी न लिखा। मेगलिया वेशी भी सचमुच पुस्तकोका कीड़ा ही था। वह फ्लोरेन्ससे केवल दो ही वार बाहर गया था। अपना बाकी सारा समय उसने अपने घर पर पुस्तकालयमे ही बिताया। वही वह खाता था, वही सोता था और वही रहता था। उसने पढ़ा तो बहुत अधिक, पर उसकी पढ़ाईसे किसीको कोई लाभ नही हुआ। कलकत्तेके हरिनाथ दे भी ऐसे ही पाठकोमेसे थे। वे प्रायः दो दरजन भाषाओंके एम० ए० हुए, पर उनकी पढाईका परिणाम कुछ भी न हुआ।

इसके विरुद्ध स्पेनके कैलडरन और लोप डी वेगा, लिखनेमे सहस्रबाहु थे। कैलडरनने प्रायः चार-सौ और डी वेगाने दो हजार से अधिक नाटक आदि लिखे थे। डी वेगा उतने ही सहजमे लिखता था, जितने सहजमे बड़े बड़े बातूनी बाते करते है। लिखनेके लिये उसे कभी कुछ पढ़ना या देखना नही पड़ता था। उससे बिना कुछ लिखे रहा ही न जाता था। कोई ऐसा सप्ताह या महीना नही बीतता था, जिसमे उसका कोई नाटक या प्रहसन आदि न तैयार होता हो। अपने एक अन्तिम ग्रन्थमे उसने लिखा है कि मेरे प्राय. सौ नाटक तो ऐसे हैं

जो केवल एक ही एक दिनमे लिखे गये है। पाचास वर्ष तक वह बराबर लिखता रहा था। दो करोड़से अधिक पद्योंकी उसने रचना की थी और इक्कीस चौपेजी जिल्दोंमें उसकी फुटकर रचनाएँ इससे भिन्न है।

अँगरेजीके आधुनिक लेखकोंमे यदि कोई डी वेगाकी बराबरी-का है, तो वह सर वाल्टर स्काट है। वह प्रतिवर्ष अपने वेवरली उपन्यासोंकी बीस जिल्दे तैयार किया करता था। स्काट जब बहुत बीमार हो गया था, तब उसने दो लेखकोंको बोल कर ग्रन्थ लिखाने के लिये अपने पास रखा था। जितनी जल्दी जल्दो वह रचना करता था, उतनी जल्दी लिखा नहीं जा सकता था। वह बिस्तर पर पड़ा पड़ा कराहता था और बराबर उपन्यास लिखाता जाता था। The Bride of Lammermobre (लैमर मूर की दुलहिन) नामक उपन्यासका अधिकांश इसी प्रकार लिखा गया था। पर इस सम्बन्धमे सबसे विलक्षण बात यह है कि नीरोग होने पर जब वह उपन्यास तैयार होकर स्काटको देखनेके लिये मिला, तब उसमेंकी एक भी घटना या संवादकी उसे स्मृति नहीं थी—उसमेंका सब कुछ उसे बिलकुल नया ही जान पड़ता था। यद्यपि उसके कथानककी भावना उसके हृदय मे बाल्यावस्थासे ही थी, तो भी वह सारा ग्रन्थ उसने मानो निद्रित दशामें लिखाया था। उन दिनो वह शारीरिक वेदना कम करनेके लिये अफीम अवश्य ही बहुत अधिक खाया करता था।

जब उसका ऋण बहुत बढ़ गया था, तब उसने उसे चुकानेके लिये नेपोलियनकी जीवनी लिखी थी। वह समय उसके लिये बड़े ही कष्ट, चिन्ता और दुर्दशाका था। उसके नौ खण्ड प्रायः एक वर्षमें लिखे गये थे। बीच बीचमें जब जीवनी लिखनेसे उसका

जी ऊब जाता था, तब वह एक उपन्यास भी लिखा करता था। उसने चौहत्तर खण्डोमें उपन्यास, इक्कीस खण्डोमे काव्य, तीस खण्डोमें इतिहास और जीवन-चरित्र तथा मासिक पत्रोके लिये बहुतसे लेख लिखे थे। इनमेसे एक-सौ चार खण्ड सन् १८१५ और १८३१ के मध्यमे लिखे गये थे। सोचकर लिखना तो दूर रहा, उन्हें इतने थोड़े समयमें खाली लिखना या नकल करना भी सहज काम नही था। साथ ही ध्यानमे रखने योग्य एक बात यह भी है कि वह केवल लेखक ही नहीं था; बल्कि अपनी काउन्टी का शेरिफ था, सेशन अदालतका क्लार्क था, एक प्रेस और ग्रन्थ-प्रकाशक कार्य्यालयका हिस्सेदार था और सारे संसारके लोगो से उससे पत्र-व्यवहार होता था। वह बड़ा ही वीर, परिश्रमी और सज्जन था।

बहुत अधिक लिखना किसी कामका नही होता। थोड़ा, पर अच्छा लिखा हुआ ही अधिक उपयोगी होता है और इसीलिये अच्छी लिखाईमे समय भी बहुत अधिक लगता है। बटलरने अपना Analcgy नामक छोटा पर उपयोगी ग्रन्थ बीस वर्षोंमे लिखा था। एक एक शब्द और एक एक वाक्यको उसने बीसियो बार दोहराया था, इसलिये उसमे एक शब्द भी ऐसा नही आया जो अनावश्यक हो और जिसका उचितसे कुछ भी अधिक अर्थ निकलता हो। उसमे खूब ही गठे हुए विचार भरे है। मांटेस्क्ने एक किताब पचीस वर्षोंमे लिखी थी, पर आप उसे पढ़ना चाहे तो उसमे एक एक घण्टा भी न लगेगा। हरवेने रक्त-सचालन पर छब्बीस वर्षोंमे एक पुस्तक लिखी थी। लोकमान्य तिलकको गीता-रहस्य लिखनेसे पहले उसके लिये प्राय. तीस वर्षों तक परिश्रम करना पड़ा था। अरिओस्टोने दस वर्षोंमे एक किताब लिखी थी,

जिसके पहले संस्करणकी केवल सौ प्रतियाँ छपी थी और जो एक पुस्तक-विक्रेताके हाथ रुपये रुपये बेची गई थी।

जिस प्रकार डी वेगा और स्काट लिखते और फेंकते चले जाते थे, उसी प्रकार वरजिल, पेट्रार्क, टस्सो, पैस्कल और बफन आदि अनेक ऐसे लेखक और कवि भी हो गये हैं, जो अपनी रचनाओंको सदा दोहराते और तेहराते ही रहते थे और कभी उन्हे उनसे सन्तोष नही होता था। पुस्तकोंका अधिक समय तक आदर और प्रचार केवल उनमे एकत्र किये हुए विचारोंके कारण ही होता है। केवल लेखन-शैलीके कारण ही बहुत दिनों तक कभी कोई पुस्तक नही ठहर सकती। इसी लिये शैली पर अधिक ध्यान देनेवाले लेखकोंकी रचनाओंका स्वयं उन्हीके समयमे विशेष आदर नही हुआ, पर जिन लोगोंने केवल विचारो और भावो पर ध्यान रखा, उनकी पुस्तकोंका आदर बहुत दिनो तक होता रहा है।

साथ ही यह बात भी है कि जिस प्रकार जल्दी-जल्दी और सहज मे लिखे हुए ग्रन्थ निरुपयोगी प्रमाणित होते और शीघ्र नष्ट होजाते है, उसी प्रकार वे ग्रन्थ भी निरुपयोगी ही प्रमाणित होते और शीघ्र नष्ट हो जाते है जो बहुत ही मगज-पच्ची करके लिखे जाते है। डी वेगाके दो हजार नाटकोमेसे आज कल केवल, दो ही तीन नाटक खेले जाते है और पॉच, सात या दस पढ़े जाते है। वही दशा इटालियन कवि लियोनियाके काव्योकी भी है, जो एक एक पदको दस दस बार बनाया करता था। पीरो मफेई कभी एक दिनमे पन्द्रह लाइनसे अधिक नहीं लिखता था और क्लाॅड वॉगलसको एक ग्रन्थके अनुवादमे तीस वर्ष लग गये थे। राजर्सने एक काव्य चौदह वर्षमे लिखा था। पर आज उनके ग्रन्थोंको कौन पूछता है? होरेश एक टॉगसे खडे खड़े दो-सौ पद्य बनाया

करता था। पर आज उन पद्योका कोई नाम भी नही जानता। नेपालकी तराईमे एक कवि थे, जो दिन भरमे चार पाँच-सौ श्लोक बना जाते थे, पर उन श्लोकोमे तत्त्व कुछ भी नहीं होता था।

जिन लेखकोमे कुछ लोकोत्तर शक्ति होती है, वे साधारण लेखकोकी अपेक्षा निस्सन्देह अधिक फुरतीसे लिखते है। जिन रच-नाओसे प्रतिभाका पता लगता हो, वे बहुधा जल्दीकी ही होती है। ऐसी रचनाओमे शैलीका सौन्दर्य भी विशेष नही होता क्योकि जब तक लेखक या कवि शैली सुधारने बैठेगा, तब तक विचार स.रभ नष्ट हो जायगा। पर तो भी प्रतिभाशाली लेखको और गद्यको केवल पद्यमे ढालनेवालोमे बड़ा अन्तर होता है। पद्यमे बकते हुए चले जाना और बात है और कविता करना और बात है। जिस मनुष्यमे प्रतिभा होगी, उसके मनमे अच्छे अच्छे विचार बराबर उठते रहगे और यदि उसी समय वह उन विचारोको लिख न ले, ता फिर वे सदाके लिये नष्ट हो जायँगे। गाथंके मनमे जब कभी कोई अच्छा विचार उठता था, तब वह तुरत उसे कागज पर लिख लेता था। एक दिन वह एक बहुत बड़े बादशाहसे बाते कर रहा था। इतनेमे उसके मनमे एक विचार उठा। वह तुरत बादशाहके सामनेसे उठ गया और एक अलग कमरेमे जाकर उस विचारको लिख कर लौट आया। प्रसिद्ध कवि पोपके मनमे जब कभी रातको सोते सोते कोई विचार उठता, तब वह तुरत उठ कर बत्ती जलाता और उसे लिख लेता था।

इरास्मसने एक काव्य केवल सात दिनोमे लिखा था। पर अपने सारे जीवनमे उसने जो कुछ पढ़ा या सीखा था, उस सबका निचोड़ उसमे आ गया था। कारलाइलने कहा है—"बहुत दिन तक परिश्रम पूर्वक विचारसंग्रह करके और तब थोड़ेसे समयमे

उन्हे लिख डालना ही उचित मार्ग है। जब भट्टी बहुत देर तक तप चुकती है, तब एक दमसे शुद्ध सोना निकल पड़ता है।" चैपमैनने यद्यपि पन्द्रह सप्ताहोमे होमरके बारह ग्रन्थोका अनुवाद कर डाला था, पर वह अनुवाद अच्छा नही हुआ। निश्चिन्त होकर और कुछ धैर्य्य-पूर्वक जो रचना की जाती है, उसीमें विशेष सौन्दर्य्य आता है। बहुत शीघ्रता करनेसे तो वह सौन्दर्य्य नष्ट ही हो जाता है। सूरदास वृन्दावनके एक मन्दिरमे रहते थे और वही वे नित्य दस-बीस नये भजन बनाकर ठाकुरजीके सामने गाया करते थे। यही कारण है कि उनके पद सभी अवसरो और सभी उत्सघो पर गानेके योग्य तथा सभी घटनाओ और लीलाओके सम्बन्धके है। यद्यपि सूरदासके पदोंमें भावोके लालित्यकी कमी नही है, तथापि अनेक पदोमे शीघ्रता और रचनाकी अधिकताके कारण भरतीके शब्द भी आ गये हैं। यदि उन्होने अपने पदोंकी रचना उतनी ही शान्तिसे की होती, जितनी शान्तिसे तुलसीदासने की है, तो उनकी उत्तमता और भी बढ़ जाती।

जब कभी मानसिक उद्वेगकी प्रबलता होती है, उस समय प्रायः शारीरिक कष्ट और मानसिक वेदनाएँ भूल जाती है और रचना बहुत ही उत्तम होती है। बहुतसे लोगोने बड़े ही कष्ट और चिन्ताके समय अच्छी अच्छी रचनाएँकी है। अनेक रचनाएँ ऐसी हैं, जिनके रचयिता, उन रचनाओके समय कारागारमे थे, अथवा अनेक प्रकारकी शारीरिक वेदनाओसे पीड़ित थे, अथवा ऋण-ग्रस्त थे, अथवा राजाओ और शासकोके परम कोप-भाजन बने हुए थे, अथवा देशसे निकाले जाकर बड़ी कठिनतासे एकान्तमे अपना जीवन बिताते थे और उनकी तत्कालीन रचनाएँ शेष रचनाओं की अपेक्षा अधिक उत्तम हैं। इससे सिद्ध होता है मानो उनके

सामने शारीरिक कष्टो और मानसिक चिन्ताओंकी कोई गिनती नहीं थी। लेकिन ऐसे कठिन अवसरो पर उत्तम रचनाएँ करनेमे परिश्रम आदिकी उतनी आवश्यकता नही होती, जितनी प्रतिभाकी आवश्यकता होती है। "प्रतिभा" की ठीक ठीक व्याख्या करना बहुत ही कठिन है। विचार-शक्ति पर बहुत अधिक जोर देनेसे मनुष्यमे कुछ न कुछ प्रतिभा आ जाती है; पर तो भी वास्तविक प्रतिभा और ही होती है। उससे मृत पदार्थोंमे जीवन आ जाता है। प्रसिद्ध विद्वान् हेजलिटके मतसे प्रतिभाका मुख्य काम अभूत-पूर्व विचारा और भावोकी सृष्टि करना है। रस्किन उसे "प्रत्येक पदार्थके मूल तथा गूढ़ भागों तक पहुँचनेकी शक्ति" बतलाता है। मिल कहता है कि वह एक ऐसी अलौकिक शक्ति है, जिसकी सहायतासे साधारणकी अपेक्षा अधिक गूढ़ सत्यका ज्ञान होता है। कालरिज उसे "विचारोको बढ़ानेकी शक्ति" बतलाता है। जान फास्टरका मत है कि वह अपने आन्तरिक प्रकाशको प्रदीप्त करनेकी शक्ति है। फ्लोरेन्सका कथन है कि वह मनुष्यको बुद्धिका सर्वोत्कृष्ट विकाश है। मोलियरकी प्रतिभाके सम्बन्धमे यह कहा गया था कि उसने अपनी साधारण समझको इतना तीव्र बना लिया था कि अन्तमे वह प्रकाशमान् हो गई।

लेकिन वास्तवमें प्रतिभा इससे भी कुछ बढ़कर है। वह बुद्धि से कुछ बढ़कर है, बल्कि दैवी बुद्धि है, और वह किसी किसी मनुष्यका गुण है। बहुतसे लोग ऐसे हो गये हैं, जो जन्मसे ही स्वभावतः बड़े भारी योद्धा, गायक, कला-कुशल अथवा कवि थे। उनमें एक स्वाभाविक शक्ति थी, जिसका उपयोग किसी विशिष्ट कार्य्यमें होता था। उसके लिये किसीसे शिक्षा लेनेकी आवश्यकता नहीं। कई प्रतिभाशाली मनुष्य कोई नया मार्ग,

कोई नया भाव ढूँढ़ निकालते है और साधारण मनुष्य उनका अनुकरण करते है। धैर्य्य और परिश्रमकी सहायतासे मार्ग ढूँढ़ा जाता है, पर प्रतिभा मार्ग निकाल लेती है। बुद्धि तो केवल साधन मात्र है; प्रतिभा सबका मूल मत्र है और इसीलिये प्राचीनकालके लोग उसे एक दैवी और अलौकिक गुण मानते थे। इसीलिये प्रतिभाशाली मनुष्य बड़ा भारी महात्मा माना जाता था।

एक महात्माका मत है कि संसारके सभी पदार्थ उस आत्माके अधीन रहते हैं, जो परम उन्नत दशामे पहुँच जाती है। निरन्तर ध्यान रखने और प्रयत्न करनेसे मानसिक शक्ति बहुत बढ़ जाती है। जिस प्रकार आतशी शीशे पर पड़नेवाली वहुतसी किरणे एक ही स्थान पर एकत्र होकर अग्नि उत्पन्न कर देती है, उसी प्रकार वहुत अधिक विचार और परिश्रम मनमे एक विशेष शक्ति उत्पन्न कर देता है। मनुष्य अपने विचारोको एकाग्र करके उनपर जितना ही जोर पहुँचाता है, उसकी बुद्धि उतनी ही तीव्र हो जाती है। वहीसे प्रतिभाकी उत्पत्ति होती है। इसी स्थान पर पहुँच कर आरकी मेडीस हम्मामसेसे नगा ही निकल कर गलियोमे यह चिल्लाता हुआ फिरने लगा था—"मैंने पता लगा लिया। मैंने पता लगा लिया।" और लोग समझते थे कि वह पागल हो गया है। न्यूटनने निरन्तर विचार करनेसे ही पृथिवीकी आकर्षण शक्तिका पता लगाया था।

जिन मनुष्योंको आरम्भसे ही किसी विशिष्ट कार्य्यकी शिक्षा दी जाती है, वे एक ऐसे जालमें फँस जाते है जिसमेसे उनका निकलना बहुत ही कठिन होता है। उनका मन ओर उनकी आदतें उसी विशिष्ट कार्य्यके अनुकूल वन जाती हैं और उनका भविष्य मानो निश्चित हो जाता है। पर तो भी वलवती प्रतिभाकी प्रवृत्ति किसी

प्रकार रोके नहीं रुकती । वह सब प्रकारकी परिस्थितियो, कठिनाइयों और कष्टोको भेद कर निकल जाती है और अपने उचित मार्ग पर मनुष्यको लगा देती है । यही कारण है कि अनेक ऐसे महापुरुष हो गये है, जो आरम्भसे बहुत ही साधारण कामोमे लगे हुए थे और प्रतिभाके जाग्रत होते ही कोई नया अविष्कार करके—कोई नई बात पैदा करके महापुरुषोमे गिने जाने योग्य हो गये । उसीने बाल्मीकिको ठगसे महर्षि बना दिया, कालिदासको लकड़-हारेसे महाकवि बना दिया, तुलसीदासको परमकामीसे परम-भगवद्भक्त और श्रेष्ठ कवि बना दिया गुरु नानकको व्यापारी-से तथा कबीरको जुलाहेसे एक एक नये मतका संस्थापक बना दिया ।

एक बड़े विद्वान्का मत है कि जो मनुष्य जितना बड़ा बनना चाहता है, उससे अधिक बड़ा वह कभी नही बनता । पर वास्तवमे जो मनुष्य बहुत बड़ा प्रतिभाशाली होता है, उसे आरम्भमे अपनी प्रतिभा अथवा शक्तिका कोई ज्ञान ही नही होता । पर निरन्तर काममे लगे रहने और प्राय. उसके सफल होने पर मनुष्यमे अधिक उच्चाकांक्षा होती है और तभी उसकी प्रतिभा भी जाग्रत होती है । उस दशामे मनुष्य अपने आपको भूल जाता है, उसमे आत्म-विस्मृति आ जाती है ।

यही कारण है कि बड़े बड़े प्रतिभाशाली और महात्मा लोग प्रसिद्धि और यशके विचारोसे कोसो दूर भागते है । वे कभी नामके भूखे नही होते, वे सदा काम करना चाहते है और वे ही काम कर भी डालते है ।

प्रतिभामे यद्यपि स्वयं भी बहुत कुछ शक्ति है, तथापि परिश्रमसे उसके द्वारा कार्य्यसिद्धिमे बहुत अधिक सहायता मिलती है ।

स्वय निरन्तर परिश्रम करनेकी शक्ति भी प्रतिभासे कुछ कम नहीं है। इसीलिए कहा जाता है कि भिन्न भिन्न मनुष्योमे जो अन्तर होता है, वह उनकी स्वाभाविक मूल शक्तिके कारण नहीं, बल्कि परिश्रम और अध्यवसाय के कारण होता है। तो भी मनुष्यमे कुछ नवीनता उत्पन्न करनेकी शक्ति और प्रवृत्ति होनी चाहिए, नहीं तो कोरे परिश्रमका फल बहुत ही कम होगा। प्रतिभाशाली मनुष्य केवल परिश्रमी और अध्यवसायी ही नहीं होते, बल्कि अपने विचारो और काय्योंमे पूर्णरूपसे लीन हो जाते है। जब तक मनुष्य किसी विषयमे पूर्ण-रूपसे लीन न हो जाय, तब तक वह कभी कोई नया आविष्कार नही कर सकता—उसके लिए कोई नई बात नही पैदा हो सकती। ऐसे मनुष्योको लोग बहुधा छोटी दृष्टिसे देखते है और जीवन-कालमे उनका विशेष आदर भी नही होता। पर इन सब बातोकी परवा न करके वे बराबर अपने काममे लगे रहते है और अन्तमे संसार उन्हे महात्मा समझने लगता है।

कुछ लोग ऐसे भी हो गये है जिन्हे स्वय अपनी प्रतिभाका ज्ञान होता है। संसार उन्हे प्रतिभाशाली पीछे मानता है और वे पहले ही अपनी प्रतिभाका पता पा लेते हैं। जान हण्टरने एक बार एक आदमीसे कहा था—"मेरे मर जानेके बाद तुम्हे फिर दूसरा जान हण्टर न मिलेगा!" डान्टे पहलेसे ही अपने आपको सर्व-श्रेष्ठ कवि समझता था। केप्लरको विश्वास था कि मैं अपने देशका रत्न हूँ और मेरे आविष्कार आगे चल कर यथार्थ प्रमाणित होगे। अपने एक ग्रन्थमे उसने लिखा है—"जब कि परमेश्वरने छः हजार बरसमे मेरे समान एक भी निरीक्षक इस संसारमे नही भेजा है, तब यदि मेरी किताबके पाठक सौ बरस बाद पैदा हो, तो

क्या चिन्ता है।" गाथं और वर्ड्स्वर्थको भी इसी तरह अपने प्रतिभाशाली होनेका ज्ञान था। वे लोग समझते थे कि चाहे हमारे समकालीन लोग हमारी कृतियोका आदर न भी करे, तो भी आगेकी पीढ़ियां उनका आदर अवश्य करेगी और यदि उनका यह विश्वास न होता तो, कभी किसी प्रकारकी रचना करनेकी उनकी प्रवृत्ति ही न होती।

महापुरुषोका तो साधारण लोगो पर प्रभाव पड़ता ही है, पर महापुरुषो पर भी साधारण लोगोका प्रभाव पड़ता है। वे जिस कालमे उत्पन्न होते हैं, उस कालकी परिस्थिति, शिक्षा और शासन-प्रणाली तथा धर्म्म आदिका उन पर बहुत कुछ प्रभाव पड़ता है। यही कारण है कि कुछ विशिष्ट कालोमे एक साथ ही बहुतसे महापुरुष उत्पन्न हो जाते हैं। हमारे यहाँ प्राचीन वैदिक-कालमे वशिष्ठ, विश्वामित्र और जमदग्नि, उपनिषद्-कालमे याज्ञवल्क्य, जनक और गार्गी, महाभारत-कालमे व्यास, श्रीकृष्ण, भीष्म, और युधिष्ठिर, बौद्ध-कालमे बुद्ध, रुद्रक और महावीर आदि सब एक एक विशिष्ट समयमे और एक साथ हुए थे। इसी तरह शंकर, कुमारिल भट्ट और मण्डनमिश्र, कालिदास और दिङ्नाग, नागार्जुन और कृष्णयज्वा भी एक ही समयमे हुए थे। अकबरके राजत्व-कालमे फैजी, अब्बुल फजल, तुलसी, सूर, बनारसी दास, बीरबल, टोडरमल, केशवदास आदि और आधुनिक कालमें महादेव गोविन्द रानड़े, स्वामी दयानन्द, सर सैयद अहमद, डा० भाण्डारकर, प्रो० तैलंग, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, विशुद्धानन्द, राजा राममोहन राय, सत्यव्रत सामश्रमी, राजेन्द्रलाल मित्र, म० बापूदेव शास्त्री, लोकमान्य तिलक, दादाभाई नौरोजी, आदिका अवतरण प्राय एक ही कालमे हुआ था। प्राचीन रोम, यूनान

और स्पेन आदि देशोमे भी इसी तरह एक ही कालमे एक साथ अनेक बड़े बड़े विद्वान् और महापुरुष हो गये है और आधुनिक इंगलैण्ड, फ्रान्स, इटली और जर्मनी आदिमे ऐसे महात्माओंकी कमी नही है जो एक ही कालमे हुए हैं।

तीसरा प्रकरण

युवक महापुरुष

संसार बहुतसे अंशोमे युवक ही है। समाजमे अधिकतर बालक और बालिकाएँ, युवक और युवतियाँ ही है। यही कारण है कि हम लोग शिक्षाको इतना अधिक महत्त्व देते है। कार्य्यकारिणी और विचार-शक्तिके विकसित और उन्नत होने का समय युवावस्था ही है। युवावस्थामे जिन गुणोंका बीजारोपण हो जाता है, उन्हीके परिणाम-स्वरूप आगे चलकर मनुष्य अच्छी अच्छी बाते कहता और अच्छे अच्छे कार्य्य करता है और वही गुण उसके अभ्यास बन जाते हैं। यदि युवावस्थामे ही मन और हृदयका अच्छी तरह संस्कार न हो तो, आगे चलकर मनुष्यका जीवन बहुत ही निराशा-जनक हो जाता है। सूदे कहता है—"तुम चाहे जितने दिन जीओ, पर तुम्हारे आरम्भके बीस वर्ष सबसे बड़े और लम्बे होगे। ये बीस वर्ष बीतते समय बहुत ही बड़े जान पड़ते है। बीत जानेके बाद भी ये वर्ष वैसे ही बड़े जान पड़ते है। हमे जितनी अधिक स्मृति इन आरम्भके बीस वर्षोंकी होती है उतनी और किसी समयकी नही होती।"

प्रत्येक मनुष्यको परमात्माने जिस दशामे उत्पन्न किया है, उस दशाके अनुसार उसमे एक सर्वांग-पूर्ण मनुष्यका आदर्श ठीक उसी प्रकार होता है, जिस प्रकार किसी संगमरमरके टुकड़े मे कोई मूर्त्ति होती है। जिस तरह संगमरमरके टुकड़ेमेंसे मूर्त्ति

निकालना मूर्त्तिकारका काम है, उसी प्रकार प्रत्येक मनुष्यको उन्नत करके आदर्श बनाना शिक्षाका काम है।

जीवनके आरम्भ और अन्तके साथ ही साथ शिक्षा का भी आरम्भ और अन्त है। इस विषयमे वह मूर्त्तिकारके कामसे भिन्न है। मानव-विकासका कही अन्त नही है। मनुष्यकी आकृति आदि ज्योकी त्यो बनी रह सकती है, पर उसके मनमे निरन्तर परिवर्तन होता रहता है। विचार, इच्छा और रुचि बराबर बदलती रहती है। जीवन और शिक्षाका या तो यह उद्देश्य है ही या होना चाहिए कि जहाँ तक हो सके, मनुष्य सदा श्रेष्ठ बनता जाय। जिन परिस्थितियोसे हमारी ज्ञानशक्तिकी वृद्धि होती है, उनके सम्बन्धमे हम बहुत ही कम बाते जानते हैं और उनसे भी कम उन परिस्थितियोके सम्बन्धमे जानते है, जिनका प्रभाव हमारे हृदय पर पड़ता है। फिर भी आचारके लक्षण आरम्भमे ही दिखाई देने लगते है। बालकके किसी साधारण कार्य्य, रुचि या उत्कण्ठाको देखनेसे ही उसके भविष्य-का बहुत कुछ पता लगाया जा सकता है। आचरणको परम शुद्ध और श्रेष्ठ बनानेके लिए जिन शुद्ध रुचियो, अच्छी आदतो और सामाजिक गुणो की आवश्यकता होती है, यह आवश्यक नही है कि उन गुणोके साथ ही साथ मनुष्य मे ज्ञान अथवा ज्ञानके प्रति अनुराग भी हो।

पर तो भी इस सम्बन्धमे कोई निश्चित नियम नही है। एक अच्छे पादरीने कहा है—"छोटे हृदय और बड़े मस्तिष्क कई तरहको शिक्षासे बनते हैं। इसके साथ ही, ज्ञानकी वृद्धि करना प्रत्येक मनुष्यका निजका भी कर्त्तव्य है और समाजके प्रति भी। किसी स्थायी लाभकी आशा करनेसे पहले हमे अधिक समय तक

बहुत ही विचार और धैर्य्य-पूर्वक कार्य्य करना चाहिए। ज्ञान-शक्तिसे काम लेकर उत्तम परिणाम निकालनेके लिए इस बातकी आवश्यकता है कि मस्तिष्कको हृदयके बहुत ही समीप रखा जाय—जो कुछ किया जाय, वह बहुत ही विवेक-पूर्वक किया जाय।"

भिन्न भिन्न मनुष्योमे विचार और ज्ञान-शक्तिकी पुष्टि और पूर्णविकास भिन्न भिन्न अवस्थाओमे होता है और यह अवस्था-भेद बहुत ही ध्यान रखने योग्य है। बहुतसे लोग ऐसे होते है, जिनकी ज्ञान-शक्ति आरम्भमे बहुत ही पूर्णताको प्राप्त हो जाती है और उसके उपरान्त शीघ्र सो भी जाती है। यही कारण है कि बहुतसे बालक आरम्भमे तो बड़े ही चपल और बुद्धिमान् होते है, पर बड़े होने पर उनकी सारी चपलता और बुद्धिमत्ता जाती रहती है और कभी कोई उनका नाम भी नही जानता। ज्ञान-शक्तिका पहले ही विकसित होना एक प्रकारका रोग है, जिसमे कोमल और अपक्क मस्तिष्कके ज्ञान-तन्तु क्षुब्ध हो जाते और आवश्यकतासे अधिक काम करने लगते है। जर्म्मनीमे हेनेकेन नामक एक बालक हो गया है, जिसने दो वर्षकी अवस्थामे ही बाइबिलका बहुत बड़ा अंश याद कर लिया था, तीसरे वर्ष वह लैटिन और फ्रेंच बोलने लगा था, उसने चौथे वर्षमे ईसाई धर्म्म और उसके इतिहासके सम्बन्धमे बहुतसी बाते जान ली थी और पॉचवें ही वर्ष वह बीमार होकर मर गया। यद्यपि इतने ही तेज और बुद्धिमान् नही तो भी, बहुत कुछ ऐसे तेज और बुद्धिमान् बालक प्रायः प्रत्येक समाजमे दिखाई देते है, जो बहुत ही छोटी अवस्थामे मर जाते है और जिनके माता-पिता कहा करते है—"क्या कहे, बालक बड़ा ही होनहार, बुद्धिमान और भाग्यवान्

था पर जीने न पाया।" बहुधा लोगोका विश्वास-सा हो गया है कि वहुत चपल बालक अधिक दिनो तक नही जीते, इसी लिए बालकोको वहुत अधिक चपलता करने पर रोका और टोका जाता है।

माता-पिता तथा शिक्षक कभी कभी यह बात भूल जाते हैं कि बालकका काम केवल बढ़ता है, यह कि विना शरीर और स्वास्थ्यको भारी हानि पहुँचाए प्रारम्भिक अवस्थामे मस्तिष्क कभी अधिक काम नही कर सकता, यह कि शरीरके सब अगोको पहले दृढ़ और ठीक होना चाहिए और यह कि मस्तिष्कका पुष्टीकरण शरीरके और सब अगोके पुष्ट हो जानेके उपरान्त होना चाहिए। वस्तुत प्रारम्भिक अवस्थामे विचार-शक्तिकी अपेक्षा पाचन-शक्तिकी अधिक आवश्यकता होती है, मनके सस्कारके लिए व्यायामकी आवश्यकता होती है और लियाकतसे बढ़कर अदब कायदा है। बहुतसे बाल-पुष्प बहुत जल्दी खिलते और बहुत जल्दी मुरझा जाते है—थोड़े ही दिनोमे उनके छोटेसे जीवनका अन्त हो जाता है। -नके ज्ञान-तन्तुओ पर इतना अधिक जोर पड़ता है, जितना उनका शारीरिक सगठन सह नही सकता और इसीलिए जीवन के आरम्भमे ही उनका अन्त हो जाता है। आज-कल बहुत ही छोटा अवस्थाके बालको और वालिकाओको बैठा कर पढ़ाया लिखाया और सिखाया जाता है। उनके मस्तिष्कसे तो अधिक काम लिया जाता है और शरीरसे कम। इसीलिए लोगोमे सिर-दर्द और दूसरी अनेक मानसिक तथा शारीरिक दुर्बलताए होती है।

वालकोको अपने हाथो और पैरोका ही ठीक ठीक उपयोग करनेसे वंचित नही रखा जाता, बल्कि ऑखोका उचित उपयोग

करनेसे भी वंचित रखा जाता है। इस प्रकार निकम्मे हाथों और कमजोर आँखोवाले बालक बढ़ा कर मनुष्य बनाये जाते हैं। शिक्षाका यह मतलब नही है कि बहुतसी बाते एकदमसे दिमागमे ठूस दी जायँ, बल्कि शिक्षाका उद्देश्य ज्ञान-शक्तिको पुष्ट और आचरणको शुद्ध करना है। बालको और बालिकाओंको अपनी शक्तियोका ठीक ठीक उपयोग करना सिखला कर ही हम उन्हे सबसे अच्छी शिक्षा दे सकते है और इसीमे शारीरिक व्यायाम भी सम्मिलित है। यदि इस सिद्धान्तका पूरा पूरा ध्यान रखा जाय तो, बालकोके मस्तिष्कके कामकी अधिकताकी बहुत ही थोड़ी शिकायतें रह जायँ।

कुछ बालक ऐसे भी होते है जिनके शरीर पर मस्तिष्कके क्षोभका विशेष प्रभाव नही पड़ता और जो बाल्यावस्थासे ही चपल होने पर भी अधिक समय तक जीते है। बड़े बड़े गवैयोमें ऐसे बहुतसे लोग हो गये हैं, जो बाल्यावस्थामे ही खूब गाते थे। लेकिन गानेमे मस्तिष्क पर अधिक जोर नही पड़ता। यह कला स्वाभाविक होती है और इसके द्वारा होनेवाला क्षोभ आनन्द-दायक होता है। विलायतमे एक डाक्टर था, जिसके लड़केको गानेका बहुत शौक था। बाप लड़केको वकील बनाना चाहता था, इसलिए उसने ऐसा प्रतिबन्ध कर दिया, जिसमे लड़केको कही बाजेके दर्शन भी न हो। पर तो भी बालक नही माना और उसने कहीसे एक ऐसा बाजा पा लिया, जिसमे जरा भी शब्द नही होता था और जब घरके सब लोग सो जाते थे, तब वह उसे बजाया करता था। एक ड्यूकको इस बातका पता लगा, तब उसने डाक्टरसे कह कर बालकको संगीत सीखनेमे लगाया यह बालक आगे चल कर प्रसिद्ध गायक और नाटककार हैरा-

टेल हुआ, जिसने अनेक सर्वोत्कृष्ट नाटक बनाये। बाल्यावस्था-की चपलता उसके लिए बाधक नही हुई, क्योकि उसने अच्छी-अच्छी रचनाएँ वृद्धावस्थामे ही—चौवनसे छिहत्तर वर्षकी अवस्था के बीचमे—की थी। इसी प्रकार हेन नामक एक और संगीतज्ञ हो गया है, बाल्यावस्थासे ही जिसकी प्रवृत्ति संगीतकी ओर थी और जिसने प्रौढ़ावस्थामे कई अच्छे-अच्छे नाटक और गान बनाये थे। जानसिबैस्टियन वैच नामका एक और गवैया हो गया है, जिसके बड़े भाईने गानेकी एक किताब उससे छिपाकर अलमारीमे बन्द कर दी थी। वैचने किसी तरह वह किताब ढूढ़ निकाली। रातको वह चुपचाप अपने कमरेमे गरमीकी रातके और कभी कभी चन्द्रमाके प्रकाशमे बैठ कर उसकी नकल करने लगा। एक दिन बड़े भाईको यह बात मालूम हो गई। वह उससे वह पुस्तक तथा उसकी नकल फिर छीन ले गया। पर फिर भी बैचने संगीत प्रेम नही छोड़ा। परिणाम यह हुआ कि अठारह वर्षकी अवस्थामे ही वह एक दरबारका गवैया हो गया। आरगन बाजा बजानेमे उसके मुकाबलेमे हैग-टेलके सिवा और कोई नही थी।

इन सबसे बड़ा मोजर्ट नामका एक गवैया था, जिसने चार वर्षकी अवस्थामे एक गीत और बारह वर्षकी अवस्थामे एक गीति-रूपक बनाया था। बारह वर्षकी अवस्थामे एक विशेष प्रकारका बाजा बजानेमे उसके जोडका और कोई नही था। उसके बापने भिन्न भिन्न देशोमे उसे प्रदर्शनार्थ घुमाया और इस प्रकार बहुत कुछ धन कमाया था। संगीत के सिवा उसे संसारके और किसी विषयका कोई ज्ञान नही था। उसने अपने जीवन-कालमे अनेक उत्तम गीति-रूपक बनाये थे। आज-कल भारत-

वर्षमे भी एक ऐसा ही बंगाली बालक है, जिसका नाम मास्टर मदन है और जो तीन ही वर्षकी अवस्थासे गीत गाता है। उसके पिता भी उसे लेकर शहर शहर घूमते और रुपये पैदा करते है। उसे अनेक राजाओंके यहाँसे पदक भी मिले है। इस समय उसकी अवस्था तेरह चौदह वर्षकी है, इसी प्रकार भारतके गायक वर्ग-कथक, ढाढ़ी, कलावन्त आदि-मे भी अनेक ऐसे छोटे छोटे गवैये बालक पाये जाते है, जो मदनसे छोटी अवस्थाके होने पर भी उससे कही अच्छा गाते है और जिनका गाना सुन कर बड़े बड़े गवैये दाँतो उँगली दबाते है। पर दुःख है कि सर्व-साधारण और विशेष शिक्षित लोग ऐसे बालकोसे परिचित नही है।

इसी प्रकार जर्मनी, इटली और फ्रान्समे भी अनेक ऐसे गवैये हो गये है, जो बाल्यावस्थासे ही संगीत-प्रेमी थे और जिन्होने बहुत ही छोटी अवस्थामे अनेक उत्तमोत्तम गीति-रूपक बनाये थे और अच्छी तरह बोलना या लिखना सीखनेसे पहले ही जो गाने बजाने और गीत बनाने लग गये थे। पर इंगलैण्डमे ऐसे गवैये बहुत ही कम हुए हैं। इनमेसे जर्मनीके डेनिअल शूबार्ट नामक एक गवैयेका हाल बहुत ही विलक्षण और मनोरंजक है। कारलाइलने अपने "शिलरका जीवन चरित्र" मे इसका जिक्र किया है। वह गवैया, कवि और उपदेशक था। पारी पारीसे वह कुछ न कुछ हो जाता था, पर उसका वह गुण अधिक समय तक नही ठहरता था। पहला गुण नष्ट हो जाता था और उसके स्थान पर दूसरा गुण आ जाता था। उसमे अनेक विलक्षण शक्तियाँ थी। वह बहुत अच्छा गवैया था, अच्छा उपदेशक था और अच्छा पत्र-सम्पादक था। एक बार वह कैद हुआ था और एक बार उसे देश-निकालेका दण्ड भी मिला था। बावन वर्षकी अवस्थामें वह

बड़ी ही दरिद्रता और दुरवस्थामे मरा। फ्रांज शूबर्ट नामक एक और गवैया था, जो बाल्यावस्थासे ही तीन तरहके बाजे बजाता था। उसने भी कई गीति-रूपक लिखे थे। पर अन्तमे वह भी इकतीस वर्षकी अवस्थामे बड़ी ही दरिद्रावस्थामे मरा था।

इस सम्बन्धमे एक यह विलक्षण बात ध्यानमे रखने योग्य है कि जिस प्रकार छोटे बालकोमे संगीत-प्रेम देखा जाता है, उस प्रकार छोटी बालिकाओमे संगीत-प्रेम नही देखा जाता। कुछ ऐसी बालिकाएँ देखी गई है, जिनमे बाल्यावस्थामे ही कुछ विलक्षणता और विशेषता थी, पर बड़े होने पर उनमे कुछ भी न रह गया। लेकिन पाश्चात्य देशोमे सगीतकी शिक्षा बहुत ही कम बालकोको दी जाती है और अधिकतर बालिकाओको ही सगीत सिखलाया जाता है। बालकोने जिन कठिनाइयोको पार करके संगीत सीखा है, उन कठिनाइयोको पार करके संगीत सीखती हुई बालिकाएँ नही देखी गई है। पर इस देशमे साधारणत न तो बालिकाओ-को ही संगीत सिखलाया जाता है, न बालकोको ही। बल्कि बहुतसे अंशोमे तो शिक्षित समाज सगीतमात्रको ही बुरा समझता है। इस देशमे या तो केवल गवैयोके बालकोको गाना बजाना सिखलाया जाता है और या वेश्या बनाई जानेवाली बालिकाओको। महाराष्ट्र तथा बंगाल प्रदेशमे संगीतका अपेक्षा-कृत कुछ अधिक आदर देखा जाता है। उनमे अब कुछ पुरुष गायक होने लगे है। पर बगालियोका गीत उतना मधुर नही होता। देशके शेष प्रान्तोमे बालको और पुरुषोमे संगीतका बहुत ही कम प्रचार है। गाँव-देहातमे रहनेवाले युवक और साधारण जन समाजकी स्त्रियाँ बिना शिक्षा पाये ही, भिन्न भिन्न अवसरो पर जो कुछ गा लेती है, वही यथेष्ट समझा जाता है।

पाश्चात्य देशोमे अनेक ऐसे प्रसिद्ध चितेरे और मूर्त्तिकार हो गये है, जिनकी रुचिका पता बाल्यावस्थामे ही लग गया था। इनमे सबसे अच्छा उदाहरण फ्लोरेन्सके माइकेल एन्जोलोका है जो चितेरा भी था और मूर्त्तिकार भी। बहुत ही छोटी अवस्थामे वह किसी देहातमे एक सगतराशकी औरतके पास दूध पिलानेके लिए भेजा गया था। ज्यो ही वह कुछ हाथ-पैर हिलानेके योग्य हुआ, त्यो ही वह दीवारो पर तरह तरहके चित्र बनाने लगा। फ्लोरेन्स लौट कर यही काम कमरेके फर्श पर करने लगा। स्कूलमे वह पढ़ता कुछ भी नही था, खाली चित्र बनाता और चित्रोकी पुस्तके देखा करता था। उसका जन्म एक उच्च कुलमे हुआ था। पर उस समय कुलीन लोग चित्रकार या मूर्त्तिकार होना बड़ी ही अप्रतिष्ठाकी बात समझते थे। इसलिए पिताने अपने पुत्रको इस निन्दनीय उद्यमसे रोकनेके अनेक प्रयत्न किये, पर फल कुछ भी न हुआ। तब वह एक चित्रकारकी दूकान पर बैठाया गया। कुछ ही दिनोमे वहॉ वह केवल अपने सहपाठियोसे ही नही, बल्कि अपने शिक्षकसे भी कही बढ़-चढ़ कर चित्रकार बन गया। इसके उपरान्त कुछ अच्छी अच्छी मूर्त्तियॉ देख कर उसके मनमे मूर्त्तिकार बननेका चाव उत्पन्न हुआ। अट्ठारह ही वर्षकी अवस्थामे उसने कई ऐसी अच्छी अच्छी मूर्त्तियॉ बनाई थीं, जिनकी प्रशंसा आज तक सभी बड़े बड़े मूर्त्तिकार करते हैं। उनतीस वर्षकी अवस्थामे उसने एक चित्र बनाया था, जिसमे युद्धकी एक घटना चित्रित थी। उसमे एक मुदने जो कि नह-लाया जा रहा था, जीकर शत्रुओको परास्त किया था। कहा जाता है कि इसके उपरान्त इससे अच्छा दूसरा चित्र उससे बन ही न सका।

रोमके एक गिरजेमे उक्त माइकेल एन्जेलोके अच्छे अच्छे चित्र देख कर प्रसिद्ध चित्रकार राइफलके मनमे चित्र-कलाके प्रति अनुराग उत्पन्न हुआ था। उसके पिताने उसे इस काममे यथा-साध्य उत्तेजना दी थी। सत्रह वर्षकी अवस्थामे वह बहुत अच्छा चित्रकार हो गया था। सैतीस वर्षकी अवस्थामे उसका देहान्त हो गया। उसकी रथीके साथ उसका एक चित्र निकाला गया था, जो अपूर्ण होने पर भी संसारमे सबसे अच्छा चित्र समझा जाता है।

लियोनार कोडाविन्सी भी बाल्यावस्थामे इतना अच्छा चित्र-कार था कि एक बार उसके गुरुने उसका बनाया हुआ एक चित्र देख कर सदाके लिए चित्र बनाना ही छोड़ दिया। वह केवल चित्र-कलाका ही पूर्ण पण्डित नही था, बल्कि गणित, वास्तु-विद्या और सगीत-शास्त्रका भी वह बहुत अच्छा ज्ञाता था। गेटसिनोने दस ही वर्षकी अवस्थामे एक परम सुन्दर चित्र बनाया था। टिनटेरोटोकी चित्र-कला देख कर उसके मालिकने ईर्ष्या-वश उसे नौकरीसे छुड़ा दिया था और इसी कारण वह आगे चल कर इतना अच्छा चित्रकार हो गया कि इटलीके सर्व-श्रेष्ठ चित्रकारोमें उसकी गणना होने लगी। केनोवाने चार ही वर्षकी अवस्थामें मक्खनका एक बहुत बढ़िया शेर बनाया था और चौदह वर्षकी अवस्थामे वह संगमरमरकी मूर्त्तियाँ बनाने लगा था। थोर वाल्सडन तेरह वर्षकी अवस्थासे ही काठकी अच्छी अच्छी मूर्तियाँ बनाने लगा था और पन्द्रह वर्षकी अवस्थामे उसने चांदीका एक पदक प्राप्त किया था। इसी प्रकार और दर्जनों ऐसे चित्र-कार और मूर्त्तिकार हो गये हैं, जिन्होने बाल्यावस्थामे बहुत ही सुन्दर चित्र और मूर्त्तियाँ बना कर अच्छी ख्याति प्राप्त की थीं।

गवैयो और चितेरोंकी तरह वहुतसे कवियोने भी वाल्यावस्था मे ही अपने उत्कृष्ट कवि होनेका परिचय दिया है। इटलीका प्रसिद्ध कवि डान्टे नौ ही वर्षकी अवस्थामे आठ वर्षकी एक वालिका पर मोहित होकर सुन्दर काव्य करने लगा था। टेस्सो भी वहुत छोटी अवस्थासे कविता करने लगा था। दस वषकी अवस्थामे जव वह अपनी माता और वहिनको छोड़ कर अपने पिताके पास जाने लगा, तव उसने एक वहुत सुन्दर कविता की थी। उसने अपने इस प्रस्थानकी तुलना एक प्रसिद्ध ऐतिहासिक घटनासे की थी। इटलीका एलफिटी भी वाल्यावस्था-मे वड़ा ही विलक्षण था। आठ वर्षकी अवस्थामे एक वार आत्म-हत्याके विचारसे उसने कुछ जड़ी-वूटियाँ खाली थीं, उनसे वह मरा तो नही, पर बीमार अवश्य हो गया। दूसरे दिन वह पासके एक गिरजेमे भेजा गया। तभीसे उसके विचार सुधरने लगे। सोलह वर्षकी अवस्थामे एक वार समुद्रका दृश्य देख कर उसने अनुभव किया कि मै भी कवि हूँ। उसके मनमे विचार तो वहुत अच्छे अच्छे उठते थे, पर अशिक्षित होनेके कारण वह उन्हे छन्दोब्द्ध न कर सकता था। इसलिए उसने पढ़ना आरम्भ किया। उन्नीस वर्षकी अवस्थामे वह एक स्त्रीके प्रेममे फँसा। पर उस स्त्रीका उसके प्रति अनुराग नही था। उस समय भी उसने अपने प्राणोका अन्त कर देना विचारा था, पर उस समय उसके नौकरने उसे वचाया। दोवारा वह फिर प्रेममे फँसा, पर इस वार भी उसे विफलता ही हुई। तवसे वह एकान्तमे रह कर काव्य करने लगा। छव्वीस वर्षकी अवस्थासे उसने दु:खान्त नाटक लिखने आरम्भ किये और सात वर्षमे पन्द्रह उत्तमोत्तम दु:खान्त नाटक लिख डाले।

प्रसिद्ध जर्मन कवि शिलर जब बालक था, तब एक दिन बादल गरजनेके समय वह यह जाननेके लिए एक पेड़ पर चढ़ गया कि यह सुन्दर चमकनेवाली बिजली कहाँसे आती है। बालककी विलक्षण प्रवृत्तिका यह बहुत अच्छा प्रमाण था। क्लोपस्टोककी कविता पढ़कर उसके मनमे भी काव्यके प्रति अनुराग उत्पन्न हुआ और चौदह वर्षकी अवस्थामे ही उसने एक सुन्दर महाकाव्य लिख डाला। गाथे आठ ही वर्षकी अवस्थामे जर्मन, फ्रेंच, इटालियन, लेटिन और ग्रीक भाषाएँ लिख-पढ़ लेता था। धर्म्म पर भी तभीसे उसका विशेष अनुराग था और उसने "निसर्ग-देव" के पूजनकी एक नई पद्धति निकाली थी। संगीत, चित्र-कला और पदार्थ-विज्ञानकी ओर भी उसकी बहुत कुछ प्रवृत्ति थी।

हिन्दीके आधुनिक कवियोमे स्वर्गीय भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र और बाबू राधा कृष्णदासका नाम भी उल्लेख योग्य है। बहुत ही छोटी अवस्थामे बाबू हरिश्चन्द्रका बनाया हुआ यह दोहा बहुत ही प्रसिद्ध है।—

लै ब्यौंडा ठाढे भए, श्री अनिरुद्ध सुजान।
बाणासुरको सैनको, हनन लगे भगवान॥

आगे चल कर भारतेन्दुजीने हिन्दीमे कैसी कैसी सुन्दर कविताएँ की और वे कितने प्रतिभाशाली हुए, इसके यहाँ बतलाने की आवश्यकता नही। बाबू राधाकृष्णदास जब दस वर्षके थे, तब एक बार भारतेन्दुजीके साथ अपने बागमे गये थे। वहाँ लल्लू नामका एक लड़का जो इधर उधर कूदता फिरता था, छत परसे नीचे गिर पडा और रोने लगा। उसे रोते देखकर तुरन्त बालक राधाकृष्णदासने यह दोहा कहा।—

लल्लूसे मल्लू भए, मल्लू चढ़े अटारि।
अटा कूदि नीचे गिरे, रोवत हाथ पसारि॥

पन्द्रह सोलह वर्षकी अवस्थामें ही उन्होंने "दुःखिनी बाला" और "निस्सहाय हिन्दू" आदि कई नाटक लिखे थे, जिनका हिन्दी-जगत्मे बहुत अच्छा आदर हुआ था।

कविता करने की मनुष्यमे एक विशेष प्रकारकी स्वाभाविक शक्ति होती है, और उसके लिए एक खास तरहकी तबीयतकी जरूरत होती है। इस शक्तिका परिचय बहुतही आरम्भमें अधिक से अधिक बीस वर्ष की अवस्थासे पहले ही मिल जाता है। यदि किसीमे बीस वर्ष की अवस्था तक कवि होनेके लक्षण न दिखाई दे, तो बहुधा यही समझना चाहिए कि अब यह कवि नही होगा। मनुष्यके सर्व-श्रेष्ठ सभी गुणोका कुछ न कुछ विकास उस समय तक हो जाता है और उस समय तक जिस गुणका विकास न हो, प्राय॰ वह गुण फिर उस मनुष्यमे कभी नही आता। पर तो भी कभी कभी उसमे अपवाद भी देखनेमे आता ही है। अधिकांश पौधे वसन्त और ग्रीष्मकी युवावस्थामे ही फूलते है; हेमन्त और शिशिरकी वृद्धावस्था मे फूलनेवाले पौधे अपेक्षाकृत कम ही होते है।

आयरिश कवि मूरने कहा है कि सर्वोत्कृष्ट सुखान्त और दुःखान्त नाटक युवकोके ही लिखे हुये है। लोप डी वेगा और कैलडरनने बारह और तेरह वर्षकी अवस्थामे ही काव्य तथा नाटक लिखना आरम्भ कर दिया था। स्पेनके सभी अच्छे अच्छे नाटककारोने भी तीस वर्षकी अवस्थासे पहले ही अपने सब अच्छे नाटक लिख डाले थे। पर दक्षिण युरोपकी अपेक्षा उत्तर युरोपके कवि, कुछ अधिक अवस्थामे काव्य करते

हुए देखे जाते है। सम्भव है कि इसका कारण यह हो कि दक्षिण युरोपमे गरमी अधिक पड़ती है और उत्तर युरोपमे सरदी अधिक होती है। इगलैण्डके चासर, शेक्सपियर और स्पेन्सर बाल्यावस्थाकी कौन कहे, युवावस्थामे भी अपनी कवित्व शक्तिका विशेष परिचय नही दे सकते थे। यद्यपि आज कल कुछ लोगोका यहाँ तक कथन है कि जो नाटक शेक्सपियरके लिखे हुए माने जाते है, वे वास्तवमे शेक्सपियर के नही है, बल्कि किसी दूसरेके है। तथापि यदि यह भी मान लिया जाय कि वे सब नाटक उसीके लिखे हुए है, तो भी इसमे सन्देह नही कि उसने अपनी पहली कविता अट्ठाईस वर्षकी अवस्थामे की थी। तबसे बावन वर्षकी अवस्था तक वह नाटक लिखता रहा। मिल्टन और स्पेन्सरने छब्बीस वर्षकी अवस्था से कविता बनाना आरम्भ किया था। पोप और चैटरटन सोलह वर्षकी अवस्थामे कविता करने लगे थे। एक विद्वान् का मत है कि सोलह वर्षकी अवस्थामे और किसीने वैसी अच्छी कविता नही की। पर उसमे दुराचारी होनेके अतिरिक्त और भी अनेक दोष थे, इस लिए युवावस्थामे ही उसने आत्म-घात कर लिया था। बर्न्स बहुत ही बोदा होने पर भी सोलह वर्षकी अवस्थामे पद्य बनाने लग गया था। थामस मूरने तेरह वर्ष की अवस्थासे पद्यमे एक बालिकाको प्रेम-पत्र लिखा था। कर्क और ब्रूस इक्कीस वर्षकी अवस्थामे मरनेसे पहले ही कई अच्छी कविताएँ कर गये थे। शेलीने पन्द्रह वर्षकी अवस्थामे एक गीति-रूपक लिखा था। प्रसिद्ध कवि बाइरन आठ वर्षकी अवस्थासे ही प्रेम-पाशमे फँस गया था। उसने एक भालू और कई कुत्ते पाले थे। बारह वर्ष की अवस्था से ही वह कविता करने लग गया था और बीस

वर्ष की अवस्था तक उसके कई अच्छे अच्छे काव्य-ग्रन्थ प्रकाशित हो गये थे। मेकालेने कहा है कि "पचीस वर्षकी अवस्थामे वाइरनने साहित्य-क्षेत्रमे इतनी कीर्ति सम्पादित कर ली थी कि स्काट, वर्ड्स्वर्थ और सूदे उसके सामने कोई चीज नही थे। इतिहास मे कदाचित् ही कोई ऐसा उदाहरण मिलेगा, जिसमे किसीने इतनी कम अवस्थामे इतना महत्त्व प्राप्त किया हो।"

ऐसे कवि कम होते हैं, जिनके काव्य अवस्थाकी वृद्धिके साथ साथ उत्कृष्ट श्रेणीके होते जाते हो। तो भी गाथे और मिलटन आदि कई कवि ऐसे हो गये है, जिन्होने प्रौढ़ावस्थामे ही अच्छे अच्छे काव्य किये है। दूसरी बात यह है कि युवावस्थामे अच्छा काव्य करनेवाले कवि अधिक दिनो तक जीवित भी नही रहे। यदि वे जीते रहते तो, सम्भव था कि आगे चल कर और भी अधिक उत्तम कविता करते, पर तो भी इसमे सन्देह नही कि मनुष्यके भावी महत्त्व-पूर्ण गुणोके लक्षण अधिकसे अधिक सत्रहसे तेईस वर्षकी अवस्थाके अन्दर ही दिखाई पड़ने लग जाते है। यदि मनुष्यमे कवित्व-शक्तिका अंकुर होगा, तो उसके चिह्न आरम्भमे ही दिखाई पड़ने लगेंगे, चाहे उसका पूर्ण विकास बहुत देरमे ही क्यो न हो।

स्काटकी प्रतिभाका विकास धीरे-धीरे और कुछ देरमे हुआ था। स्कूलमे वह बिलकुल ही बोदा और निकम्मा समझा जाता था। पर तो भी उसकी प्रतिभाके कुछ चिह्न उस समय भी दिखाई देने लगे थे। बाल्यावस्थामे ही जब वह अपने घर पर कहानी कहने बैठता था, तब लोग बड़ी उत्सुकतासे उसे घेर लेते थे और प्रायः उसके बहुत ही समीप बैठनेका यत्न करते थे। तीस

वर्षकी अवस्था तक पहुँचनेसे पहले उसने साहित्य-सम्बन्धी कोई उल्लेख योग्य काम नही किया था। प्रायः यही दशा महात्मा रानाड़ेकी भी थी। वे बाल्यावस्थामे इतने बोदे थे जिससे घरके लोगो को चिन्ता होती थी कि बड़े होने पर इन्हे कही दस रुपये महीने की नौकरी भी मिलेगी या नही। बीस वर्षकी अवस्था तक सिवा पढ़नेके आपने और कुछ भी न जाना। पर बीस वर्षमे बी० ए० और आनर्स परीक्षाएँ पास करते ही आप इन्दु-प्रकाशके सम्पादक हो गये और तबसे आपकी प्रतिभाका विशेष-रूपसे विकास आरम्भ हुआ। तबसे आप दिन पर दिन उन्नति ही करते गये।

विज्ञान और साहित्य-क्षेत्रमे भी बहुतसे ऐसे विद्वान् और पण्डित हो गये हैं, जिन्होने अपनी आन्तरिक शक्तिका बहुत ही बाल्यावस्थामे परिचय दे दिया था। उनमेसे अनेक ऐसे भी हो गये है, जिन्होने अनेक कठिनाइयाँ सहकर भी साहित्य या विज्ञानके प्रति अपना सहज प्रेम नही छोड़ा। प्रसिद्ध ज्योतिषी गेलीलिओका पिता चाहता था कि वह गणितके फेरमे न पड़े, बल्कि चिकित्सा-शास्त्र सीखे। पर फिर भी गेलीलिओने ज्योतिष-सम्बन्धी तथा दूसरे अनेक महत्त्व-पूर्ण आविष्कार किये ही। लगभग सत्तर वर्षकी अवस्थामे उसने यह सिद्धान्त स्थिर किया कि पृथिवी घूमती है और इस सम्बन्धमे एक ग्रन्थ भी प्रकाशित किया। उस समय पादरियोकी ओरसे उसे धमकियाँ मिलने लगी। सत्तर वर्षकी अवस्थामे बिलकुल अन्धे हो जाने पर भी वह घड़ियोमे लंगर लगानेकी चिन्तामे लगा रहा और अन्तमे यह काम अपने लड़केको सौप कर वह चल बसा। गेलीलिओने अनेक उत्तमोत्तम आविष्कार किये थे; पर उस समयके लोगोने

उसका आदर नहीं किया। यहाँ तक कि धर्माधिकारियोंने उसका स्मृति-चिह्न भी न बनने दिया। उसका स्मृति-चिह्न एक शताब्दी बाद बना।

टाइचो ब्रेहेको उसका पिता सैनिक बनाना चाहता था, पर उसे भी ज्योतिषसे ही प्रेम था। चौदह वर्षकी अवस्थामे ही ग्रहण देखकर ज्योतिषके प्रति उसका अनुराग और भी बढ़ गया और वह यथासाध्य धन व्यय करके ज्योतिषका अध्ययन तथा रात रात भर नक्षत्रोंका वेध करने लग गया। इस कामसे उसके कानून पढ़नेमे विघ्न पड़ने लगा, जिससे उसके शिक्षकने उसे ज्योतिष पढ़नेसे मना किया। पर वह अपने शिक्षककी चोरीसे, रातको उसके सो जाने पर नक्षत्रोंका वेध किया करता था। उसने नक्षत्रोंके सम्बन्धमे तत्कालीन सिद्धान्तोंमे कई भूले निकाली और बहुत ही भद्दे, निकम्मे और रद्दी औजारोंकी सहायतासे उन भूलोंको ठीक किया। सत्रह वर्षकी अवस्थामे ही गणित करके उसने पहलेसे जान लिया था कि (अगस्त सन् १५६३ मे) शनिकी छायामें बृहस्पति आवेगा। बड़े होने पर उसने ज्योतिष-सम्बन्धी अनेक उत्तमोत्तम ग्रन्थ लिखे थे।

उसका साथी प्रसिद्ध ज्योतिषी केप्लर, रोगी और दुर्बल होने पर भी बराबर उसकी सहायता किया करता था। बीस वर्षकी अवस्थामे ही वह एम० ए० और बाईस वर्षकी अवस्थामे ज्योतिष-शास्त्रका अध्यापक हो गया था। पचीस वर्षकी अवस्था मे उसने ज्योतिष-सम्बन्धी एक ऐसा अच्छा ग्रन्थ लिखा था कि जिसका लिखना उसकी योग्यता और सामर्थ्यसे बाहर समझा जाता था। इसके बाद आगे चल कर उसने ब्रेहेको सहायता दी थी और ज्योतिष-सम्बन्धी अनेक उत्तम ग्रन्थ लिखे थे।

सर आइज़िक वट बाल्यावस्थामे बहुत ही दुर्बल और रोगी रहता था। उसमे प्रतिभा होनेके कोई चिह्न नही पाये जाते थे। पर कुछ ही बड़े होने पर वह छोटी छोटी धूप-घड़ियाँ, जल-घड़ियाँ और इसी तरहकी दूसरी चीजें बनाने लग गया था। एक दिन उसके एक चाचाने उसे अकेलेमे बैठकर गणित-सम्बन्धी एक समस्याकी मीमांसा करते देखा तबसे उसे गणित सिख-लानेका प्रबन्ध किया गया। बीस बाईस वर्षकी अवस्थासे वह विज्ञान-सम्बन्धी विलक्षण आविष्कार करने लगा। चवालीस बर्षकी अवस्थामे उसने एक बहुत अच्छा ग्रन्थ लिखा। इसके बाद वह कुछ दिनो तक पागल हो गया था। पागलपनसे अच्छे होने के बाद वह पचासी वर्षकी अवस्था तक जीता रहा; पर फिर उसने कोई अच्छा ग्रन्थ नही लिखा।

जेम्स बरनर्डली नामका एक बहुत बड़ा दार्शनिक हो गया है, जिसके कुलके सभी लोग दार्शनिक होते आये है। उसका पिता उसे पादरी और धर्म्मोपदेशक बनाना चाहता था। पर संयोग-वश उसके हाथोमे ज्यामितिकी कुछ पुस्तके पड़ गई और उसके उपरान्त वह ज्योतिष-शास्त्रके अध्ययनमे लग गया। छब्बीस वर्षकी अवस्थामे उसने धूमकेतुओं पर एक बहुत उपयोगी पुस्तक लिखी थी। ब्लेस पैस्कल जब बारह वर्षका था, तब वह एक दिन जमीन पर कोयलेसे ज्यामितिकी आकृतियाँ-सी बना रहा था। तबसे उसे ज्यामितिकी शिक्षा दी जाने लगी। सोलह वर्षकी अवस्थामे उसने ज्यामितिके एक गहन अंग पर एक बहुत ही उत्तम पुस्तक लिखी थी, जिससे उसकी आश्चर्य्य-जनक योग्यता प्रकट होती थी। उन्नीस वर्षकी अवस्थामे उसने गिनती गिनने की मशीन निकाली थी। इसके उपरान्त वह विज्ञानकी

ओर प्रवृत्त हुआ और उसने कई अच्छी अच्छी बातोंका पता लगाया। पर पचीस वर्षकी अवस्थामे ही उसके विज्ञान-प्रेमका अन्त हो गया और वह धर्म्मकी ओर प्रवृत्त हुआ। डेस्काटेसने उन्नीस हो वर्षकी अवस्थामे दर्शन और गणित-सम्बन्धी अन्वेषणोकी नई प्रणाली निकालनेका प्रयत्न आरम्भ किया था। हैलरने दस वर्षकी अवस्थामे एक व्याकरण बनाया था। क्लेमराल्टने तेरह वर्षकी अवस्थामे गणितके एक गहन अग पर ग्रन्थ लिखना आरम्भ किया था। लैगर उन्नीस ही वर्षकी अवस्थामे एक वैज्ञानिक कालेजमे गणितका प्रोफेसर नियुक्त हुआ था। कालिन मेक्कारिनने पन्द्रह वर्षकी अवस्थामे एम० ए० की डिग्री प्राप्त की थी। लैलैण्ड दस वर्षकी अवस्थामे घरके लोगोको धार्म्मिक उपदेश दिया करता था और सोलह वर्षकी अवस्थामे उसने अपने लिए एक दूरबीन बनाई थी। सर क्रिस्टोफररेनने तेरह वर्षकी अवस्थामे एक वैज्ञानिक यन्त्र तथा एक और दूसरे यंत्रका आविष्कार किया था। बाईस वर्षकी अवस्थामे वह शरीर-शास्त्रका तथा पचीस वर्षकी अवस्थामे ज्योतिषका प्रोफेसर था। उसने सब मिला कर तिरपन बड़े बड़े आविष्कार किये थे। वस्तु-विद्याका भी वह बहुत अच्छा ज्ञाता था और इसीमे उसने अपना बाकी जीवन बिताया था। उसने बहुतसे प्रसिद्ध गिरजे, जिनमे सुप्रसिद्ध सेण्टपालका गिरजा भी सम्मिलित है और जो आग लगनेसे जल गये थे, बनाये थे। सर विलियम रोवन हैमिलटनने तेरह वर्षकी अवस्थामे ही तेरह भाषाओका बहुत अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था।

प्रसिद्ध फ्रान्सीसी भूगोल-वेत्ता डी० एनविल बारह वर्षकी अवस्थासे ही बहुत प्राचीन कालके देशोके मान-चित्र बनाने लग

गया था। उसने अपने जीवनमे प्राचीन कालके देशोके एक-सौ चार तथा आधुनिक कालके देशोके एक-सौ छ नकशे तैयार किये थे। वह कहा करता था कि "मुझे ईटोका बना हुआ भूगोल मिला था, पर मैने उसे सोनेका बना दिया।" लिनेअस उन्नीस वर्षकी अवस्था तक बड़ा ही बोदा था। पर उसका निवास-स्थान एक झीलके किनारे था, जिसके चारो ओर सुन्दर पहाड़ियाँ जगल और हरियाली थी। प्राकृतिक सौन्दर्य्यने उसकी प्रतिभाको जागृत कर दिया। तबसे वह वनस्पति-शास्त्रके अध्ययनमे लगा और इसीके लिए उसने अनेक कठिनाइयाँ सहकर लैपलैण्डमे चार हजार मीलकी प्रायः पैदल ही यात्राकी और सौ नये पौधोका पता लगाया। तबसे वह अपने समयका सर्वश्रेष्ठ वनस्पति-शास्त्रज्ञ समझा जाने लगा। जान रे जो आधुनिक जन्तु-शास्त्रका प्रथम आचार्य्य माना जाता है, एक लोहारका लड़का था। उसे बाल्यावस्थासे ही जन्तुओ और वनस्पतियोसे बड़ा प्रेम था और बड़े होने पर इन्हीके सम्बन्धकी बाते जाननेके लिए उसने दूर दूरकी यात्राएँकी थी।

चिकित्सा-शास्त्रमे भी बहुतसे लोग बहुत ही बाल्यवस्थासे अनुरक्त हुए थे। प्रसिद्ध फ्रान्सीसी चिकित्सक पारी बाल्यावस्था मे एक अस्त्र-चिकित्साके समय सहायता देनेके लिए बुलाया गया था। तभीसे वह चिकित्सा-शास्त्र सीखने लगा था। सर एसली कूपरने पहले पहल एक बार देखा कि एक गाड़ीके नीचे दब जानेके कारण एक युवकके शरीरसे बहुत रक्त बह रहा है। उसने रक्त बन्द करनेके लिए कुतूहल-वश अपना रूमाल कटे हुए स्थान पर बाँध दिया। इससे खून बहना पहले कुछ कम हुआ और थोड़ी देरमे बिलकुल बन्द हो गया। तबसे वह चिकित्साके

काममें प्रवृत्त हुआ। एम० पेटिट सात ही वर्षकी अवस्थासे लिटे के चिकित्सा-सम्बन्धी व्याख्यान सुना करता था। नौ-दस वर्षकी अवस्थामे ही वह शरीर-शास्त्रका इतना बड़ा पण्डित हो गया कि एक चिकित्सालयमे वह इसी विषय पर व्याख्यान देने लगा। नौ-दस वर्षका बालक कुरसी पर बैठ कर शरीरके भिन्न भिन्न अंगो पर व्याख्यान देता था और केवल बड़े बड़े विद्यार्थी ही नही, बल्कि अच्छे अच्छे चिकित्सक भी बड़े चावसे उसका व्याख्यान सुना करते थे। थोड़े ही दिनोमे वह फ्रान्समे सर्व-श्रेष्ठ अस्त्र-चिकित्सक हो गया। बल्यूमेन वैच दस ही वर्षकी अवस्था में मनुष्यकी एक नकली ठठरी लेकर एक बन्द कोठरीमे उस पर मनन करने लगा था, क्योकि उस समय उसके नगरमे केवल एक ही चिकित्सकके पास एक असली ठठरी थी। तेईस वर्षकी अवस्थामे उसने 'On the National Varieties of Mankind' नामक एक सर्वोत्तम ग्रन्थ लिखा था। विचेटने केवल बाईस वर्षकी आयुमे ही शरीर-शास्त्र पर ऐसी किताब बनाई थी, जैसी और किसी एक व्यक्तिने नही बनाई थी। ज्ञान-तन्तुओ और उनमे होनेवाले क्षोभके सम्बन्धमे उसीने पहले पहल बहुतसे सिद्धान्त स्थिर किये थे और खालके सम्बन्धकी बहुतसी बातोका पता लगाया था। बोरहैव ग्यारह वर्षकी अवस्थामे ही ग्रीक और लैटिन भाषासे बढ़िया अनुवाद कर लेता था और इक्कीस वर्षकी अवस्थामे उसने डाक्टर आफ फिलासफीकी पदवी प्राप्तकी थी। डा० जेनरने बीस ही वर्षकी अवस्थामे महाभीषण रोग चेचकको दूर करनेके उपाय—टीकेका आविष्कार कर लिया था।

साहित्य-क्षेत्रमे भी इसी प्रकारके अनेक उदाहरण मिलेंगे। मेलांक्थनने बीस वर्षकी अवस्थामे और फेनेलेनने पन्द्रह वर्षकी

अवस्थामे बड़े बड़े पण्डितों और विद्वानोंके सामने व्याख्यान देना आरम्भ कर दिया था। कजिनने सोलह वर्षकी अवस्थामें एक बहुत बड़ा इनाम पाया था। डा० विलियम वटन पाँच ही वर्ष की अवस्थामे लैटिन, ग्रीक और हिब्रूसे अनुवाद कर लेता था। दस वर्षकी अवस्थामे उसने तीन और प्राचीन कठिन भाषाएँ जान ली थी, जिनमे अरबी भी सम्मिलित थी। सुप्रसिद्ध विद्वान् सर विलियम जोन्सकी बाल्यावस्थाकी ही योग्यता देखकर लोग दग रह जाते थे। डा० अलेक्ज़ेण्डर मरे एक गड़ेरिएका लड़का था और बचपनसे जब भेड़े चराने जाता था, तब कुछ न कुछ भारी मूर्खता या भूल कर बैठता था। इसका कारण यह था कि वहाँ भी वह पढ़नेमे ही मग्न रहता था। पन्द्रह वर्षकी अवस्थामे उसने आपसे आप फ्रेंच और लैटिन भाषाएँ सीखी थीं। कुछ ही वर्षोंमे उसने युरोपकी सारी भाषाएँ सीख ली और तब एशियाकी भाषाओंका ज्ञान प्राप्त करना प्रारम्भ किया। तीस वर्षकी अवस्थामे वह सभी भाषाओंका बहुत बड़ा पण्डित माना जाने लगा। पर बहुत अधिक परिश्रम करनेके कारण वह सैंतीस ही वर्षकी अवस्थामे मर गया।

इगलैण्डका प्रधान मन्त्री पिट बाल्यावस्थामे ही बड़ा चतुर था। लेडी हालैण्डने एक बार उसे देख कर कहा था कि मैंने ऐसा चतुर बालक कभी नही देखा। बाल्यावस्थामे ही वह अपने घरमे एक कुरसी पर बैठ कर छोटा मोटा व्याख्यान देता और लोगोंको मुग्ध कर लेता था। बीस वर्षकी अवस्था तक उसने अँगरेजी-साहित्यका बहुत बड़ा अंश देख डाला था। इक्कीस वर्षकी अवस्थामे पार्लीयामेण्टमे प्रवेश किया और बाईस वर्षकी अवस्थामे बर्कके एक सुधारके समर्थनमे वक्तृता देकर उसने सारे

हाउसको आश्चर्य-चकित कर दिया । चौबीस वर्षकी अवस्थामे वह ब्रिटिश साम्राज्यका प्रधान मंत्री नियुक्त हो गया। मेकालेने कहा था कि इंगलैण्डमे ऐसा आदमी कई शताब्दियोमे नही हुआ ।

नेपालके महामात्य राणा जंगबहादुर बाल्यावस्थासे ही बड़े ढीठ, साहसी और मनचले थे। आठ ही वर्षकी अवस्थामे उन्होने एक विषधर सॉपका मुँह अपनी मुट्ठीमें कस कर पकड़ लिया था और उसी दशामे वे उसे अपने पिताको दिखलाने ले गये थे। दस वर्षकी अवस्थामे वे सहसा बागमती नदीमे बाढ़के समय कूद पड़े थे। एक बार युवावस्थामे वे दो डूबती हुई स्त्रियोको बचानेके लिए मनोहरा नदीमे कूद पड़े थे। सोलह वर्षकी अवस्थामे उन्होने नेपालकी सेनामे एक साधारण सैनिककी हैसियतसे प्रवेश किया था और अपनी योग्यता तथा कार्य-कुशलतासे बढ़ते बढ़ते उनतीस वर्षकी अवस्थामे वे नेपालके महामात्य हो गये थे। उस समय नेपालमे एक प्रकारका घोर विप्लवसा मचा हुआ था। चारो ओर अशान्ति फैली हुई थी। नेपालमे उस समय बड़ा ही अन्धेर था और उसी अन्धेरको दूर करनेके लिए जगबहादुरको बहुतसी चाले चलनी पड़ी थी। जंगबहादुरके शासन और प्रबन्धसे नेपाली प्रजा इतनी प्रसन्न और सन्तुष्ट थी कि जब वे महाराज राजेन्द्र विक्रमको कैद करके काठमाण्डव ले जाने लगे थे, तब प्रजाने महाराजका पक्ष न लेकर उलटे "जंगबहादुरकी जय" की घोषणा की थी। तीन चार ही वर्षके अन्दर उन्होने सारे देशमे शान्ति स्थापित कर दी थी। सारी प्रजा उन्हीका दम भरने लगी थी। सन् १८५० मे जब वे लण्डन गये थे, तब वहाँ उनका बहुत अच्छा आदर-सत्कार हुआ था। स्वय

महारानी विक्टोरियाने उनसे मिलकर उनकी वीरता और योग्यता की बहुत प्रशंसाकी थी। लण्डनमे महारानीने उन्हें कई दिन अपने यहाँ निमंत्रित किया और उनका अच्छा स्वागत किया था। उनमे नैतिक साहसकी भी कमी नही थी। जब महारानी विक्टोरियाने उनसे अपने साथ भोजन करनेके लिये कहा, तब उन्होने स्पष्ट कह दिया कि मै हिन्दू हूँ और अपने धर्म्मके नियमानुसार मैं अपने किसी स्वजातीय कुलीन तकके हाथका भोजन नही कर सकता। फ्रान्समे भी उनका वैसा ही आदर हुआ था और वहाँके राष्ट्रपति भी उनसे मिलकर बहुत प्रसन्न हुए थे। वे कर्त्तव्य-परायण और गुणी पुरुषो का सदा आदर करते थे और उनके विचार बहुत ही उदार थे। वे बहुत ही निर्भीक न्यायपरायण और दृढ़-प्रतिज्ञ भी थे। यदि यह कहा जाय कि उनकी गणना संसारके बड़े बड़े कर्म्मवीर पुरुषोमे की जा सकती है, तो कुछ अनुचित न होगा।

ट्रावन्कोर और बड़ौदेके भूतपूर्व दीवान स्वर्गीय सर टी० माधवराव भी, जिन्होने अपना सारा जीवन भारतीय रियासतोंकी शासन-पद्धति सुधारनेमे बिताया था, आरम्भसे ही बड़े बुद्धिमान् और कुशल थे। उनकी गणना भारतके बड़े बड़े राजनीतिज्ञो और राज्य-संचालकोमे की जाती है। बाल्यावस्थामे ही माधवरावने गणित और विज्ञानमे बड़ी दक्षता प्राप्त की थी। पहले कुछ दिनो तक वे मद्रासके सरकारी स्कूलमे गणित और विज्ञानके अध्यापक थे और उसके बाद वे वही एकाउण्टेंट जनरलके दफ्तरमे नौकर हो गये। इसके बाद वे ट्रावन्कोरमे राजकुमारोके शिक्षक नियुक्त हुए। इसके उपरान्त वे अपनी योग्यताके कारण बढ़ते हुए धीरे धीरे दीवान-पेशकार हो गये। उस समय

ट्रावन्कोरकी बड़ी ही बुरी दशा थी। चारो ओर घोर कुप्रबन्ध और अन्धाधुन्धी थी। लार्ड डैलहौसीकी धमकी थी कि यदि शीघ्र ही ट्रावन्कोरका ठीक ठीक प्रबन्ध न हुआ, तो वह राज्य अँगरेज-सरकार अपने राज्यमें मिला लेगी। जिन अधिकारियोको राजधानीसे बाहर रहकर अपने अपने विभागका प्रबन्ध करना चाहिए था, वे भी राजधानीमे ही रहकर दीवानके विरुद्ध षड्यन्त्र रचा करते थे। इसलिए माधवरावने महाराजसे प्रस्ताव किया कि राज्य बहुतसे जिलेमे बॉट दिया जाय और उनके अधिकारी अपने अपने जिलेमे ही रहे। महाराजको यह बात पसन्द आई। माधवरावके अधिकारमें जो जिले आये, उनका उन्होने बहुत अच्छा प्रबन्ध किया। तबसे महाराज उनका बहुत आदर करने लगे।

सन् १८५७ मे दीवान कृष्णरावके मरने पर तीस वर्षकी अवस्थामे माधवराव ट्रावन्कोरके दीवान हुए। उस समय चारो ओर राज्यमे बेईमानी अत्याचार और अव्यवस्थाके अतिरिक्त और कुछ दिखाई ही न देता था। यदि दूसरा कोई होता तो, उस समयकी दुरवस्था देखकर घबरा जाता। पर माधवराव तनिक भी विचलित न हुए और उन्होने राज्यको बड़ी ही योग्यतासे सँभाला। उन्होने अनेक ऐसे सुधार किये, जिनसे राज्यकी आमदनी बहुत बढ़ गई। शिक्षा, न्याय, शासन आदि सभी विभागोंका उन्होने समुचित प्रबन्ध किया और अच्छे अच्छे कानून जारी करके राज्यकी काया-पलट कर दी। उनकी योग्यतासे प्रसन्न होकर सरकारने उन्हे "सर" की उपाधि दी थी। महाराज इनसे इतने प्रसन्न थे कि इनके नौकरी छोड़ने पर भी वे इन्हे बहुत दिनो तक हजार रुपये मासिक वृत्ति दिया करते थे।

इसके उपरान्त वे इन्दौर के दीवन हुए। यद्यपि महाराज तुकोजीराव होलकर बहुतसे अधिकार अपने ही हाथ मे रखते थे, तथापि वहाँ भी इन्होने बहुतसे सुधार किये थे। जिस समय महाराज मल्हारराव बड़ौदेकी गद्दी से उतारे गये थे, उस समय यहाँ भी बहुत अधिक दुराचार, अत्याचार और कुप्रबन्ध फैला हुआ था। वर्तमान महाराज सयाजीराव ना-बालिग थे, इसलिए राज्यका प्रबन्ध करनेके लिए माधवराव बुलाये गये। कुछ ही दिनो मे धीरे धीरे उन्होने बड़ौदेका भी इतनी उत्तमतासे प्रबन्ध किया कि बड़े बड़े राज्य संचालकोको आश्चर्य होने लगा। सब विभागो का ठीक ठीक प्रबन्ध होने लगा और राज्यकी आमदनी बहुत बढ़ गई। तात्पर्य्य यह कि उनके अखण्ड परिश्रम और नीति-बलसे बड़ौदेमे खूब सुव्यवस्था हुई और राज्य बहुत ही समृद्ध हो गया। बड़ौदे के वर्तमान महाराज सयाजीरावकी शिक्षाके लिए, जो उस समय ना-बालिग थे, माधवरावने 'Major and Minor Hints' नामक एक बहुत ही उपयोगी पुस्तक बनाई थी, जिसमे उन्होने अपने उस अनुभवका सार भर रखा था, जो उन्हे अपने नीति, बल तथा व्यवस्था-कौशलसे भारतके दो बड़े बड़े राज्योको चौपट होनेसे बचानेमे प्राप्त हुआ था। यह पुस्तक राजकुमारो, राजाओ और राज्य-संचालकोके बड़े ही कामकी है।

हैदराबाद (दक्षिण) के मीर तूराब अलीखाँ सर सालारजग, जिनके दादा और परदादा वहाँके प्रधान मंत्री रह चुके थे, अपने चाचाके मरने पर चौबीस वर्षकी अवस्थामे प्रधान मंत्री हुए थे। जिस समय आपने मंत्रीका पद ग्रहण किया था, उस समय खजाना बिलकुल खाली था और देशमे अरब डाकुओका उपद्रव बहुत बढ़ा-चढ़ा था। पर आपने थोड़े ही दिनोमे बहुत ही

योग्यता-पूर्वक देशमे शान्ति स्थापित की, सब विभागोका उत्तम प्रबन्ध किया और रियासतको मालामाल कर दिया। गदरके समय अँगरेज सरकारकी भी इन्होने अच्छी सहायता की थी। परन्तु तो भी न जाने क्यो, निजामका उन पर विश्वास नहीं था। दो बार इनके प्राण लेनेका भी प्रयत्न किया गया था। इनके लड़के मीर लैकअलीखॉ भी बहुत योग्य थे और बाईस ही वर्षकी अवस्थामे हैदराबादके प्रधान मंत्री हुए थे। यद्यपि ये भी बहुत ही शासन-कुशल थे, तथापि निजामसे कुछ अनबन हो जानेके कारण इन्हे इस्तीफा देना पड़ा था।

राजा सर दिनकरराव जो पहले ग्वालियरमे एक दफ़रमे मामूली कर्म्मचारी थे, अपनी योग्यताके ही कारण बढ़ते बढ़ते ३२ वर्षकी अवस्थामे वहॉके प्रधान मंत्री हो गये थे। इन्होने भी राज्यमे अनेक बड़े बड़े सुधार किये थे और कई नये नियम आदि बनाये थे। सर शेषाद्रि ऐय्यर पहले तेरह बरस तक मैसूर राज्य मे बहुत ही छोटे छोटे पदो पर काम करते थे। पर बढ़ते बढते छत्तीस वर्षकी अवस्थामे ये वहॉके प्रधान मंत्री हो गये थे। इन्होने सत्रह वर्ष तक मन्त्रीका काम किया था। इनके मंत्री होनेके समय राज्य पर तीस लाखका ऋण था। पर जब इन्होने वह पद छोड़ा तब खजानेमे १७६००००० (पौने दो करोड़) रुपये थे। पहले राज्यमे अनेक प्रकारके कुप्रबन्ध और झमेले थे। पर इन्होने सारी व्यवस्था ठीक करके मानो वहॉ रामराज्य कर दिया था। इनकी योग्यतासे प्रसन्न होकर नौकरी छोड़ते समय मैसूर दरबारने इन्हे चार लाख रुपये नगद दिये थे। स्वर्गीय मि० रमेशचन्द्र दत्तका नाम भी इस सम्बन्धमे उल्लेखनीय है, क्योंकि आरम्भसे ही शासन-विभागमे रहकर बहुत दिनो तक

बहुत ही योग्यता-पूर्वक इन्होने कमिश्नरी तक की थी और अनेक जिलोका शासन तथा प्रबन्ध बड़ी ही उत्तमता-पूर्वक किया था। इनकी प्रवन्ध-कुशलता देखकर अच्छे शासक और राजनीतिज्ञ दंग रह जाते थे।

प्राय' यही देखा जाता है कि स्कूलो, कालेजो और विश्व-विद्यालयोमे जो लोग अच्छी योग्यता दिखलाते और सदा प्रथम होते है, सांसारिक जीवनमे वे लोग उतनी अधिक योग्यता नही दिखलाते। बहुत अधिक पढ़े लिखे लोग उतनी उन्नति करते हुए नही देखे जाते, जितनी अधिक उन्नति साधारण पढ़े-लिखे लोग करते हैं। व्यापार, विज्ञान और आविष्कार आदिमे प्राय' साधारण पढ़े-लिखे हुए लोग ही अग्रसर होते हैं। ऊपर देशी रियासतोके जिन प्रधान मंत्रियोका उल्लेख है, वे किसी विश्व-विद्यालयके बी० ए' या एम० ए० नही थे। कैम्ब्रिजमे होनेवाले बहुत से "सीनियर रैंगलर" लोग विद्यामे बहुत बढ़े-चढ़े होने पर भी संसारके विशेष उपकारी नही प्रमाणित हुए हैं। इससे सिद्ध होता है कि परिश्रम करके किसी एक विषयमे अधिक योग्यता प्राप्त कर लेना और बात है और प्रतिभाशाली होना और बात है। दूसरी बात यह भी देखी जाती है कि यद्यपि जब तक मनुष्य यथेष्ट अनुभव न प्राप्त करले, तबतक उसे विशेष अधिकार नही मिलता, तथापि प्राचीन तथा आधुनिक कालके बहुतसे ऐसे शासक और अधिकारी आदि हो गये हैं, जिनकी अवस्था अपेक्षाकृत कम ही थी।

सिकंदर बीस वर्षकी अवस्थामे मकदूनियाकी गद्दी पर बैठा था और उसी समय उसने यूनानके अनेक राज्योको परास्त भूकिया था। केवल पौने तेरह वर्षके राजत्व-कालमे उसने मध्य

सागरसे लेकर पंजाब तक अपना राज्य कर लिया था। चार्ल्स दी ग्रेटने तीस वर्षकी अवस्थामे फ्रान्स और जर्मनी दोनों पर अधिकार कर लिया था। फ्रान्सीसी ह्यूगेनाट लोगोका सरदार हेनरी सोलह वर्षका था। उसी अवस्थामे वह अनेक युद्धोमे विजय पाने लगा था। चौतीस पैतीस वर्षकी अवस्थामे एक वार उसने केवल पाँच हजार आदमियोको लेकर उकडी मेयेनके पचीस हजार आदमियो पर विजय प्राप्त की थी। कहा जाता है कि जितनी देर मेयेनको भोजनमे लगती थी, उतनी देर हेनरीको सोनेमे भी न लगती थी। एक वार किसीने उससे मेयेनकी वीरता ओर साहसकी वहुत प्रशंसा की। इस पर उसने कहा—"वह जरूर बहुत अच्छा कप्तान है, पर मुझे पॉच घण्टेका समय उससे अधिक मिलता है।" बात यह थी कि हेनरी सोकर पॉच वजे उठता था और मेयेन दस बजे।

गस्टेवसने सत्रह वर्षकी अवस्थामे स्वीडनके सिहासन पर अधिकार प्राप्त किया था। उस समय एक ओरसे पोलैण्डके राजा ने और दूसरी ओरसे रूसके ज़ारने उसके राज्य पर आक्रमण किया था; पर नौ वर्षतक लगातार युद्ध करके गस्टेवसने केवल अपने दोनो शत्रुओ को ही नही परास्त किया, बल्कि उनका बहुतसा देश भी छीन लिया। उसी बीचमे उसने आस्ट्रियन आक्रमणकारियोको भी परास्त किया था। स्वीडनके राजा बारहवे चार्ल्सने बाल्यावस्था मे ही इससे भी बढ़ कर वीरता दिखाई थी। जब पन्द्रह वर्षकी अवस्थामे वह राज्यसिहान पर बैठा, तब रूस, पोलैण्ड, सैक्सनी और डेन्मार्कके चारो राजाओने मिलकर उसका देश छीनना चाहा। चार्ल्सने तुरन्त डेन्मार्क पर चढ़ाई करके वहॉके राजाको सन्धि करनेके लिए विवश किया। इसके

बाद वह रूसकी तरफ मुड़ा। अट्ठारह वर्षकी अवस्थामे उसने एक युद्ध मे दसगुने रूसियोको परास्त किया। तदनन्तर वह पोलैण्ड पर टूटा। वहॉकी सेनाको परास्त करके राजाको उसने गद्दीसे उतार दिया और उसके स्थान पर दूसरेको गद्दी दी, इसके उपरान्त वह रूसके जार पीटरको गद्दीसे उतारनेके प्रयत्नमे लगा। इस युद्धमे रसदकी कमी, जाड़े और रोग फैलनेके कारण उसकी सेनाको परास्त होना पड़ा और वह भाग कर टर्की चला गया। चार वर्ष बाद वह वहॉसे लौटा और एक साथ ही प्रूशिया, डेन्मार्क, सेक्सनी और रूस से खूब लड़ा। पन्द्रह वर्ष तक इस प्रकार देशके बाहर रहकर वह फिर स्वीडन पहुँचा। वहॉ उसने मेनारडे पर जो उस समय डेन्मार्कसे मिल गया था, आक्रमण करके कई युद्धोमे विजय प्राप्त की। पर एक दिन जब वह खाइयो का निरीक्षण कर रहा था, एक गोली आकर उसे लगी और सैतीस वर्ष की अवस्था मे वह मर गया।

प्रूशियाका फ्रेडरिक दी ग्रेट भी बहुत बड़ा वीर युवक हो गया है। आरम्भमे तो कभी यह आशा की ही नही जा सकती थी कि वह राज्यके किसी कामका निकलेगा; क्योकि वह दिनरात फ्रान्सीसी किताबें पढ़ा करता था, गाता बजाता था और चित्रोंका संग्रह किया करता था। सैनिक शिक्षाकी ओर उसका तनिक भी ध्यान न था। पिताने नाराज होकर उसे जेलमे बन्द कर दिया था और यहॉ तक कि एक बार उसे फॉसी देने तककी आज्ञा दे दी थी। पर पिताके मरने पर अट्ठाईस वर्षकी अवस्थामे वह सिहासन पर बैठा और दूसरे ही वर्ष आस्ट्रियासे लड़ कर उसने भारी विजय प्राप्त की। दो वर्ष बाद वह फिर आस्ट्रियासे भिड़ गया और उसमे भी विजय प्राप्त की। जब वह चवालीस वर्षका

हुआ, तब सप्त-वर्षीय युद्ध आरम्भ हुआ। उसमे भी उसने अपनी युद्ध-निपुणताके अनेक प्रमाण दिये। सीमा बढ़ा कर अपने राज्यको उसने युरोप मे प्रथम श्रेणीका बना लिया था।

टाउलन के घिरावमे नेपोलियन तोपखानेका प्रधान अधिकारी था। उस समय उसकी अवस्था केवल चौबीस वर्षकी थी। सत्ताईस वर्षकी अवस्थामे उसने फ्रेंच सेनाको लेकर इटालियनोसे मुठभेड़ की थी और अच्छी विजय प्राप्त की थी। उसने बड़े बड़े अनुभवी और वृद्ध सेनापतियोके छक्के इसी अवस्थामे छुड़ाये थे। तेईस वर्ष तक वह बराबर लड़ता भिड़ता और जीतता ही चला गया। उसका नाम "विजय-पुत्र" रखा गया था। पर अन्तमे छियालीस वर्षकी अवस्थामे अधिक मोटे और वृद्ध हो जानेके कारण वह वाटर्लूके मैदानमे परास्त होकर पकड़ा गया। कुछ लोगोका यह भी कथन है कि वह स्वयं तो भाग गया, पर उसके स्थान पर एक सिपाही पकड़ गया, जिसकी आकृति उससे मिलती जुलती थी। अस्तु; इसमे सन्देह नही कि अपनी युवावस्थामे उसने ऐसी वीरता दिखलाई थी कि उसकी समता इतिहासमे बहुत ही कम मिलती है। उसकी अधीनतामे काम करनेवाले, अधिकांश बड़े बड़े सेनापति भी युवक ही थे। राबर्ट क्लाइव भी छोटी ही अवस्थामे बहुत बड़ा योद्धा था। पचीस वर्षकी अवस्थामें केवल पाँच-सौ सिपाहियोको लेकर उसने फ्रांसीसियोको परास्त किया और आरकाट पर अधिकार किया था। एक हजार अँगरेज और दो हजार देशी सिपाहियोको लेकर उसने चालीस हजार पैदल और पन्द्रह हजार घुड़-सवारो पर प्लैसीके युद्ध मे विजय प्राप्त की थी।

भारतवर्षमे तो इतने अधिक वीर और योद्धा हो गये हैं कि इस देशकी भूमि ही वीर-प्रसविनी कही जाने लगी है। महाराष्ट्र-केसरी छत्रपति शिवाजी बहुत ही छोटी अवस्थासे अपना अधिकार और बल बढ़ाने लगे थे। १९-२० वर्षकी अवस्था तक उन्होने कई दुर्गों पर अधिकार जमा लिया था। ३०-३२ वर्षकी अवस्था तक पहुँचते पहुँचते उन्होने अनेक बार मुगलोको बे-तरह परास्त करके बहुतसा प्रान्त हस्तगत कर लिया था और इसी प्रकार बराबर बढ़ते बढ़ते छियालीस वर्षकी अवस्थामे तो उन्होने दक्षिणमे हिन्दू साम्राज्य ही स्थापित कर लिया था। उनकी गणना संसारके प्रधान पराक्रमियोमे की जाती है। उनके समयमे तथा उनके उपरान्त भी महाराष्ट्र प्रदेश वीरोसे खाली नही रहा। उसमे बड़े बड़े वीर, योद्धा और उत्साही युवक हुए।

बुन्देलखण्डमे भी अनेक पराक्रमी और योद्धा युवक हो गये है। ओड़छेके राजा बीरसिहदेवने बहुत ही थोड़ी अवस्थामे मुसलमानोसे लड़-भिड़ कर और उनकी अनेक छोटी-मोटी रियासते छीन कर अपने राज्यका विस्तार बहुत बढ़ाया था। उनके बनवाये हुए अनेक प्रासाद और गढ़ आदि उनकी कीर्त्तिका अच्छा परिचय देते है। छत्रसालके पिता चम्पतरायको अपने पूर्वजोसे जो जागीर मिली थी, उसकी वार्षिक आय साढ़े तीन-सौ रुपयेसे अधिक नही थी। इन्होने केवल दस ही पॉच आदमियोको अपने साथ लेकर कार्य्य आरम्भ किया था। धीरे धीरे इन्होने अपने पराक्रमसे धन और जनका यथेष्ट संग्रह किया और ओड़छेका बहुत कुछ अंश अपने अधिकारमे कर लिया। जब शाहजहानने बुन्देलखण्ड पर आक्रमण किया, तब इनमें जातीयताका भाव उत्पन्न हुआ और इन्होने विधर्म्मियोकी तरफ रुख

की। तबसे वे बराबर मुसलमानोका दमन करनेके प्रयत्नमे लगे रहे। पर अनेक, घरके शत्रुओंके कारण ही इन्हे सफलता प्राप्त न हो सकी। अन्तमे इनकी मृत्यु हो गई और इनके वीर पुत्र छत्रसालने बुन्देलखण्डसे मुगलोको निकालनेका काम अपने हाथमे लिया। मुगलोंके मुकाबलेमे इनकी शक्ति कुछ भी न थी। इसलिए पहले मुगल-सेनाका हाल-चाल जाननेके लिए इन्होने मुगलोकी सेवा की। स्वतंत्रता-सम्बन्धी अपने मनके भावोको बड़ी कठिनतासे दबा कर देवगढ़मे ये बड़ी ही वीरता-पूर्वक मुगलोकी ओरसे लड़े थे। देवगढ़ पर मुगलोकी विजय इन्ही के पराक्रमसे हुई थी। इसके उपरान्त दक्षिणकी चढ़ाईमे भी इन्होने मुगलोकी ओरसे बहुत बडा काम किया था। दक्षिणमे ही ये शिवाजीसे मिले थे और वहींसे इन्होने स्वतंत्र रूपसे कार्य करना आरम्भ किया। स्वतंत्रता-स्थापनामे इन्हे जो कठिनाइयाँ उठानी पड़ी, उनके उल्लेखसे इतिहास भरे पड़े है। एक तो प्रबल बाहरी शत्रुओका सामना और दूसरे घरके भेदियोसे बचना, उस पर पासमे कोई विशेष साधनका न होना। ये सब बातें ऐसी थी कि अच्छे अच्छे वीर निराश होकर कोनोमे बैठ जाते। पर छत्र-सालने इन कठिनाइयोकी तनिक भी परवा न की और अपना काम बराबर जारी रखा। मुगलोकी ओरसे लड़ने भिड़नेके उप-रान्त बाईस वर्षकी अवस्थामे इन्होने बुन्देलखण्डमे स्वतंत्रता स्थापित करनेके विचारसे मुगलोसे लड़ना आरम्भ किया और अनेक अवसरो पर उन्हे बुरी तरह परास्त किया। औरंगजेबने इनको दबानेके लिए बहुत बड़ी मुगल-सेना बुन्देलखण्ड भेजी, जिसमे बहुतसे बुन्देले सरदार और राजा भी सम्मिलित हो गये थे। मुगलोको पहाड़ी और जंगली स्थानमें ले जाकर इन्होंने

बड़ी भारी शिकस्त दी और बहुत दूर तक उनका पीछा करके उन्हें भगाया। पीछे जब रूमी सेनाकी कुमक पहुँची, तब उसे भी इन्होने परास्त किया। शिवाजीके साथ साथ छत्रसालका उपद्रव भी बढ़ता देख कर औरंगजेब विचलित हो गया था। इसके उपरान्त और भी अनेक युद्धोमे इन्होने मुगलोको परास्त किया, जिनमेसे चित्रकूटका युद्ध बहुत प्रसिद्ध है। अड़तीस वर्षकी अवस्थामे शिवाजीकी तरह इनका भी राज्याभिषेक हुआ। इससे पहले ही ये दिग्विजय करके बहुत बड़ा राज्य प्राप्त कर चुके थे। अन्तिम बार इन्होने मुगल सूबेदार शाहकुलीसे मऊके निकट युद्ध करके उसकी विशाल सेनाको परास्त किया और उसे बन्दी बनाया था। तबसे अरंगजेबको इनके विरुद्ध और सेना भेजनेका साहस नही हुआ। तब छत्रसाल अपने देशके शासन-सुधारमे लगे और सब प्रान्तो तथा विभागोका इन्होंने बहुत अच्छा प्रबन्ध किया। अन्तमे लगभग पचासी वर्षकी अवस्थामे इनका शरीरपात हुआ। इन्होने जो विशाल राज्य स्थापित किया था, वर्त्तमान, पन्ना, छत्रपुत्र, जैतपुर, चरखारी, अजयगढ़, बिजावर, सरीला, आदि राज्य उसीके अँग हैं और उसीके टूटनेसे बने हैं।

अन्य देशोके राजकुलोमे तो एक दो या तीन पीढ़ी तक ही वीर देखे जाते है, पर राजपूतानेमे अनेक ऐसे राजकुल हो गये हैं, जिनमे लगातार बीसियो पीढ़ियॉ श्रेष्ठ वीरो और योद्धाओंकी हुई हैं। इनमेसे मेवाड़का बाप्पा रावलका वंश अग्रगण्य है। जब चित्तौड़ पर पश्चिमकी ओरसे एक विदेशी शत्रुने आक्रमण किया था, तब बड़े बडे सरदार युद्धमे जानेसे हिचकने लगे थे। उस समय बालक बाप्पा तुरत उस विदेशीका सामना करनेके

लिए तैयार हो गये थे। बाप्पाने इस शत्रुको केवल परास्त ही नही किया था, बल्कि गजनी तक उसका पीछा भी किया था। इनकी योग्यता और पराक्रमसे प्रसन्न होकर चित्तौड़के मोरी वंशके राजाने इन्हे अपना राज्य दे दिया था। उस समय इनकी अवस्था केवल पन्द्रह वर्षकी थी। तबसे इन्होने ३६ वर्ष तक चित्तौड़ पर राज्य किया और इस्फाहान, कन्धार, काश्मीर, इराक, ईरान, तूरान और काफिरस्तान तकके बड़े बड़े बादशाहोको परास्त किया।

जब चित्तौड़ पर मुसलमानोका अधिकार हो गया, तब वीरवर हम्मीरसिहने केवल थोड़े सैनिकोको लेकर बहुसख्यक मुसलमानो के दांत खट्टे कर दिये और अन्तमे उनसे चित्तौड़ छीन ही लिया। युवावस्थामे ही हम्मीरसिह जितने वीर और साहसी थे, उतने ही वे प्रबन्ध-कुशल और राजनीतिज्ञ भी थे। राणा कुम्भा और राणा सॉगाने भी युवावस्थामे ही मुग़लोसे अनेक युद्ध करके उन्हे परास्त किया था। बाकरौलमे मुसलमानो पर विजय प्राप्त करके राणा सॉगा (संग्रामसिह) ने रणथम्भोरके दुर्गम किले पर आक्रमण किया था। उस किले पर विजय प्राप्त करनेके लिए बहुतसे राजपूत योद्धाओको एक दूसरेके कन्धे पर चढ़ कर और इस प्रकार बराबर आदमियोकी सीढ़ी बना कर किलेके ऊपरी भाग तक पहुँचना पड़ा था और उनमेसे सबसे पहले खाली हाथ किलेमे प्रवेश करनेवाले और पहरेवालोको धक्केसे गिरा देनेवाले हमारे युवक राणा संग्रामसिंह थे। मुसलमानोको इन्होने सँभलने तकका मौका नही दिया और भीषण मारकाट मचा कर तुरत सारे किले पर अपना अधिकार जमा लिया। मालवे पर आक्रमण करके इन्होने वहाँके बादशाह मुजफ्फरशाहको कैद कर

लिया था। बाल्यावस्थामे ही अपने भाईके साथ युद्धका अभ्यास करनेमे इनकी एक आँख जाती रही थी। दिल्लीके लोदी बादशाहके साथ युद्ध करनेमे इनका एक हाथ कट गया था और एक दूसरे युद्धमे तोपका गोला लगनेसे ये लँगड़े हो गये थे। इस शारीरिक अवस्थामे इन्होने जैसा अच्छा पराक्रम दिखलाया था, वैसा कदाचित् ही और किसीने दिखलाया होगा। मरनेके समय इनके शरीर पर तलवारो और भालोके ८० बड़े बड़े घाव थे। महाराणा प्रतापने युवावस्थामे ही अपनी वीरता और पराक्रमका जो अनुपम प्रमाण दिया था, उसकी प्रशंसामे बड़े बड़े इतिहासोके पृष्ठके पृष्ठ भरे पड़े हैं।

पंजाब-केसरी महाराज रणजीतसिहने विशाल सिक्ख-राज्यकी स्थापनाका कार्य्य प्राय. बीस बाईस वर्षकी अवस्थामें ही आरम्भ कर दिया था और पचीस वर्षकी अवस्थामे इन्होने अँगरेजोसे सन्धि की थी। २८ वर्षकी अवस्थामें इन्होने उत्तरी पंजाबके बहुतसे स्थानो पर अपना अधिकार कर लिया था। उस समय बहुतसे स्वाधीन सिक्ख-राज्य युवक रणजीतसिहकी अधीनता स्वीकृत करनेमे अपना परम सौभाग्य समझते थे। इससे पहले ही सतलजके पश्चिमी किनारेका कुछ राज्य भी इनके अधिकारमे आ चुका था। उन्ही दिनो जब नेपोलियनके भारत पर आक्रमण करनेकी आशका होने लगी थी, तब अँगरेजोने रणजीतसिहको अपने साथ मिलाये रखनेके लिए मेटकाफ साहबको उनके दरबारमे भेजा था। २८-३० वर्षकी अवस्थामें ही ये यमुनासे लेकर सतलज तक अपना राज्य बढ़ाना चाहते थे। तीस वर्षकी अवस्थामे इन्होने पहले पहल मुलतान पर आक्रमण किया था और लगातार कई बार आक्रमण करके अन्तमे ३८ वर्षकी

अवस्थामे उस पर विजय प्राप्त कर ही ली। इसके कई वर्ष पहले ही काश्मीरकी कई छोटी रियासतो और कुल्लू पर इन्होने विजय प्राप्त कर ली थी। अफगानिस्तान पर भी आक्रमण करके इन्होने अपने उच्चाकांक्षी और पराक्रमी होनेका परिचय दिया था। पीछेसे डेरागाजीखाँ और काश्मीर पर भी इन्होने अधिकार जमा लिया था। जब ये ४१ वर्षके थे, तब इनका प्रताप इतना बढ़ चुका था कि रूससे एक दूत इनके दरबारमे आया था। फ्रान्समे भी इनकी ख्याति पहुँच गई थी; क्योकि वहाँसे दो ऐसे सेनापति इनके पास आये थे, जो नेपोलियनकी अधीनतामे काम कर चुके थे। महाराज रणजीतसिहके समयमे सिक्ख-राज्यकी सीमा उत्तर और उत्तर-पूर्वकी ओर हिन्दुकुश और तिब्बतकी पर्वत-माला तक और उत्तर-पश्चिमकी ओर खैबर तथा सुलेमानकी पर्वत-माला तक पहुँच गई थी। इधर सिन्ध नदी और सतलजके पार तक सिक्खोकी ध्वजा फहराती थी।

यद्यपि भारतमे मुगल-साम्राज्यका प्रधान और पहला संस्थापक बाबर था और उसके लड़के हुमायूँने भी साम्राज्य-स्थापनके काममे बहुत कुछ उद्योग किया था, पर वास्तवमे भारतमे मुगल-साम्राज्यका पूर्ण संस्थापन करनेवाला उसका पोता अकबर ही था। अकबरने पूर्ण साम्राज्य-स्थापनका बहुत बड़ा काम अपनी युवावस्थामे ही किया था। अट्ठारह वर्षकी अवस्थामे ही बैरम-खाँकी अभिभावकतासे निकल कर इसने अपने हाथमे राज-कार्य्य लिया था और तबसे लगातार सात वर्ष तक यह अपने ही अधी-नस्थ, पर विद्रोही सरदारो से लड़ता रहा। अन्तमे उन्हे पूर्ण-रूपसे इसने अपने अधीन कर लिया। पचीस वर्षकी अवस्थामे ही इसने राजपूतानेके अनेक स्थानो पर अपना अधिकार कर लिया

था और अनेक राज्योको अपना करद बना लिया था। तब से यह बराबर दूसरे राज्योको अपने राज्यमे मिलता रहा और धीरे धीरे इसने गुजरात, बंगाल, काश्मीर, सिन्ध और कन्धार पर तक अपना अधिकार जमा लिया। समस्त उत्तर भारत पर अधिकार करके इसने दक्षिणकी ओर रुख की और खानदेश, बराड़ तथा अहमदनगरके बहुत बड़े अश पर भी अपना अधिकार जमा लिया था। यह केवल अपना राज्य बढ़ानेमे ही निपुण नही था, बल्कि उत्तम-रूपसे उसका शासन और प्रबन्ध करनेमे भी बहुत कुशल था।

इसी प्रकार हमारे यहाँ ऐसे सेना-नायकोकी भी कमी नही है, जिन्होने बहुत ही छोटी अवस्थामे सेनाका सचालन अपने हाथमे लिया हो और अपने स्वामीके लिए बहुतसे प्रदेश जीते हो। आल्हा और ऊदल दोनो भाइयोने राजा परमालके लिए बहुतसा देश जीता था। राजा टोडरमल यद्यपि राजनीतिज्ञ और राज्य-सचालक ही थे, तो भी ईर्ष्या-वश जब कुछ लोगोने उन्हे युद्धमे भिजवाया, तब वहाँ भी उन्होने अपनी बहुत कुछ वीरता और योग्यता दिखलाई थी। अकबरके लिए गुजरात और बगालका बहुत बड़ा प्रान्त टोडरमलने ही जीता था। इसके अतिरिक्त और भी अनेक छोटी-मोटी लड़ाइयोमे उन्होने विजय प्राप्त की थी। राजा हरदासरायने जहाँगीरके लिए काँगड़ा प्रदेश जीता था, बहुतसे किलो पर अधिकार प्राप्त किया था और चम्बेके राजाको सर किया था। महाराज रणजीतसिंहको विशाल सिक्ख-राज्य-की स्थापनामे सबसे अधिक सहायता युवक दीवान मोहकचन्द्रसे ही मिली थी, जिन्हे सर लेपिल ग्रिफिनने महाराजका सर्व-प्रधान सेनापति लिखा है। उन्हींने फरीदकोट और पटियालेकी रियासतो

को करद बनाया था, स्यालकोट और जालन्धर पर अधिकार किया था, गोरखोको काँगड़ेसे निकाल बाहर किया था, भिंबर, रजावड़ी, कुल्लू, सुकेत और मण्डीके राजाओको परास्त करके वशमे किया था, शाहशुजाको काश्मीरसे छुड़ाया था और अफगानोसे लड़ कर विजय प्राप्त की थी। दीवान मोतीराम, रामदयाल, कृपाराम और हरीसिंह नलुएसे भी महाराज रणजीतसिंहको बहुत अधिक सहायता मिली थी और इन लोगोने बहुतसे छोटे-मोटे प्रदेश जीते थे। दीवान सावनमल बत्तीस वर्षकी अवस्थामे २५०) मासिक पर मुलतान भेजे गये थे और दूसरे ही वर्ष मुलतान प्रान्तके आधे भागके गवर्नर बना दिये गये थे। कुछ ही दिनो बाद सारा मुलतान प्रान्त और डेरागाजीखाँ उनके अधिकारमे दे दिया गया, जो जीवनभर उनके हाथ मे रहा। उन्होने अपने प्रान्तमे शासन की जो सुव्यवस्था की थी, वह तो की ही थी, साथ ही मुलतान प्रदेशकी बहुतसी पड़ती जमीन को उपजाऊ बनानेके लिए उस पिछड़े हुए जमानेमे (सन् १८३२ के लगभग) तीन-सौ मील तक नहरे खुदवाई थी। सीमाप्रान्तके अफगानोको बड़ी कठिनतासे उन्होने सर किया था। उनकी स्वतंत्र वृत्तिको देख कर लोगोको आशका होने लगी थी कि ये अपने प्रान्तको दबा कर कही स्वतंत्र न हो जाँय। इसलिए सन् १८४४ मे वे लाहौरके दरबार मे छलसे मार डाले गये थे।

यह बात दूसरी है कि किसीको प्रौढ़ावस्था तक पहुँचनेसे पहले अपनी योग्यता दिखानेका अवसर न मिले; पर तो भी उसमें अवसर पड़ने पर काम करनेकी योग्यता होना बहुत ही आवश्यक है। जो मनुष्य युवावस्थामे योग्यता प्राप्त कर

सकता है, वही प्रौढ़ावस्थामे भी कुछ काम कर सकता है। तो भी बहुत कम प्रतिभाशाली मनुष्य चालीस वर्षसे अधिककी अवस्था तक पहुँचते है। गार्थने कहा है कि उस अवस्था तक पहुँचनेके उपरान्त बहुत ही थोड़े लोग अपना मत बदलते अथवा नये सिद्धान्त ग्रहण करते है, जो वे युवावस्थामे पहलेसे ही सोच चुके होते है। कोलम्बस और न्यूटनके मनमे अपने अपने अविष्कारोके सम्बन्धमे युवावस्थामे ही विचार उठे थे। रानडे और गोखलेने युवावस्थामे ही देश-सेवा करनेका दृढ़ विचार कर लिया था। राजा राममोहनराय तथा स्वामी दयानन्दने भी उसी अवस्थामे लोगोके विचारोके प्रवाहको बदलना निश्चय कर लिया था।

सब प्रकारके बड़े बड़े कामोको विचारने और करनेकी शक्ति युवावस्थामे ही होती है। प्रौढ़ावस्थामे ही वे सब कार्य ठीक होते और पूर्णता प्राप्त करते है। युवा-वस्थामे जीविनी-शक्ति पूर्ण-रूपसे होती है और उसी समय मनमे नये विचार उत्पन्न होते हैं। चालीस वर्षके बाद लोग भले ही बड़े बड़े काम करते हो, पर इसमे सन्देह है कि उस समय मानसिकबल से उस काम मे यथेष्ट सहायता मिलती है या नही। एक विद्वान्का विश्वास है कि "जिस मनुष्यकी शक्तियो और गुणोका परिचय बीस वर्ष तक की अवस्थामे न मिल जाय, वह आगे चल कर कभी कोई बड़ा काम नही कर सकता, और अब तक मनुष्योने जितने बड़े बड़े काम किये है, वे सब तीसवर्षकी अवस्था तक पहुँचनेसे पहले ही किये है। अन्य लोगोको देखते हुए बड़े आदमियोको अपने जीवनके उत्तरार्द्धमे चाहे अधिक यश प्राप्त हुआ हो, पर स्वयं उनके जीवनके उत्तरार्द्धकी अपेक्षा पूर्वार्द्धमे ही उन्होने अधिक

कार्य्य किया और अधिक कीर्ति प्राप्त की है।" स्वयं अपने सम्बन्धमे उस महात्माने कहा है कि युवावस्थाकी अपेक्षा प्रौढ़ावस्थामे मेरी धारणा तथा शारीरिक शक्ति घट ही गई है, बढ़ी नही है। वह यह भी कहता है—"सम्भव है कि अपने समय, ज्ञान और अनुभवका सदुपयोग करनेवाले महानुभाव दिन पर दिन बराबर उन्नति करते चले जायँ, पर तो भी इसमे सन्देह नही कि ज्योज्यो दिन बीतते है, त्योत्यो हमारी जीवन-शक्ति, फुर्तीलापन, दृढ़ता तथा अन्यान्य महत्त्वपूर्ण गुण बराबर घटते और कम ही होते जाते है।"

चौथा प्रकरण

वृद्ध महापुरुष

मनुष्योकी दशा पौधोकी-सी है। उनमेसे कुछ ऐसे होते हैं, जो जल्दी फूलते हैं और कुछ ऐसे होते हैं, जो देर से फूलते हैं। जो पौधे जल्दी फूलते हैं, वे प्रायः जल्दी ही नष्ट भी हो जाते हैं। बढ़िया जातिके गुलाब, चमेली, बेला, मोतिया, पारिजात, कमल आदि फूल वर्षके आरम्भसे लेकर मध्य तक ही होते है। वर्षके उत्तरार्द्धमे तो गेदा और सूरजमुखी होता है, उस समय तक रहनेवाले गुलाब आदि थोड़े ही होते हैं।

यद्यपि कहा जाता है कि "होनहार बिरवानके, होत चीकने पात" और "पूतके लच्छन पालनेमे" अर्थात् होनहार होनेके चिन्ह मनुष्यमे आरम्भमे ही दिखाई देने लगते है, तथापि कभी कभी ऐसा भी देखा जाता है कि मनुष्यके गुणोका विकाश उतरती अवस्थामे होता है। प्रत्येक मनुष्यकी मानसिक शक्ति उसके स्वभावके अनुसार अलग अलग प्रकारकी होती है। कुछ लोग तेज होते है, कुछ सुस्त होते है, कुछ जिन्दा-दिल होते है, कुछ मुर्दा-दिल होते है। अच्छी शक्तियाँ रखनेवाले बहुतसे बालक भी बाल्यावस्थामे कोई उन्नति नही करते और बहुतसे साधारण योग्यतावाले ऐसे बालक, जिनमे जल्दी जल्दी बढ़नेकी स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है, उस अवस्थामे उनसे कही आगे बढ़ जाते हैं। तो भी पहले वर्गके बालक आगे चल कर युवावस्थामे अधिक

बलवान् और कार्य्यक्षम होते है। आमका पेड़ जल्दी जल्दी बढ़ता है, पर उसकी लकड़ी कमजोर और खराब होती है। शीशमका पेड़ देरसे बढ़ता है, पर उसकी लकड़ी मजबूत और बढ़िया होती है।

कुछ लोगोका कथन है कि जो बालक छोटी ही अवस्थामे बहुत चालाक और तेज होते हैं, बड़े होने पर उन्हे किसी प्रकार की सफलता नही प्राप्त होती। युवावस्थामे वे प्राय. रोगी होते है और बहुत ही साधारण अवस्थामे रहते है। लड़कोका तेज और चालाक होना एक तरहकी खराबी ही है। हेजलिटकी सम्मति है कि पढ़ने-लिखनेमे जो बालक बहुत तेज होते है, उनमे से अधिकांश बड़े होने पर मूर्ख हो जाते है, और लार्ड काकबर्न-का मत है कि चपल बालकोकी अपेक्षा बोदे बालक ही बड़े होने पर अधिक काम कर सकते है। लार्ड काकबर्नका यह भी मत है कि बालकोकी पढ़ने-लिखनेकी प्रवृत्ति और स्कूलमे उनकी उन्नति कुछ तो शिक्षको पर और अधिकतर स्वयं बालको पर निर्भर करती है। वे स्वयं अपने तथा अपने एक मित्रके विषयमे लिखते है कि "दोनोको एक मूर्ख शिक्षकने गधा बना दिया था।"

ऐसे मूर्ख शिक्षक बालकोकी प्रवृत्तिसे परिचित नही होते और न वे बालकोको पढ़ने-लिखनेके लिए उत्साहित करनेकी कला जानते हैं; उनका सारा आधार मारने पीटने पर ही होता है। काकबर्न कहते हैं कि मैं चार वर्ष तक उस निर्दयी राक्षससे पढ़ता रहा, लेकिन इनमेसे शायद दस दिन भी ऐसे न बीते होगे, जिनमे कि उसने कमसे कम एक बार मुझे न मारा हो।

अधिकांश हृष्ट-पुष्ट बालकोका मन पढ़ने-लिखनेकी अपेक्षा खेल-कूदमे ही अधिक लगता है। बैठ कर किताबें पढ़ना उनकी

प्रकृतिके विरुद्ध होता है। पर अच्छी स्मरण-शक्तिवाले रोगी बालकको खेल-कूद अच्छा नही लगेगा और वह अपने दरजेमे सब लड़कोसे आगे रहेगा। चाहे ऐसा बालक बहुतसे पुरस्कार पाले, तो भी खेल-कूदमे लगा रहनेवाला बालक नफेमे ही रहेगा, उसका शरीर और स्वास्थ्य सदा अच्छा रहेगा और साथ ही बहुधा यह भी देखा जाता है कि युवावस्थामे उन दोनोकी दशा बिलकुल बदल जाती है—खूब पढ़नेवाला लड़का किसी कामका नही रह जाता और न पढ़नेवाला लड़का बहुत अच्छी स्थितिमे हो जाता है। लेकिन जैसा कि हम पहले प्रकरणो मे बतला चुके है, सदा यही बात नही होती, बल्कि ऐसी अवस्था वास्तवमे बहुत ही कम होती है।

यह कोई नही कह सकता कि एक बोदा लड़का कहाँ तक उन्नति कर सकेगा। उसे उन्नति करनेके लिए समयकी आवश्यकता होगी। केवल अनुभवसे ही उसकी प्रवृत्तियोका विकाश होगा। सम्भव है कि माता-पिता उसे किसी ऐसे काममे लगा दे जो उसकी प्रवृत्तिके विपरीत हो; पर यदि उसमे दृढ़ता होगी और किसी विशेष कार्य्यके प्रति उसकी पूर्ण प्रवृत्ति होगी, तो वह पहला काम छोड़ देगा और अपने मनमाने काममे लग जायगा। यदि ऐसे बालकको अपने मनमाने काममे लगनेमे किसीसे सहायता मिलने लगेगी, तो मानो सोनेमे सुगन्ध आ जायगी। नही तो यो भी वह सोना तो है ही। गुरु नानक व्यापारी नही बनाये जा सके, वे आपसे आप महात्मा और धर्म्म-प्रवर्त्तक बन गये। मीराबाई चित्तौरमे रखी और भगवद्भजनसे वंचित नही की जा सकी, दयानन्द गृहस्थीके जंगलमे नही फँसाये जा सके और उन्होने एक मत चलाया ही।

यद्यपि बालकोकी भावी प्रवृत्तिआदिके लक्षण पहलेसे ही दिखाई पड़ने लगते है, तो भी पहलेसे ही यह कह देना एक प्रकार से असम्भव ही है कि यह बालक बड़ा होकर क्या करेगा अथवा क्या बनेगा। न तो उसके होनहार होनेके लक्षणोका विश्वास किया जा सकता है और न अकर्म्मण्य होनेके लक्षणोका। चतुर बालक बड़ा होने पर बहुत ही साधारण अवस्थाका मनुष्य भी रह सकता है और भारी मूर्ख लड़का बड़ा होने पर बहुत बड़ा विद्वान्, वीर या आविष्कर्त्ता भी हो सकता है। बनारसकी गलियो मे मारे मारे फिरनेवाले और साधारण लोगोको गाँजेकी चिलमे भर-भर कर पिलानेवाले जंगबहादुरको देख कर कौन कह सकता था कि यह आगे चलकर नेपालका महावीर और महामात्य होगा? अथवा देहातमें रहनेवाले एक बहुत ही साधारण बालक (सयाजीराव गायकवाड़) को देखकर कौन कह सकता था कि इसे बड़ौदेका विशाल राज्य मिलेगा और यह भारतके प्रथम श्रेणीके शासको और राजाओमे होगा? अथवा परम बोदे बालक राबर्ट क्लाइव को, जो आगे चल कर ईस्ट-इण्डिआ-कम्पनीके दफ्तरमे एक साधारण क्लर्क हुआ था, देखकर कौन कह सकता था कि किसी समय यह भारतमे अँगरेजी सरकारका प्रधान अधिकारी होगा और भारतवर्षमे यही अँगरेजी राज्यकी जड़ पूरी तरहसे जमावेगा?

चतुर और बुद्धिमान् बालक युवावस्थामे भी प्रायः अच्छे ही निकलते है। हाँ यह बात दूसरी है कि यदि उन्हें काम करनेका मौका न मिले, तो वे साधारण स्थितिमे ही रह जायँ। यह भी सम्भव है कि एक बहुत ही साधारण बालक भी साधारणत. और विशेषतः ऐसी दशामे जब कि उसमे धैर्य्य और दृढ़ता हो,

बहुत कुछ महत्त्व प्राप्त करले। नीरोग और हृष्ट-पुष्ट बालक पढ़ने-लिखनेकी अपेक्षा खेल-कूद ही अधिक पसन्द करते हैं, रूखे विषयोको पढ़ना और सबक याद करना उनके लिए बहुत ही कष्टदायक होता है। उनकी इच्छा तो खुली हवा और मैदानोमे दौड़ने-धूपनेकी ही होती है। फिर छोटी अवस्थामे जिन बालको से बहुत कुछ आशा की जाती है, वे बालक भी बड़े होने पर कभी कभी बिलकुल ही भोदू ही देखे जाते हैं। कई ऐसे आदमी भी हो गये है, जिनसे बाल्यावस्थामे बहुत कुछ आशा की जाती थी, पर बड़े होकर जिन्होने कुछ भी न किया। फ्रान्समे दो ऐसे बहुत बड़े राजनीतिज्ञ और प्रधान धर्म्माधिकारी हो गये है, जो युवावस्थामे दिन-रात जूआ ही खेला करते थे।

इसी तरह कालेजोमे पढ़नेवाले युवकोके काम देख कर कभी यह भी निश्चय नही कर लेना चाहिए कि ये बड़े होकर अमुक भारी कार्य्य कर सकेगे। जमीनकी तरह मन भी प्राय' खाली पड़ा रहना और सब प्रकार कामो और बोझोसे बचना चाहता है। जिस तरह बहुत दिनो तक बराबर यथेष्ट धान्य उत्पन्न करने-वाली भूमिमे आगे चल कर उपज कम हो जाती है, उसी तरह अधिक काम करनेवाला मन भी आगे चल कर निकम्मा हो जाता है। लार्ड क्लेरेण्डन युवावस्थामे कुछ भी श्रम न करते थे। कालेजमे उनका सारा समय खेल-कूद और इधर-उधर घूमने-फिरनेमे बीतता था। पर जब विवाह होनेके उपरान्त उनकी स्त्रीका देहान्त हो गया, तब दु'खने उनके गुणोका विकाश किया। तबसे वे कानून और साहित्यके अध्ययनमे लगे और इनमे उन्हे बहुत अच्छी ख्याति प्राप्त हुई। हमारे यहाँ गोस्वामी तुलसीदासजीकी भी पहले यही दशा थी। वे भी आरम्भमे बड़े ही कामी थे। पर

जब एक बार उनकी स्त्री अपने मायके गयी और वे उसके पीछे-पीछे अन्धेरी रातमे तैरकर नदी पार करते हुए उसके पास पहुँचे, तब उसने इन्हे कुछ मर्म्मभेदी वाक्य कहे। तबसे इनकी प्रतिभा-का विकाश हुआ और ये हिन्दी कवियोंके सिरमौर बने।

पादरी वार बर्टन भी लड़कपनमे बड़े ही वाहियात थे। उनके एक शिक्षकने एक वार कहा था कि इससे बढ़ कर बोदा और कोई लड़का मेरे देखनेमे नही आया। तो भी उन्हे अपने आप पर पूर्ण विश्वास था। इसीलिए एक बार उन्होने अपने एक मित्रसे कहा था कि "मै अच्छी तरह जानता हूँ कि आप लोग मुझे क्या समझते हैं। पर आप विश्वास रखिए कि कभी न कभी मैं आपको तथा सारे संसारको दिखला दूंगा कि मैं उतना बड़ा अज्ञान—मूर्ख नही हूँ, जितना बड़ा कि लोग मुझे समझते है।" वास्तवमे उन्होने ऐसा ही किया भी। उनकी लिखी हुई एक पुस्तक देख कर उनके शिक्षक को इस बातका विश्वास ही न होता था कि ऐसा मूढ़ आदमी ऐसी अच्छी पुस्तक लिख सकता है। पादरी मालथस जब कैम्ब्रिजमे पढ़ते थे, तब जान बूझ कर लोगोसे लड़ाइयाँ मोल लेने और झगड़े खड़े करने-के सिवा उन्हे और कुछ आता ही न था। डाक्टर पैली भी युवावस्थामे इतने निकृष्ट थे कि उन्हे देख कर कभी कोई यह नही कह सकता था कि बड़े होने पर ये इतने बड़े विद्वान् होंगे। कालेजमे जब वे पढ़ते थे, तब दो पहर तक तो पड़े सोते ही रहते थे और बाकी दिन सैर-तमाशे और घूमने-फिरनेमे बिताते थे। एक दिन उनके एक बहुत अमीर मित्रने तड़के चार ही बजे आकर उन्हे जगाया और कहा—"तुम बड़े मूर्ख हो। हमारे घरमे तो खानेका ठिकाना है, इसलिए हम कुछ नही करते। पर

तुम तो गरीब हो, तुम्हारा काम कैसे चलेगा ? तुम सब कुछ कर सकते हो और अच्छे दरजे तक पहुँच सकते हो। आज रात भर मुझे तुम्हारी ही चिन्ता रही है, इसीलिए इस समय मैं तुम्हे सचेत करने आया हूँ।" इन दो एक मर्म्मभेदी वाक्योने पैलीके जीवनका रुख ही एकदमसे पलट दिया। उन्होने ऐसे-ऐसे मन्सूबे बाँधे, जिनका उन्हे स्वप्नमे भी कभी ध्यान न हुआ होगा। वे खूब जी लगा कर पढ़ने लगे और उसी वर्ष सीनियर रैंगलर हो गये।

ड्राइडन भी स्कूल या कालेजमे कुछ भी न पढ़ता था। अपने जीवनके आरम्भिक तीस वर्ष तो उसने बिलकुल वृथा ही खोये थे। पर जब उसे दरिद्रताने घेरा, तब वह नाटक लिखने लगा और प्रायः सत्रह वर्ष तक फुटकर नाटक आदि ही लिखता रहा। जिन अच्छे-अच्छे ग्रन्थोके लिए अँगरेजी साहित्यकारोमे उसे इतना ऊँचा स्थान मिला है, वे सब उसकी पचाससे सत्तर वर्षके बीचकी अवस्थाकी रचनाएँ है। उसकी प्रतिभाका विकाश बिलकुल ढलती उमरमे हुआ था। गोल्डस्मिथ और स्विफ्टकी भी यही दशा थी। गोल्डस्मिथ इक्कीस वर्षकी अवस्थामे बी० ए० होनेके समय भी काठका उल्लू ही था। सूचीमे उसका नाम सबके अन्तमे था। उसने चिकित्सा सीखी और सारे युरोपमे वह मारा-मारा फिरा। वह वँसी बजा कर किसी तरह अपना पेट पालता था। इसके बाद उसने बहुत पापड़ बेले और एक बार तीस वर्षकी अवस्थामे उसने परीक्षा देनेके लिए सर्जनोके कालेजमे प्रवेश करना चाहा। यद्यपि उन दिनो परीक्षा बहुत ही सहज थी, पर तो भी किसीने वहाँ उसे भरती न किया। तैंतीस छत्तीस वर्षकी अवस्थासे वह ग्रन्थ लिखने लगा और तबसे उसने बहुत ही अच्छे-

अच्छे ग्रन्थ लिखे। उसके मित्र उस समय भी उसकी हँसी ही उड़ाया करते थे। उसका मित्र जानसन उसे लक्ष करके कहा करता था कि "जब तक उसने कलम नही उठाई थी, तब तक उससे बढ़ कर और कोई मूर्ख नही था और जबसे उसने लिखना आरम्भ किया, तबसे उससे बढ़ कर और कोई बुद्धिमान् नही है। इसी तरह स्विफ्टने भी चौतीस वर्षकी अवस्थामे लिखना आरम्भ किया था और तीन ही वर्ष बाद उसने एक ऐसी अच्छी पुस्तक लिखी, जिसके कारण उसकी सबसे अधिक ख्याति हुई। मिलटन, गाथे, वर्डस्वर्थ और बाइरन सब इसी कोटिके थे। इन सबके अच्छे-अच्छे ग्रन्थ प्रौढ़ावस्थामे ही लिखे गये थे। बाइरन जब संयोग-वश कभी अपने दरजेमें नम्बर चढ़नेके समय, सब लड़को से ऊपर जा बैठता था, तब उसका शिक्षक कहा करता था—"हाँ जी, जरा देखे तो सही कि कितनो जल्दी फिर तुम सबसे नीचे जाते हो।"

अनेक कवियोको तो किसी न किसी स्त्रीके प्रेमने ही कविताकी ओर प्रवृत्त किया था। डैनिश कवि जान इवाल्ड एक बार एक स्त्री पर आसक्त हो गया था, पर जब उस स्त्रीने दूसरेसे विवाह कर लिया, तब वह बहुत दुखी हुआ और फौजमे भरती हो गया; पर वहाँ भी उसका जी न लगा। तबसे वह काव्य करके अपना जी बहलाने लगा। कुछ दिनो बाद वह ऐसा अच्छा कवि हो गया कि उसके एक ग्रन्थके मुकाबलेका और कोई ग्रन्थ डैनिश भाषामे है ही नहीं। कालेरिज भी बड़ा ही व्यसनी था। एक स्त्री पर उसका बहुत ही गहरा प्रेम था, पर उस स्त्रीने उसका कुछ ध्यान ही न किया। उसकी अधिकाँश अच्छी-अच्छी कविताएँ उसीके विरह-कालमे लिखी हुई हैं।

यद्यपि यह कहा जाता है, पर तो भी सदा और सब दशाओमे यह आवश्यक ही नही है कि जो लोग बाल्य और युवावस्थामे बहुत ही विचक्षण-बुद्धि हो, प्रौढ़ावस्थामे वे किसी कामके न रह जायँ; क्योकि ससारमें बहुतसे ऐसे लोग भी देखे जाते हैं जो बाल्य और युवावस्थामे भी बड़े ही विचक्षण-बुद्धि थे और वृद्धावस्थामे भी जिनकी विचक्षणता कम नही हुई। वर्डस्वर्थ बाल्यावस्थासे लेकर अस्सी वर्षकी अवस्था तक बराबर कविता करता रहा। मेटास टैसियो नामका एक कवि हो गया है, जो दस वर्षकी अवस्थासे लेकर अपने मरण समय चौरासी वर्षकी अवस्था तक बराबर कविता करता रहा।

कुछ लोगोकी विचक्षणता बीचमे भी नष्ट हो जाती है। लार्ड चेस्टरफील्डका लड़का बाल्यावस्थामे तीन भाषाओमे कविता करता था, पर युवावस्थामे उसके किये कुछ भी न होता था। इसी प्रकार और भी अनेक गवैये और कवि हो गये, जिन्होने युवावस्था तक तो बहुत ही कीर्ति सम्पादित की; पर उसके उपरान्त उन्होने कुछ भी न किया। कुछ लोग ऐसे भी हो गये है, जिनकी प्रतिभाशालिताका पता तो बाल्यावस्थामे ही लग गया था। पर जिनकी प्रतिभाका विकाश बिलकुल उतरती उमरमे हुआ था। हैण्डल दस ही वर्षकी अवस्था से गीत बनाने लग गया था; पर उसने परिचय अड़तालीस वर्षकी अवस्थामे दिया था। उसने जितने अपनी पूर्ण योग्यताका अच्छे-अच्छे ग्रन्थ लिखे, वे सब पचाससे पचहत्तर वर्षकी अवस्थाके बीचमे ही लिखे थे। इसी प्रकार बहुतसे चित्रकार और गवैये भी ऐसे हो गये है, जिन्होने अपनी प्रवीणताका परिचय युवा, प्रौढ़ और वृद्ध सभी अवस्थाओमें समान रूपसे दिया है। पर तो भी इन उदाहरणोको अपवाद-

स्वरूप ही समझना चाहिए ; क्योंकि अब तक जितने बड़े बड़े कवि आदि हो गये हैं, उन्होने अपनी प्रतिभा-शालिताका परिचय बहुत ही आरम्भिक अवस्थामें दे दिया है।

जिस समय मनुष्यका शरीर पूरी तरहसे बढ़ चुकता है, उस समय अधिक दिनों तक वह उसी दशामे नहीं रहता, बल्कि धीरे-धीरे उसका ह्रास होने लगता है। सच पूछिए तो जिस दिन हम जन्म लेते है, उसी दिनसे हमारा मरण आरम्भ हो जाता है। युवावस्थामे मनुष्यमे जो परिवर्त्तन होता है, वह वृद्धिके लिए होता है और प्रौढ़ावस्थामे जो परिवर्त्तन होता है, वह ह्रासके लिए होता है। जिस समय चढ़ती उमरके दिन पूरे हो जाते है, उसी समय उमरका उतार आरम्भ होता है। सभी बातोकी शक्ति धीरे-धीरे घटने लगती है ; उत्साह, आकांक्षा, बल आदि सभी कम होने लगते हैं। पर ज्यो-ज्यो मनुष्य नई बाते सीखता जाता है, त्यो-त्यो उसका बुद्धि-बल बढ़ता जाता है, इन्द्रियॉ शिथिल होने लगती हैं और बची हुई शक्ति बड़ी ही किफायतसे और अच्छे कामोमे खर्च की जाती है। युवावस्थाके सुन्दर स्वप्नोंके साथ ही साथ उत्साह और कार्य्य करनेकी शक्ति भी कम होती जाती है। मनुष्यकी तेजी कम हो जाती है और वह अधिक शान्ति-पूर्वक सब बातो पर विचार करने लगता है। युवावस्थाकी अपेक्षा प्रौढ़ावस्थामे वह अपने अनुभवसे अधिक काम लेता है। इसीके साथ उसके शारीरिक और मानसिक अंग भी क्षीण होने लगते है। उसे किसी बातके उत्तम अंश बहुत कम दिखाई देते हैं और वह दरिद्रतासे अधिक दुखी होने लगता है। जैसा कि एक फारसीके कविने कहा है—"उमर

ज्यों-ज्यों बढ़ती जाती है, त्यों-त्यों जीवनके कॉटे तो बढ़ते जाते हैं और फूल कुम्हलाते जाते है।"

प्रायः तीससे पचास वर्षकी अवस्था तक मनुष्यके सब अंग भी ठीक रहते है और उसकी मानसिक शक्तियाँ भी बहुत अच्छी दशामे रहती है। प्रतिभाके बहुत बड़े-बड़े काम इसी अवस्थामे होते है। मैकालेका कथन है—"इस समय संसारमे जितनी अच्छी-अच्छी किताबे है, उनमेसे प्रति सैकड़े पंचानवे पुस्तकें ऐसी ही हैं, जिन्हे उनके लेखकोने चालीस वर्षकी अवस्था तक पहुँचनेके उपरान्त लिखा है।" पर जैसा कि हम आगे चलकर दिखलावेगे, यह कथन सर्वथैव ठीक नही है। शारीरिक श्रम बहुधा शरीरके संगठन और स्वभाव आदि पर अवलम्बित रहता है। पर साथ ही यह भी देखा जाता है कि काव्य तथा ललित-कलामे लोग युवावस्थामे ही अधिक प्रवीण होते हैं और इतिहास तथा दर्शन आदिमें मनुष्य प्रौढ़ तथा वृद्धावस्थामे पारंगत होता है। उद्गारो और भावोकी उत्पत्ति युवावस्थामे ही होती है, पर साहित्यके अधिक गूढ़ और गहन विषयोकी बात इससे बिलकुल ही उलटी है। किसी बहुत बड़े इतिहासकी सामग्री प्रौढ़ या वृद्धावस्थासे पहले एकत्र ही नही की जा सकती। इसी लिए अब तक जितने बड़े-बड़े इतिहास-वेत्ता हुए हैं, वे सब वृद्ध ही थे।

मि० क्वेटेलेटने एक नकशा तैयार किया है, जिसमे उन्होने यह दिखलाया है कि नाटक बनानेकी शक्ति किस उमरमे बढ़ती और किस उमरमे घटती है। उससे पता लगता है कि इक्कीस वर्षकी अवस्थामे तो इसका आरम्भ होता है और पचीससे तीस वर्षकी अवस्था तक यह पूरे जोरों पर होती और बराबर

बढ़ती रहती है। पचास या पचपन वर्षकी अवस्था तक इसका बढ़ना जारी रहता है; और तब उसके उपरान्त एकदमसे उसका अन्त हो जाता है। बड़े-बड़े लेखकोंके छपे हुए ग्रन्थोसे अब तक यही सिद्ध हुआ है। उन्होने यह भी बतलाया है कि सुखान्त नाटक लिखनेकी अपेक्षा दुःखान्त नाटक लिखनेकी शक्ति अधिक शीघ्रतासे बढ़ती है। पर इसमे भी बहुतसे अपवाद मिलते हैं। बहुत से लोग ऐसे भी हो गये हैं, जो वृद्धावस्थामे बहुत ही दुर्बल हो जाने पर भी युवावस्थाकी-सी ही प्रतिभा दिखला गये हैं। बुढ़ापेमे भी उनमे जवानीकी-सी उमगे देखी जाती हैं, उनके मरे हुए दिलमे मानो फिरसे जान आ जाती है। कभी-कभी तो यहाँ तक देखा जाता है कि वृद्धावस्थाके फल युवावस्था के फलो की अपेक्षा अधिक स्वादिष्ट होते हैं। अन्धे होमरने सुप्रसिद्ध ओडेसी (Odyssey) नामक ग्रन्थ वृद्धावस्थामे ही बनाया था। मिलटनने आदम और हौवाके प्रेमका अपूर्व वर्णन बहुत ही वृद्धावस्थामे किया था। सेनापतिने अपना 'कवित्त-रत्नाकर' ग्रन्थ लगभग साठ वर्षकी अवस्थामे बनाया था। मतिरामने अपना पहला ग्रन्थ प्रायः पैंतालीस वर्षकी अवस्थामे बनाया था। उनका प्रसिद्ध ग्रन्थ 'रसराज' तो शायद पचपन या साठ वर्षकी अवस्थामे बना था। सबलसिंह चौहानने यद्यपि महाभारतका छन्दो-बद्ध अनुवाद युवावस्थामें ही आरम्भ किया था, पर उसका अन्तिम या स्वर्गारोहण पर्व उन्होने लगभग अस्सी वर्षकी अवस्थामे लिखा था। भूषणने पैंतीस वर्षकी अवस्थासे कविता करना आरम्भ किया था और अपना प्रसिद्ध ग्रन्थ 'शिवराज-भूषण' प्रायः साठ वर्षकी अवस्थामे बनाया था। महाराज छत्रसाल चौबीस वर्षकी अवस्थासे लेकर

प्रायः सत्तर-पचहत्तर वर्षकी अवस्था तक कुछ न कुछ कविता किया करते थे। देव कवि सोलह वर्षकी अवस्थासे ही कविता करने लगे थे और अपने मरण समय बहत्तर वर्षकी अवस्था तक बराबर कविता करते थे। घनानन्दने ढलती उमरमे ही भक्ति-सम्बन्धी अच्छी-अच्छी कविताएँ की थी। पद्माकर भट्ट प्रायः अस्सी वर्षकी अवस्था तक बराबर बहुत अच्छी कविता करते थे।

बहुतसे लोग ऐसे हो गये है, जो युवावस्थामे बड़े ही निकम्मे, दुष्ट और मूर्ख होनेके कारण अपने वंशके कलक समझे जाते थे, पर जो आगे चल कर अपने वंशके भूषण सिद्ध हुए। बहुतोको तो कठिनाइयो और विपत्तियोने ही कार्य्य-क्षेत्रमे उतार कर श्रेष्ठ बना दिया और बहुतेरे दूसरी आकस्मिक घटनाओंके कारण भले आदमी बन गये। व्हाइटफील्ड युवावस्थामे चोर था, पर वृद्धा-वस्थामे वह अपने समयका सर्व-श्रेष्ठ उपदेशक समझा जाता था। फ्रान्सके राष्ट्रपति और फ्रान्सीसी राज्य-क्रान्तिके बहुत अच्छे इति-हासज्ञ मा० थियर्स बाल्यावस्थामे बड़े ही भुक्कड़ और दुष्ट थे। हरे सेब खानेके लिए वे अपनी किताबे तक बेच डालते थे और अपनी दुष्टताके कारण स्कूलके मास्टरोको सदा तंग किया करते थे। वे मास्टरकी कुरसी पर मोम लगा देते थे और जब मास्टरको उठनेमे बहुत कठिनता होती, तब सब लड़के जोरसे हँस पड़ते थे। पर वे बड़े ही दरिद्रके लड़के थे, भविष्यकी चिन्तासे आप सुधर गये और थोड़े दिनो बाद ही अपने सारे सह-पाठियोसे आगे बढ़ गये। ड्यूमास बाल्यावस्थामे खेलकूदके सिवा और कुछ जानता ही न था। युवावस्थामे उसे देख कर कोई यह नही कह सकता था कि यह कुछ भी कर सकेगा। उसके एक नाटककार मित्रने उसे लिखा था—"नाटक लिखना

भी एक प्रकारका व्यवसाय ही है और इसमे केवल थोड़ेसे अभ्यासकी आवश्यकता है।" तबसे वह नाटक लिखने लगा। धीरे-धीरे उसने अस्सी नाटक और चालीस उपन्यास लिख डाले। शेरिडन भी बाल्यावस्थामे बड़ा ही पाजी और चुलबुला था। पर माताके मरनेके कारण उसका पाजीपन बहुत कुछ कम हो गया और तबसे वह बराबर उन्नति करने लगा। बढ़ते-बढ़ते वह अपने समयका बहुत बड़ा महापुरुष हो गया था।

पाठ्य पुस्तके पढ़ कर बालक अपने दरजेमे ही सबसे अच्छा रह सकता है। संसारमे सर्व-श्रेष्ठ होनेके लिए कर्मण्यता और अध्यवसायकी आवश्यकता होती है। बाल्य या युवावस्थामे जो सदा किसी प्रकारका बहुत अधिक अध्ययन करता रहता है, वह बहुधा संसारके कामका नही रह जाता। इसी लिए हेजलिटने अपने एक निबन्धमे पण्डितो की मूर्खता और विद्वानो-की अज्ञानताका इतना जोरदार और सटीक हाल लिखा है।

बड़े-बड़े योद्धा तो अनपढ़ ही होते है; पढ़नेमे उन्हे बड़ी कठिनता होती है और वे बहुतसा समय लगाकर भी बहुत ही थोड़ा पढ़ पाते हैं। एक प्रसिद्ध जर्म्मन जनरलकी माता उसका बाल्यावस्थाका विद्या-वैर देखकर मनाया करती थी कि वह मर जाय तो अच्छा हो। पर वह अपने समयका सर्व-श्रेष्ठ सेनापति हुआ। ड्यूक आफ मार्लबरो भी बाल्यावस्थामे कुछ पढ़ते-लिखते न थे। लेकिन पचास-साठ वर्षकी अवस्थामे उन्होने बड़े-बड़े युद्धोमे कई बार अच्छी विजय पाई थी। क्लाइव बाल्यावस्थामे महल्ले भरके पाजी लड़कोको साथ लेकर चारो तरफ उपद्रव करता फिरता था। स्कूलवाले उससे हमेशा परेशान रहते थे। इन लोगोने तथा इन्हीके समान और भी बहुतसे

लोगोने कभी स्कूलमे कुछ पढ़ा ही नही और फिर भी जीवनमे उन्होने इतने बड़े-बड़े काम किये, जितने बड़े बड़े किताबी कीड़ोने कभी न किये होगे।

लार्ड काकबर्नकी तरह बहुतसे बालक ऐसे भी होते है जो बुरे शिक्षकोके हाथमे हो रह कर बुरे हो जाते हैं और जब तक उन दुष्ट शिक्षकोसे उनका पीछा नही छूटता, तब तक उनके गुणो-का विकाश ही नही होता। बहुत अधिक मारपीट या जबर-दस्ती भी लड़कोको बे-तरह बिगाड़ देती है। जार्ज कैवेनिस इसीलिए स्कूलमे कुछ भी न सीख सका था, जिसके कारण वह वहाँसे निकाल दिया गया। जब उसके बापने समझ लिया कि लड़केको पढ़नेका शौक तो है, पर उसके साथ कड़ाई करनेसे काम न चलेगा, तब उसने उसे अपनी इच्छा पर छोड़ दिया। तबसे वह बहुत ही अच्छी तरह आप ही आप पढ़ने लगा और थोड़े ही दिनोमे अनेक भाषाओ तथा शास्त्रोका पण्डित हो गया।

कभी-कभी ऐसा होता है कि जिस बालकमें कोई नवीनता उत्पन्न करनेकी प्रतिभा होती है, उसे लोग "मूर्ख" और "गधा" ही कहा करते हैं। इसका कारण यह है कि उसके विशिष्ट गुणोको विकसित होनेका अवसर ही नही मिलता। जर्मनीमे क्लैपराथ नामका एक प्रसिद्ध विद्वान् हो गया है। एक दिन विश्वविद्यालयमे उसके एक परीक्षकने कहा कि "जान पड़ता है कि तुम्हे कुछ भी नही आता।" उसने उत्तर दिया—"जी नही, मै चीनी भाषा जानता हूँ" चीनी एक तो यो ही बहुत कठिन भाषा है; दूसरे उस समय एक जर्मन युवकके लिये जर्मनीमे बैठे-बैठे उसका सीखना और भी कठिन काम था। पर नही, उसी

अवस्थामे क्रैपराथने घर पर ही चीनी भाषाका बहुत अच्छा अभ्यास कर लिया था। इसके बाद वह अरबी और संस्कृत आदिका भी बहुत अच्छा पण्डित हो गया। सर जोसफ वक्स स्कूलमे एक अक्षर भी न पढ़ते थे। हाँ जंगली फूलोका उन्हे बचपनमें बहुत ही शौक था और आगे चल कर वे वनस्पति-शास्त्रके बहुत बड़े पण्डित हुए।

इटलीमे जनरल मेनेब्रिया नामके एक प्रधान मन्त्री हो गये है। उनकी प्रतिभाका विकाश एक बड़े ही विलक्षण रूपमे हुआ था। एक दिन उनके पिताने उन्हे दण्ड देनेके लिए खाली कमरेमे बन्द कर दिया था। पर बालक मेनेब्रिया बन्द क्यो कर रह सकता था? उसने बैठे-बैठे दीवारमे एक बहुत बड़ा छेद कर डाला और सिरसे पैर तक सुरखी और चूनेसे भरा हुआ वह अपनी माताके पास पहुँच गया। युवावस्थामे उन्हे गणित सीखनेका इतना शौक था कि उसकी कुछ अच्छी पुस्तके खरीदनेके लिये उन्होने अपने कपड़े तक बेच डाले और गरमीमे पहनने लायक बहुत ही हलके कपड़ोसे जाड़ा बिताया। आगे चलकर उन्होने बड़े-बड़े दुर्गम किलोको फतह किया था।

बहुतसे ऐसे लोग भी हो गये हैं, जिन्होने युवावस्थामे तो कुछ भी नही किया और प्रौढ़ बल्कि वृद्धावस्थामे बहुत बड़े-बड़े काम किये। जिस तरह कोई पौधा गरमीमे, कोई बरसातमे और कोई जाड़ेमें फूलता है, उसी तरह कोई मनुष्य बाल्यावस्थामे, कोई युवा-वस्थामे और कोई वृद्धावस्था मे काम करता है। मनुष्यके बहुतसे गुणोका विकाश तो केवल अवसर न मिलनेके कारण ही नही होता। सीजरने बयालीस वर्षकी अवस्थामें पहले पहल सेना-पतिका पद पाया था और उसके उपरान्त सोलह वर्ष तक उसने

बहुतसी लड़ाइयाँ जीती। ओलीवर क्रामवेल चालीस वर्षसे पहले लड़ाईका कुछ भी हाल न जानता था। उसके साथी एड-मिरल ब्लकका आरम्भिक आधा जीवन देहातमे ही बीता था। देहात छोड़ने पर भी सेनामे वह साधारण सिपाहीकी जगह भरती हुआ था। पर चौवन वर्षकी अवस्थामे वह एक जंगी बेड़ेका प्रधान बनाया गया था। उसी समय उसने प्रसिद्ध सेनापति वानट्रौम्पको हराया था और उसके कई साथियोको कई बार परास्त किया था। वाशिंगटनका कार्य्य-काल उसकी अधेड़ अवस्थासे ही आरम्भ हुआ था। डुमरियरने पचास वर्षकी अवस्था तक पहुँचनेके उपरान्त अपनी वीरताका परिचय दिया था। उसकी वीरता देख कर युरोपवाले दंग रह गये थे। आस्ट्रियन जनरल रेडेजकीने तो तिरासी वर्षकी अवस्थामे पहली भारी विजय प्राप्त की थी। सन् १८५७ वाला गदर लार्ड क्लाइवने पैसठ वर्षकी अवस्थामे शान्त किया था और वे कुछ ही दिनो पहलेसे अपनी कारगुजारी दिखलाने लगे थे। प्रसिद्ध जर्मन सेनापति वान माल्टकेको छासठ वर्षकी अवस्था तक कोई जानता भी न था। सन् १८२८-२९ मे रूसियो और तुर्कोंमे जो युद्ध हुआ था, उसका उसने एक इतिहास लिखा था। अँगरेजीमे उसका अनुवाद सन् १८५४ मे हुआ था। उस समय एक अँग-रेजी समाचार-पत्रने उसका जिक्र करते हुए लिखा था—"वह प्रूशियन सेनाका एक कप्तान था, जो मर गया।" इङ्गलैण्ड-वालोको उस समय तक उसके जीने मरनेकी भी खबर न थी! पर सत्तर वर्षकी अवस्थामे सेडानकी विजय प्राप्त करके उसने बहुत कुछ कीर्ति सम्पादित की और तबसे उसकी गणना बड़े-बड़े वीर सेनापतियोमे होने लगी। जिन सैनिकोको अब तक अपनी

वीरता दिखलानेका अवसर न मिला हो, उन्हे इन सब बातोको पढ़ कर मनमे धैर्य्य रखना चाहिए।

कुछ लोग ऐसे भी हो गये है, जिन्हे एक काममे तो विफलता हुई और जब वे उसे छोड़ कर दूसरे काममे लगे, तो उन्हे बहुत अधिक सफलता हुई। एडिसन न तो वक्ता हो सका और न नाटककार, पर उसके निबन्धोके मुकाबलेमे संसारमे कदाचित् ही और किसीके निबन्ध हो। ओटवे नाटक-पात्र नही बन सका, पर उसके बनाये कई नाटक बहुत अच्छे है। पं० रत्ननाथ सरकार और माईकेल मधुसूदनदत्त वकालत या बैरिस्टरी नही कर सके; पर वे उत्तम श्रेणीके लेखक हुए। इसी प्रकार बहुतसे साहित्य-सेवी ऐसे भी हो गये है, जिन्होने बहुत ही वृद्धावस्थामे कीर्ति पाई। डी फोने अपनी सर्व-प्रिय कहानी—"राबिन्सन क्रूसो" अट्ठावन वर्षकी अवस्थामे लिखी थी। रिचड्सन जिन अच्छे-अच्छे उपन्यासोके लिये प्रसिद्ध है, वे सब उपन्यास उसने पचास वर्षकी अवस्थाके उपरान्त लिखे थे। डा० जान्सनका सर्वोत्तम ग्रन्थ Lives of the Poets (कवियोके जीवन-चरित्र) पचहत्तर वर्षकी अवस्थामे लिखा गया था। लांगफेलोने अपनी सर्व-श्रेष्ठ कविता सत्तर वर्षकी अवस्थामे बनाई थी। लैमार्क पहले सैनिक था। पर जब एक युद्धमे वह सैनिक सेवाके अयोग्य हो गया, तब चालीस वर्षकी अवस्थामे उसने वनस्पति-शास्त्र पर पहला ग्रन्थ लिखा। पचास वर्षकी अवस्थासे उसने इस सम्बन्धमे व्याख्यान देना आरम्भ किया और पचीस वर्ष तक बराबर व्याख्यान देता रहा।

इस अवसर पर यह बात भी ध्यानमे रखने योग्य है कि बहुत से महापुरुष ऐसे भी हो गये है, जो पहले सेनामे थे। सैनिक

सदा परिश्रमी, आज्ञाकारी और नियमोके पालन करनेवाले होते हैं और इन सब बातोसे मनुष्यको अपने भावी जीवनमे उन्नति करनेमे बहुत सहायता मिलती है। चरित्रके संगठनमे भी इन सब बातोका बहुत कुछ उपयोग होता है और सबसे बढ़कर बात यह है कि सच्ची प्रतिभाके विकाशके लिए चित्तकी जिस एकाग्रताकी आवश्यकता होती है, वह एकाग्रता भी इन्ही सब बातो से आती है। इसीलिए प्रायः सभी देशोमे ऐसे अनेक साहित्य-सेवी मिलते हैं, जो किसी समय सैनिक थे। सुकरात, जेनोफन, सीजर, डान्टे, कैलडरन, लोप डी वेगा, डेस्कार्टीस, चॉसर, बेन जूलियस, जान्सन, फिलिप सिडनी, बनियन आदि सभी सैनिक थे।

कुछ ऐसे वृद्ध महापुरुष भी हो गये है, जिनमे वृद्धावस्था किसी प्रकारकी क्षीणता या शिथिलता उत्पन्न ही नही कर सकी। डिसराइली ने कहा है कि प्रतिभाशाली मनुष्य बूढ़े होना जानते ही नही। उनका ज्ञान और धारणा-शक्ति बराबर अन्तिम समय तक ज्योकी त्यो रहती है। प्लेटोने इक्यासी वर्षकी अवस्थामे लिखते लिखते शरीर त्याग किया था। केटो ने साठ वर्षकी अवस्थामे और किसी किसीके मतसे अस्सी वर्षकी अवस्थामे ग्रीक भाषा सीखी थी। सिसरोने तिरसठ वर्षकी अवस्थामे वृद्धावस्था पर एक बहुत ही उत्तम ग्रन्थ लिखा था। गेलीलियो अठत्तर वर्षकी अवस्था तक बराबर वेध आदि करता था। जान्सनने इकहत्तर वर्षकी अवस्थामे डच और वाटने पचहत्तर वर्षकी अवस्थामे जर्मन भाषा केवल यह जाननेके लिये सीखी थी कि हमारी धारणा-शक्ति कही क्षीण तो नही हो गई है। पर दोनोने बहुत ही उत्तमता-पूर्वक वे भाषाएँ सीख ली और समझ लिया कि हमारी धारणा-

शक्ति ज्योकी त्यो बनी हुई है। तिरासी वर्ष की अवस्थामे जब गार्थे मरने लगा था, तब उसके होश-हवास बिलकुल दुरुस्त थे। एलेकजेण्डर वान हम्बल्टने मरनेसे एक महीने पहले नब्बे वर्ष की अवस्थामे अपने अन्तिम ग्रन्थ Cosmos की समाप्ति की थी। लियोपोल्ड वान टैन्के इक्यानबे वर्ष की अवस्था तक प्रतिदिन आठ घण्टे काम किया करता था। उसके अन्तिम लेख आदि भी उतने ही उत्तम हैं, जितने कि आरम्भके है। स्वर्गीय दादा भाई नैारोजी प्राय. पचासी वर्षकी अवस्था तक बराबर बहुत कुछ काम किया करते थे। अस्सी वर्ष की वृद्धावस्थामे उन्होने कलकत्तेकी कांग्रेसका सभापतित्व ग्रहण करके निर्भीकता पूर्वक कह दिया था कि भारतवासियोका अन्तिम ध्येय "स्वराज्य" ही है। श्रीमती एनीबेसेण्टने लगभग सत्तर वर्षकी अवस्थामे भारतीय स्वराज्य संघकी स्थापना करके उसके सम्बन्धमे बहुत कुछ काम किया। बम्बईके सुप्रसिद्ध विद्वान् डाक्टर सर रामकृष्ण भाण्डारकर अस्सी वर्षकी अवस्था तक पहुँच जाने पर भी साहित्य और पुरातत्त्व-सम्बन्धी बहुत अधिक कार्य्य करते हैं।

एक लेखकने लिखा है कि चालीस वर्षके बाद दिमागमे कोई नई बात नही समा सकती। पर डा० प्रीस्टले चालीस वर्षकी अवस्था तक कुछ भी कैमिस्ट्री न जानते थे। पहले पहल इकतालीस वर्षकी अवस्थामे उन्होने आक्सीजन गैसका पता लगाया था और तब उसके बाद नाइट्रस, कारबोनिक आक्साइड आदिका। एक विद्वान्ने उनके विषयमे कहा है कि "डा० प्रीस्टलेने सबसे अधिक त्रुटियोके होते हुए भी कैमिस्ट्रीका

अध्ययन किया, उसमे सबसे श्रेष्ठ स्थान पाया और वहुतसी नई बातोका पता लगाया ।"

ज्योतिषियोकी आयु तो प्राय. अधिक हुआ करती है। प्रायः सभी बड़े-बड़े ज्योतिषी सत्तर-अस्सी वर्षकी अवस्था तक जीवित रहे और बराबर रात-रात भर नक्षत्रोका वेध करते रहे है। डीलैम्बरेने कई भागो मे गणित ज्योतिषका इतिहास लिखा था। जब एक आदमीने उससे कहा कि पहले भागमे अनेक बातें ऐसी हैं, जो अगले भागो से नही मिलती और प्रायः विरुद्ध पड़ती है, तब उसने उत्तर दिया था--"मैने तिरसठ वर्षकी अवस्थामे उसे लिखना आरम्भ किया था और अब मैं बहत्तर वर्षका हूँ। यदि मैं इस आसरेमे रहूँ कि सब बातोका ठीक-ठीक ज्ञान हो जाने पर किताब का छपना आरम्भ हो, तो किताब तैयार ही न हो सके।"

बड़े-बड़े राजनीतिज्ञो और न्यायाधीशोकी अवस्था भी वहुत अधिक हुई है। सच तो यह है कि जीवनका महत्त्व समझ कर उसे जितना अधिक श्रेष्ठ बनाया जाय, वह उतना ही अधिक रक्षित रहता है। निकम्मे आदमी जल्दी मर जाते है और काम-काजी आदमी अधिक समय तक जीवित रहते हैं। बल्कि स्वर्गीय मि० गोखलेकी मृत्युके समय मराठी केसरीके एक लेखमे तो यहाँ तक निकला था कि महापुरुषोमे एक ऐसी शक्ति होती है, जिसके द्वारा वे किसी विशिष्ट उद्देश्यकी पूर्ति तक अपना जीवन बनाये रखते है और इसी लिये इतनी भीषण बीमारी मे भी मि० गोखले इतने दिनो तक जीवित रहे।

स्वास्थ्यके लिये यह बात बहुत ही आवश्यक है कि सभी शक्तियोका बराबर उपयोग किया जाय। यह सिद्धान्त वृद्धोके लिये भी है और युवकोके लिये भी। कुछ काम न करनेसे हाथ-पैर,

हृदय मस्तिष्क आदि सभी अंग छीजने लगते है और मानसिक शक्तियो का जल्दी-जल्दी नाश होने लगता है। शारीर-शास्त्रके एक बहुत बड़े विद्वान का मत है कि "यह कहना ठीक नही है कि जिस समय जीवन-शक्तिका ह्रास होने लगता है, उसी समयसे धारणा-शक्तिका भी ह्रास होने लगता है। वृद्धावस्थाके पूर्वार्द्धमे तो धारणा-शक्ति और भी प्रबल हो जाती है। अतः कोई ऐसा समय निश्चित करना असम्भव है, जब कि ज्ञान-शक्तिका ह्रास होता हो।"

लाइण्डहर्स्टने ठीक नब्बे वर्षकी अवस्थामे हाउस आफ लार्ड्समे एक बड़ी ही सुन्दर और योग्यता-पूर्ण वक्तृता दी थी। पामर्स्टन जितने अधिक दिनो तक इंगलैण्डका प्रधान मंत्री रहा, उतने अधिक दिनो तक लार्ड लिवरपूलको छोड़ कर और कोई नही रहा। पर तो भी पामर्स्टन सदा बहुत ही योग्यता-पूर्वक प्रधानमंत्रीका काम करते रहे और इक्यासी वर्षकी अवस्थामे मरे। मरनेके समय तक वे प्रधान मंत्री ही थे। सर एडवर्ड कोक अस्सी वर्षकी अवस्थामे घोड़े परसे गिरनेके उपरान्त साल भर तक जीते रहे और इस बीचमे उन्होने कई कानूनी किताबें तैयार कीं। लिफ्राय नब्बे वर्ष की अवस्था तक आयरिश बेंचके लार्ड चीफ जस्टिस थे। इस पर अखबारो तथा हाउस आफ लार्ड्समे कई बार आपत्ति भी हुई थी। पर उस समय तक भी उनके फैसले बराबर अच्छे ही होते थे। इसीलिये एक बार स्वर्गीय लार्डचेम्सफर्डने हाउस आफ लार्ड्समे कहा था कि मानसिक शक्तिके विकाशके आरम्भ और अन्तके लिये कभी यह न समझना चाहिए कि वह बहुत देरमे हुआ है। अर्थात्

बहुत ही वृद्धावस्थामे भी उसका विकाश हो सकता है और बहुत ही वृद्धावस्था तक वह बनी भी रह सकती है।

काम करनेसे ही प्रसन्नता होती है, निकम्मे रहनेसे नही। लोहेको जितना जंग नही खाता, उतना आदमी को निकम्मा रहना खा जाता है। निकम्मे रहनेसे जीवन-शक्तिका ह्रास और नाश होता है। निकम्मे आदमीके लिये कोई आधार नही रह जाता और इसीलिये उसका अस्तित्व भी मिट जाता है। जो मनुष्य कुछ पढ़ता-लिखता, सोचता-विचारता या करता धरता न हो, उसका जीवन बुरी तरह नष्ट होता है। काम न करनेवाला आदमी बहुत ही बुरा होता है। विशेषतः वृद्धावस्थामे तो कामकी और भी अधिक आवश्यकता होती है। जिस प्रकार फूलोकी सबसे अच्छी पँखड़ियाँ वही होती हैं, जो सबके अन्तमे खिलती हैं, उसी प्रकार मनुष्यके सबसे अच्छे कार्य्य वही होते है, जो वह अन्तिम अवस्थामे करता है।

इस सम्बन्धमे लोगोको जेम्स वाटको अपना आदर्श बनाना चाहिए। युवावस्थामे जब कि वह तरह-तरहके आविष्कार किया करता था, प्राय; रोगी रहता था। अपने रोगोसे वह यहाँ तक दुखी था कि एक बार अपने प्राण तक देनेके लिये तैयार हो गया था। पर प्रौढ़ावस्थामे उसके रोग कम हो गये और उसकी वृद्धावस्था बहुत अच्छी तरह कटी। वह खूब किताबे पढ़ता, अच्छे अच्छे सिद्धान्त स्थिर करता और तरह-तरह के नये आविष्कार करता था। बयासी वर्षकी अवस्थामे वह सर वाल्टर स्काट और लार्ड जेफ्रे आदि से मिला था। दोनोंने उसकी आनन्द-पूर्ण वृत्ति और बहुज्ञताकी बहुत ही प्रशंसा की थी। जो विषय छिड़ता, उसीमे वह अपने पाण्डित्य और पूर्ण

ज्ञानका परिचय देता था। तिरासी वर्षकी अवस्थामे वह तरह तरहके फोटो बना कर अपने मित्रोको दिया करता था। उसे बहुत अधिक विषयोका बहुत अधिक ज्ञान था। वह बहुत ही असाधारण मनुष्य था। वह किसीको दिखलानेके लिये नही, बल्कि ज्ञान और विद्याके प्रति अपने अनुरागके कारण सदा बहुत ही शान्ति-पूर्वक काम किया करता था। उसके तथा उसके समान अन्य महापुरुषोंके जीवन-क्रमसे हमें यह शिक्षा मिलती है कि यदि हम सदा शुद्धता-पूर्वक अपना जीवन व्यतीत करे और सत्यता-पूर्वक अपने कर्त्तव्योका पालन करते रहे, तो हमारी वृद्धावस्था बड़ी ही प्रसन्नता और सुखसे कटेगी और हमे स्थायी शान्ति मिलेगी।

बहुत ही वृद्धावस्थामें भी उसका विकाश हो सकता है और बहुत ही वृद्धावस्था तक वह बनी भी रह सकती है।

काम करनेसे ही प्रसन्नता होती है, निकम्मे रहनेसे नही। लोहेको जितना जंग नहीं खाता, उतना आदमी को निकम्मा रहना खा जाता है। निकम्मे रहनेसे जीवन-शक्तिका ह्रास और नाश होता है। निकम्मे आदमीके लिये कोई आधार नही रह जाता और इसीलिये उसका अस्तित्व भी मिट जाता है। जो मनुष्य कुछ पढ़ता-लिखता, सोचता-विचारता या करता धरता न हो, उसका जीवन बुरी तरह नष्ट होता है। काम न करनेवाला आदमी बहुत ही बुरा होता है। विशेषतः वृद्धावस्थामे तो कामकी और भी अधिक आवश्यकता होती है। जिस प्रकार फूलोकी सबसे अच्छी पँखड़ियाँ वही होती हैं, जो सबके अन्तमे खिलती हैं, उसी प्रकार मनुष्यके सबसे अच्छे कार्य्य वही होते है, जो वह अन्तिम अवस्थामे करता है।

इस सम्बन्धमे लोगोको जेम्स वाटको अपना आदर्श बनाना चाहिए। युवावस्थामे जब कि वह तरह-तरहके आविष्कार किया करता था, प्राय, रोगी रहता था। अपने रोगोसे वह यहाँ तक दुखी था कि एक बार अपने प्राण तक देनेके लिये तैयार हो गया था। पर प्रौढ़ावस्थामे उसके रोग कम हो गये और उसकी वृद्धावस्था बहुत अच्छी तरह कटी। वह खूब किताबे पढ़ता, अच्छे अच्छे सिद्धान्त स्थिर करता और तरह-तरह के नये आविष्कार करता था। बयासी वर्षकी अवस्थामे वह सर वाल्टर स्काट और लार्ड जेफ्रे आदि से मिला था। दोनोंने उसकी आनन्द-पूर्ण वृत्ति और बहुज्ञताकी बहुत ही प्रशंसा की थी। जो विषय छिड़ता, उसीमें वह अपने पाण्डित्य और पूर्ण

ज्ञानका परिचय देता था। तिरासी वर्षकी अवस्थामे वह तरह तरहके फोटो बना कर अपने मित्रोको दिया करता था। उसे बहुत अधिक विषयोका बहुत अधिक ज्ञान था। वह बहुत ही असाधारण मनुष्य था। वह किसीको दिखलानेके लिये नही, बल्कि ज्ञान और विद्याके प्रति अपने अनुरागके कारण सदा बहुत ही शान्ति-पूर्वक काम किया करता था। उसके तथा उसके समान अन्य महापुरुषोके जीवन-क्रमसे हमे यह शिक्षा मिलती है कि यदि हम सदा शुद्धता-पूर्वक अपना जीवन व्यतीत करे और सत्यता-पूर्वक अपने कर्त्तव्योका पालन करते रहे, तो हमारी वृद्धावस्था बड़ी ही प्रसन्नता और सुखसे कटेगी और हमे स्थायी शान्ति मिलेगी।

पाँचवाँ प्रकरण।

गुण और प्रतिभाका वंशानुक्रमण।

जिस प्रकार मनुष्योकी किसी एक जातिमे एक ही तरह-के मनुष्य उत्पन्न होते हैं, उसी प्रकार माता-पिताके आगे भी उन्हीकी तरहकी सन्तान उत्पन्न होती है। आजसे हजारो वर्ष पहले भारत, चीन, जापान और अरब आदि देशो-के निवासी जैसे थे, वैसे ही वे आज भी हैं। युरोपकी जर्मन गॉल, आयरिश और वेल्श आदि जातियोकी भी वही दशा है। यद्यपि वर्ण-संकरताके कारण जातियोमे अन्तर पड़ा जाता है, तो भी वह अन्तर उतना अधिक नही होता; उनके मूलगुण वहुतसे अंशोमे प्राय: वैसे ही बने रहते हैं।

यही बात परिवारो और कुलोकी भी है। बालको और बालिकाओका शारीरिक संगठन, स्वभाव और आचार-विचार आदि प्राय: उनके माता-पिताकी उन बातोके अनुरूप ही होता है। यदि वर्ण-संकरता न हो, तो अवश्य ही उनमे किसी प्रकारका अन्तर नहीं पड़ता, बालक प्राय: पिता पर और बालिका प्राय: अपनी माता पर पड़ती है। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि सन्तानमे कुछ विलक्षणताएँ तो माता-पिताकी अपेक्षा कम हो जाती हैं और कुछ बढ़ जाती हैं। परिवारो और कुलोमें सम्भव है कि यह अन्तर कुछ शीघ्र बढ़ जाय, पर समाजमे उतनी शीघ्रता-पूर्वक अन्तर नही होता और इस प्रकार प्रत्येक जाति-के विशिष्ट-गुण प्राय: ज्योके त्यो बने रहते हैं।

कभी-कभी परिवारोमे कुछ विशिष्ट-गुण कई-कई पीढ़ियों तक वने रहते हैं। कभी-कभी वे गुण या विशेषताएँ लड़के या लड़कीमे नही पाई जाती और पोते या पोतीमे फिर आ जाती है। युरोपके एक प्रतिष्ठित कुलमे, प्राय. डेढ़, दो-सौ वर्ष हुए अनाचारके कारण इण्डियन रक्त मिल गया था। तवसे उस कुलमे कभी-कभी एकाध काला लड़का या लड़की उत्पन्न हो जाती है, हॉ, शेष परिवार गोरा ही रहता है। आप किसी प्रतिष्ठित और सम्पन्न परिवारमे चले जाइए और उसकी कुछ पीढ़ियोके चित्र देखिए, उन सवमे आपको प्राय' एक विशेष प्रकारकी समानता मिलेगी। लखनऊके कई नवाबोके चित्रोके देखनेसे भी इस कथनकी पुष्टि हो जायगी।

कभी-कभी यहॉ तक देखा जाता है कि यह समानता विलकुल अन्त समयमे प्रकट होती है। सर थामस ब्रडनने एक ऐसे मृतप्राय मनुष्यको देखा था, जिसका चेहरा ठीक मरनेके समय विलकुल उसके चचाके चेहरेके समान हो गया था। अँगरेजीके कई अच्छे-अच्छे कवियो और लेखकोने भी इसी प्रकार मरनेके समय उत्पन्न होनेवाली समानताका वर्णन किया है। सूदेने एक ऐसे भाई-बहिनको देखा था, जिनकी आकृति आदिमे जीवन-भर आकाश-पातालका अन्तर था; पर वृद्धावस्थामे उन दोनोकी आकृति आदिमे इतनी समानता हो गई थी कि मानो वे दोनो एक साथ उत्पन्न हुए हो। स्वय अपने विषयमे सूदेने उतरती उमरमे लिखा था कि जब मै शीशा देखता हूँ, तव मुझे अपने चेहरेमे अपने पिता के चेहरेकी कुछ रेखाएँ दिखाई पड़ती है। चेहरे और हाथ-पैरकी वनावट तथा वालोका रंग आदि वरावर कई पीढ़ियो तक चलता है। सर वाल्टर स्काटने अपने एक उपन्यास

के एक नायकके सम्बन्धमे लिखा है कि उसकी भौहके पास घोड़े की नालके आकारका एक चिन्ह था और वैसा ही चिन्ह लड़केकी भौंहके पास भी था। डार्विन साहबने अपनी Origin of Species नामक पुस्तकमें तो यहाँ तक लिखा है कि आकृति की विलक्षणताएँ नष्ट हो जाने पर सैकड़ों पीढ़ियोके बाद भी दिखाई पड़ती हैं। विलक्षणताको धारण करनेका प्रयत्न प्रत्येक पीढ़ी करती है और किसी अज्ञात अनुकूल कारणसे किसी पीढ़ी-को उसमे सफलता भी हो जाती है।

जिस प्रकार शारीरिक विशेषताएँ कई-कई पीढ़ियो तक चलती है, उसी प्रकार नैतिक विशेषताएँ भी अनेक पीढ़ियो तक देखी जाती हैं। बहुतसे परिवार ही ऐसे होते हैं, जिनके सब आदमी बड़े बकवादी होते हैं और बहुतसे परिवार ऐसे भी होते हैं, जिनके लोग बहुत ही शान्त होते और बहुत कम बोलते हैं। यही दशा मानसिक गुणोकी भी है। नैतिक और मान-सिक सभी गुण वशानुक्रमिक होते हैं, यह बात दूसरी है कि किसी विशेष कारण-वश वे गुण कुछ पीढ़ियोमे लुप्त हो जायँ। बहुतसे प्राचीन कुल ऐसे है, जिनमे बीच-बीचमे प्राचीन विशेषता प्रकट हो जाती है। भारतवर्षमे इसके सम्बन्धके प्रमाण बहुत ही सहजमे मिल सकते है। कर्म्मनिष्ठ और कुलीन ब्राह्मण-कुलोमे बहुधा कर्म्मनिष्ठ विद्वान् और सुयोग्य ब्राह्मण ही होते है। वीर क्षत्रिय-कुलोकी वीरताका नाश हजारो वर्षोंमे भी नही हुआ है। वैश्य-वर्ग वाणिज्यके लिये अधिक उपयुक्त पाया जाता है; उससे वीरताकी आशा करना प्रायः निष्फल ही होगा। निकृष्ट सेवाके लिये शूद्र ही सदा तैयार और साथ ही उपयुक्त होगा। उक्त

तीनो वर्णोंमेसे किसी वर्णके आदमीसे आप कभी वैसी सेवाकी आशा नहीं कर सकते।

राजनीतिज्ञता, देश-हितैषिता और विद्वत्ता आदिमे भी पारिवारिक गुण कभी नष्ट नही होते। यही कारण है कि सदा और सब अवसरो पर शुद्ध और श्रेष्ठकुलके लोगोका ही अधिक आदर होता है और इसीलिये उसकी रक्षाके लिये भी लोग इतना प्रयत्न करते हुए देखे जाते है। वाप्पा रावलके वंशजोमेसे अधिकांश बड़े ही वीर, पराक्रमी, तेजस्वी, उच्चाकांक्षी और लड़ाके ही हुए। सर सालार जंगकी चार-पाँच पीढ़ियो तकके लोग बराबर हैदराबादके प्रधान मंत्री ही होते गये। अन्य देशी रियासतोमे भी बहुधा एक ही कुलके लोग दीवान होते और बहुत ही योग्यता-पूर्वक अपना काम करते हुए देखे गये हैं। चन्द वरदायीके वंशज भी बराबर कवि ही होते गये। यही कारण था कि प्राचीन आर्योंने अपनी जातियो तथा अन्तर जातियोको शुद्ध और गुणी रखनेके लिये इतने दृढ़ प्रतिबन्ध किये थे और इस कार्य्यमे उन्हे बहुतसे अंशोमे सफलता भी हुई।

पर कभी-कभी यह भी होता है कि किसी बहुत ही अप्रसिद्ध और छोटे कुलमे भी बहुत बड़े लोग उत्पन्न हो जाते हैं। एक अवसर पर जब फ्रान्सके कुछ बड़े-बड़े रईस अपनी कुलीनता और पूर्व-पुरुषोके सम्बन्धमे बड़ी-बड़ी डींगे हाँक रहे थे उस समय मारशल जुलोटने कहा था—"मैं तो स्वयं अपना पूर्व-पुरुष हूँ।" और भी अनेक महापुरुषोके सम्बन्धमे यही बात कही जा सकती है। वे स्वयं ही अपने पूर्व-पुरुष होते है। ऐसे ही महापुरुष कुछ दिनोके बाद अपने कुलके मूल-पुरुष माने जाते हैं। नेपोलियन कहा करता था कि मैं मिट्टीमेसे अपने लिये सेनापति निकालता

हूँ। स्वयं नेपोलियन भी अवश्य ही कुलीन था, उसका कुल किसी वातके लिये विशेष-रूपसे प्रसिद्ध नहीं था। इसी प्रकार वहुतसे वीर, राजनीतिज्ञ और कवि आदि भी ऐसे हो गये हैं, जो अपने पूर्व-पुरुष आप ही थे—जिनके कुलमे पहले उनके समान और कोई नही हुआ था। बहुत ही साधारण कुलमें भी कभी-कभी प्रतिभा एकबार बिजलीकी तरह चमकती हुई दिखाई देती है। उस कुलमे अचानक एक ऐसा आदमी पैदा हो जाता है, जिसके नामका डंका सारे संसारमे बज जाता है और जिसे लोग सैकड़ो-हजारो वर्षों तक याद रखते हैं। पर ऐसा मनुष्य अपने कुलमे एक ही होता है, उसके मरते ही सारी विभूति नष्ट हो जाती है और वह कुल पहले की तरह ज्योका त्यो रह जाता है।

व्यक्ति-गत विशेष गुण तो बापसे बेटेमे चले जाते है, पर प्रतिभाका ऐसा अवतरण नही होता। विशेषता कुल-गत गुण है और प्रतिभा व्यक्ति-गत। तुलसी और सूर आदि अपने-अपने कुलमे एक ही हुए थे। बीरबल और टोडरमलके कुलमे दूसरा वीबवल या टोडरमल नही हुआ। शिवाजीके कुलमे कोई ऐसा है, जिससे उनके चरणोकी भी समता की जा सके ?

ऐसे अलौकिक गुणोवाले महात्मा किसी विशिष्ट जाति अथवा वर्गमे नही होते, वल्कि सभी जातियो और वर्गोंमे हो सकते है। वे बड़े-वड़े प्रासादोमे भी जन्म ले सकते हैं और छोटी-सी टूटी-फूटी झोपड़ीमे भी। इसीलिये श्रेष्ठ-कुलोमे भी वड़े-वड़े महात्मा उत्पन्न हुए हैं और छोटे तथा नीच कुलोमे भी। प्रतिभाशाली मनुष्योके विषयमे तो सदा यही माना जायगा। हॉ, नैतिक तथा मानसिक गुण अवश्य कुल-गत होते हैं। अधिकांश वड़े-बड़े योद्धा और वीर प्रायः शासक और राजवर्गमें ही मिलेंगे।

पृथ्वीराज चौहान, महाराणा प्रतापसिंह, महाराणा सग्रामसिंह आदि-आदि इसके उदाहरण हैं। कवि प्रायः मध्यम श्रेणीके लोगोमे ही जन्म लेते हैं। तुलसी, केशव, पद्माकर बिहारी, देव आदि इसके प्रमाण हैं। बड़े-बड़े वैज्ञानिक तथा आविष्कर्त्ता भी मध्यम और विशेषत. श्रमजीवी वर्गमे ही होते हैं। प्रचीन कालमे कुछ विशिष्ट वर्गो और कुलोके लोग ही शासन आदि विभागोमे रखे जाते थे। पर जबसे नई सभ्यता फैली और धन तथा ज्ञानकी वृद्धि हुई, तबसे सभी वर्गों और जातियोके लोग उसमे लिये जाने लगे हैं। और तभीसे मध्यम श्रेणीके लोगोमे से भी बहुतसे लोग अच्छे शासक, योद्धा और न्यायाधीश होने लगे हैं। पहले बड़े-बड़े राजनीतिज्ञ और राज्य-संचालक वे ही लोग होते थे, जिनके पूर्वज भारी जमीदार या रईस और उपाधि-धारी होते थे, अथवा जिनके पास फौजे या किले होते थे। अथवा ऐसे नीच और पतित लोग होते थे, जिनकी चापलूसी आदिसे प्रसन्न होकर राजा-महाराजा जिन्हे राज्यमे ऊँचे-ऊँचे पद दे दिया करते थे। पर अब सुशिक्षित, सुयोग्य और सुजन ही राज्योमे ऊँचे-ऊँचे ओहदो पर पहुँचते हैं।

हम ऊपर बतला चुके हैं कि मनुष्योमे स्वभाव और गुण आदि वंशानुक्रमिक होते हैं। कद, शरीरका संगठन, आकृति, बल और अल्प अथवा दीर्घ आयु सभी वंशानुक्रमिक है। डार्विनका मत है कि दीर्घ आयु भी वंशानुक्रमिक है। उसने यह भी कहा है कि वर्णान्धताका रोग पाँच-पाँच पीढ़ियो तक चलता हुआ देखा गया है। हाफेकरने तो यहाँ तक कहा है कि हस्त-लिपि भी वंशानुक्रमिक होती है और रोगोका तो कुछ पूछना ही नही है। वंशानुक्रमिक रोगोंकी तो गिन्ती ही नही हो सकती।

कण्ठमाला, क्षयी, पागलपन, गठिया आदि अनेक रोग वंशानुक्रमिक है। क्षयीवाले अस्पतालके एक डाक्टरका मत है कि क्षयी रोग पितासे पुत्रको और मातासे कन्याको होता है। गठियाका रोग माता या पितासे पुत्र या कन्याको होता है। यदि यह रोग किसी दरिद्रको हो, तो फिर उसकी पूरी खराबी होती है।

दरिद्रता और भिखमंगी भी पुश्तहा पुश्त तक चलती है। माता-पिताके दुर्गुण और दोष भी तीन-तीन और चार-चार पुश्त तक चलते हैं। यह एक ऐसी बात ऐसी है, जिसके कारण प्रत्येक मनुष्यको, यदि स्वयं अपने लिये नही, तो कमसे कम अपने परम प्रिय बाल-बच्चोके लिये ही सही, दुर्गुणो और दुष्कर्मोंसे अवश्य बचना चाहिए और सदा बाल-बच्चोके सामने उत्तम आदर्श उपस्थित करना चाहिए। काम-काजी आदमियोसे काम-काजी आदमी और दुष्टो, पाजियो तथा अपराधियोसे दुष्ट, पाजी और अपराधी ही उत्पन्न होते हैं। एक बार एक दुष्ट लड़केने अपने बूढ़े बापको मार-पीट कर सड़क पर घसीटना आरम्भ किया। बूढ़ेने चिल्ला कर कहा—"बस करो! बस करो! मैं अपने बापको इसी पेड़ तक घसीट कर लाया करता था।" इस प्रकारके पैतृक दोषो और बुराइयोसे बचनेका सबसे अच्छा उपाय यही है कि मनुष्य यथासाध्य अपने आपको वशमे रखे और सब काम विवेकपूर्वक करे। डा० बालने एक बार हाउस आफ कामन्समे कहा था कि आयर्लैण्डके एक ही जिलेमे कई शताब्दियो तक हत्याएँ होती रही। व्रजके अधिकांश चौबे बड़े ही मसखरे हुआ करते है। भोजपुरियोके समान उजड्ड और प्रान्तोमे बहुत ही कम मिलेंगे। बुन्देलखण्डके साधारण निवासी भी प्रायः अच्छे कवि होते हैं। यहाँ तक कि स्त्रियाँ भी अच्छी कविता करती हैं।

मैनपुरी जिलेके भौगाँव नामक गाँवकी मूर्खता बहुत प्रसिद्ध है। बाँकीपुर जिलेके नेउरा ग्रामके अधिक शिक्षित बड़े-बड़े बैरिस्टर और हाईकोर्टके जज ही होते हैं। लखनऊ जिलेके काकोरी और बिलग्राम गाँवके लोग बड़े विद्वान् होते हैं।

शिल्प और कला-कुशलता भी पैतृक ही होती है। एक सुनारका लड़का जितने अच्छे गहने बनावेगा, उतने अच्छे गहने किसी खेतिहरका लड़का न बना सकेगा। उसकी योग्यता मानो स्वाभाविक होती है। सुनारीका काम उसके यहाँ कई पुश्तोसे होता है, इसीलिये वह सुनारीकी शिक्षाके लिये भी अधिक उपयुक्त होता है। भारतमे तो खैर हर एक पेशेवालेकी इसीलिये एक जाति ही बन गई है; पर जिन पाश्चात्य आदि देशोंमे पेशेवरोकी इस प्रकारकी जातियाँ नहीं है, उनमे भी कोई वंश केवल नक्काशीके लिए और कोई चित्रकारीके लिये प्रसिद्ध होता है। उन वंशोंमे गुणी पितासे गुणी पुत्र उत्पन्न होता है। गुणोका पैतृक होना बिलकुल स्वाभाविक है। नागफनी पर जन्मभर गुलाब-जल छिड़कते रहिए, वह सदा नागफनी ही रहेगी और छोहाड़ेके पेड़को किसी ऊसर मैदानमे लगा दीजिए और उसमे एक बूंद भी पानी न दीजिए, तो भी समय पर वह खूब फलेगा। एक विद्वान्‌ने यहाँ तक कहा है कि गुणोके पैतृक होनेमे कोई आश्चर्य्यकी बात नही है, आश्चर्य्य तभी है जब कि गुण पैतृक न हो। पर इसमे सन्देह नही कि पीढ़ियोमे आचारकी उतनी समानता नही दिखाई देती, जितनी आकृति आदिकी दिखाई देती है। इसका मुख्य कारण यह है कि आचार, बहुतसे अंशोमे परिस्थिति, शिक्षा और कठिनाइयो आदि पर अवलम्बित रहता है।

पर तो भी इसमे सन्देह नही कि उच्च और श्रेष्ठ कुलमे जन्म होना बहुत ही अच्छा है ; क्योकि नैतिक और मानसिक गुण रक्त मे मिले होते है। एक विद्वान्ने कहा है कि एक कुलीन मनुष्य बीस ही वर्षकी अवस्थामे जितना प्रतिष्ठित हो सकता है, साधारण मनुष्य चालीस वर्षकी अवस्थामे भी उतना प्रतिष्ठित नही हो सकता। पर श्रेष्ठ कुलमे जन्म लेना तो किसीके अधिकारमे है ही नही, हॉ, यदि वह चाहे तो स्वयं कुछ नैतिक और मानसिक गुण प्राप्त कर सकता है और साधारण कुलोमे उत्पन्न बहुतसे मनुष्य इस प्रकार अच्छी उन्नति करते हुए देखे गये है।

नैतिक विषयोमे तो नही, पर हॉ मानसिक और शारीरिक बातोकी उन्नतिमे वर्ण-संकरतासे भी बहुत कुछ सहायता मिलती है। वर्ण-संकरोमे पराक्रम और दृढ़ता भी खूब होती है। युरोपमे चार्ल्स मारटेल नामका एक प्रसिद्ध व्यक्ति हो गया है, जिसने बहुत ही वीरता-पूर्वक मुसलमानोका मुकाबला करके युरोपमे उनके धर्म्मका प्रचार रोका था। यदि मारटेल न होता तो, आज युरोपवाले ईसाई नही, बल्कि मुसलमान दिखाई देते। वह मारटेल दोगला ही था। प्रसिद्ध वीर विजयी विलीयम (William the Confuerer) रखनीका लड़का था। इंगलैण्डमे कई राजाओकी रखनियोके लड़के बहुत बहादुर और मशहूर हुए हैं। युरोपमे अनेक ऐसे बड़े-बड़े विद्वान्, वैज्ञानिक और दार्शनिक हो गये है, जो दोगले थे।

यद्यपि कभी-कभी किसी नीचकुलमे अचानक कोई प्रतिभाशाली मनुष्य निकल आता है, पर साधारणतः उच्च कुलवालोमे ही अधिक योग्यता देखी जाती है। अब प्रश्न यह है कि बालक मे अधिकांश नैतिक और मानसिक गुण मातासे आते हैं, या

पितासे। प्राय. यही कहा जाता है कि बालककी योग्यता उसकी माता पर निर्भर होती है। एक विद्वान्ने कहा है–"मर्द सदा वैसे ही बनेगे, जैसे औरते उन्हे बनाना चाहेगी। अगर तुम मर्दों को बड़ा और नेक बनाना चाहते हो, तो औरतोके मनमे बड़प्पन और नेकी नक्श करा दो।" नेपोलियन तथा अन्यान्य बड़े वड़े आदमियोका भी यही सिद्धान्त रहा है। स्वयं नेपोलियन अपने सारे गुणोको अपनी माताका ही प्रसाद बतलाता था और वह अपनी माताका बहुत बड़ा आज्ञाकारी था। आज्ञाकारिताका गुण भी उसने मातासे ही सीखा था और यही कारण था कि नेपोलियनने इतना महत्व प्राप्त किया था। औरो पर तो उसका महत्त्व मानो ऊपरसे फट पड़ा था। नेपोलियनके बड़े भाई जोसफमे यह बात नही थी और नेपोलियन सदा उसकी नालायकी की शिकायत किया करता था। लार्ड नेलसन स्वयं बहुत ही वीर और सज्जन था और केवल उसीके कारण उसका एक दुराचारी भाई अर्ल बना दिया गया था।

सबसे बढ़कर बात तो यह है कि बालककी कोमल प्रकृति पर सबसे अधिक प्रभाव परिस्थिति और संगतिका पड़ता है और इन्ही बातो पर उनका बनना बिगड़ना निर्भर है। इसके अतिरिक्त यह भी मानना पड़ेगा कि उसके कुछ गुण जन्म-सिद्ध भी होते है जो सहजमे परिवर्त्तित या नष्ट नही किये जा सकते। बाल्यावस्थामें जब कि उसकी शिक्षा आप ही आप होती रहती है, वह प्राय: अपनी माताके ही अधीन होता है। इसीलिये माताकी ही अधिकाँश बाते उसमे आती हैं। पुरुष तो बड़े होकर कीर्त्ति प्राप्त करते हैं और बड़े नामवर होते हैं। पर जो माताएँ उन पुरुषोको कीर्त्ति प्राप्त करनेके योग्य बनाती हैं, उनका उपकार

कोई नही मानता। बड़े-बड़े योद्धा, बड़े-बड़े कवि और बड़े-बड़े धनवान् प्रायः अपनी माताहीकी कृपासे बड़े बने हैं।

नेपोलियन और क्रामवेलकी तरह छत्रपति महाराज शिवाजी-मे भी अधिकांश गुण उनकी पूजनीया माता जिजाबाईसे ही आये थे। जिजाबाईने ही उनमे दृढ़ता, वीरता, स्वदेश-प्रेम और कर्त्तव्य-परायणता आदि गुण बाल्यावस्थामे कूट-कूटकर भरे थे। राजनीति, शासन और सैन्य-परिचालन आदिकी शिक्षा भी उन्हे जिजाबाईसे ही मिली थी। प्रसिद्ध वीर आल्हा और ऊदलने अपने सारे गुण अपनी माता देवलदेवीसे ही प्राप्त किये थे। बाल्यावस्थामे वही उन्हे पहाड़ो पर घुमाती थी, वही उनसे नाले लंघवाती थी और वही उन्हे पटा, बाँक, तलवार, भाला आदि चलाना सिखाती थी।

बड़े-बड़े आधुनिक युरोपियन कवियो और साहित्य-सेवियोको भी अपनी-अपनी मातासे ही अधिकांश शिक्षा मिली थी। वाल्टर स्काटकी माता एक प्रोफेसरकी लड़की थी और उसे विद्यासे बहुत ही प्रेम था। वह पूर्ण विदुषी थी। ग्रे और काउपरमे उनकी माताने ही काव्य-प्रेम उत्पन्न किया था। सूदेकी माता बड़े ही मृदुल स्वभावकी और समझदार थी। डा० मूरकी माता भी एक प्रोफेसरकी लड़की और बड़ी ही विदुषी थी। लार्ड चीफ जस्टिस मैन्सफील्ड, लार्ड चैन्सलर अर्स्टकिन और ड्यूक आफ वेलिंगटनमे भी सब गुण अपनी-अपनी माताके ही थे। लार्ड ब्रूहमके पिता बहुत ही साधारण मनुष्य थे; पर उनकी माता बहुत ही योग्य और बुद्धिमती थी। बाइरन कविको सारी शिक्षा मातासे ही मिली थी। उसका बाप कुछ भी न था। बाल्या-

वस्थामे उसे माताने ही सब कुछ पढ़ाया-लिखाया था और उसमे विद्यानुराग उत्पन्न किया था।

इस अवसर पर यह बात ध्यान रखने योग्य है कि पिता चाहे कैसा ही अयोग्य और वाहियात क्यो न हो, पर यदि माता सुयोग्य होगी, तो वह अपनी मृदुलता और वत्सलता आदि गुणोके प्रभावसे बालकको अवश्य सुयोग्य, गुणी और विद्वान् बना देगी। पर यदि माताका आचरण निकृष्ट होगा, तो पिताके सद्गुण आदि प्रायः निरर्थक ही प्रमाणित होगे। ऐसे बहुत ही कम बालक अच्छे निकलते है, जिनके पिता योग्य और माता अयोग्य हो। अच्छी माताओके प्रभावकी पूर्ति न तो शिक्षासे हो सकती है, न धनसे और न परिस्थिति आदिसे। सब प्रकारके विचारो और सिद्धान्तो आदिका उद्गम घर ही है और संसारके नैतिक सुधारकी बागडोर सदा माताके ही हाथमे रहती है।

यदि माता और पिता दोनो ही योग्य हो, तो फिर पूछना ही क्या है-फिर तो सोनेसे मानो सुगन्ध मिल जाती है। ऐसे आदमियोको बहुत ही भाग्यवान् समझना चाहिए। लार्ड बेथनके पिता सर निकोलस बेकन एक बहुत बड़े राज-कर्म्मचारी, सुशिक्षित, सदाचारी और राजनीतिज्ञ थे और उनकी माता ग्रीक तथा लैटिन आदि भाषाओकी अच्छी जानकार थी। उन्होने कई ग्रन्थो के अनुवाद भी किये थे। उनकी शेष तीनो बहिने भी बहुत ही योग्य और अनेक भाषाओकी अच्छी पण्डिता थी। महात्मा लूथरकी माता बड़ीही गुणवती और पतिव्रता थी और उनके पिता भी बड़े ही ईमानदार और दृढ़-प्रतिज्ञ थे। गाथेके माता-पिता भी बहुत ही योग्य थे और उसने उन दोनोके कुछ न कुछ गुण ग्रहण किये थे। विशेषतः उसकी माता बहुत ही समझदार और योग्य

थी। गाथेके एक भक्तने एक बार उसकी मातासे वहुत देर तक वार्त्तालाप करनेके उपरान्त कहा था–"अब मैं समझ गया कि गाथे कैसे इस दरजे तक पहुँचा है।"

यद्यपि अनेक ऐसे उदाहरण दिये जा सकते है, जिनमे सुयोग्य पुरुषोके माता-पिता वहुत सुयोग्य थे और जिन्होने दोनोसे गुण प्राप्त किये थे, पर ऐसे उदाहरण और भी अधिक मिलेंगे जिनमे गुणोकी प्राप्ति केवल पिताहीसे हुई हो। "पिता पर पूत" वाली कहावत वहुत ही पुरानी है। पुरुषोमे आकृति और गुण शताब्दियो तक चले चलते है। पहले लार्ड शेफ्ट्सवरीकी आकृति आदिसे उनकी सातवी पुश्तके लार्ड शेफ्ट्सवरीकी आकृति विलकुल ही मिलती थी। राजपूतानेके अनेक राजवंशोके कई-कई पीढ़ियोके चित्र देखनेसे भी इस मतकी पुष्टि होती है।

जो वात आकृति आदिके लिये है, वही गुणोके लिये भी है। गवैये-कुलोमे प्राय सभी अच्छे गवैये होते है और चित्रकार कुलोमे सभी अच्छे चित्रकार निकलते हैं। कवियोके घरमे कवि उत्पन्न होते है और राजनीतिज्ञोके घरमें राजनीतिज्ञ जन्म लेते है। वीरोके घरमे तो वीरोकी उत्पत्तिके असख्य उदाहरण मिलेगे। भारतमे अनेक ऐसे वीर-कुल प्रसिद्ध है, जिनमे पचासो पीढ़ियो तक सब लोग वीर और योद्धा ही हुए है। इस देशके लोगोके मनमे तो गुणो आदिके वशानुक्रमणका सिद्धान्त इतनी दृढ़तासे जमा हुआ है कि इसके सम्बन्धमे किसी प्रकारके उदाहरण या प्रमाण आदि देनेकी आवश्यकता ही नही प्रतीत होती। यहाँ तो इसी सिद्धान्तके आधार पर अलग-अलग जातियोका ही संगठन कर दिया गया है, जिसमे शिल्प और कला आदिकी निरन्तर उन्नति ही होती जाय। पर पाश्चात्य देशोमे भी जहाँ

इस प्रकार पेशेवरोकी अलग जातियाँ नही है, अनेक ऐसे उदाहरण मिलते है, जिनसे गुणोके वंशानुक्रमणवाले सिद्धान्तका पूरा पूरा समर्थन होता है। विलायतमे कई ऐसे कुल है, जिनमे सभी लोग बराबर गवैये, कवि, राजनीतिज्ञ, शासक, साहित्य-सेवी, वकील-बैरिस्टर, इतिहासज्ञ, दार्शनिक, विज्ञान-वेत्ता, नाटककार और नट ही होते हैं। केवल पुरुष ही नही, बल्कि उन कुलोकी स्त्रियाँ भी अपने कुलके विशिष्ट गुणोसे अलंकृत देखी जाती है।

कुछ ऐसे उदाहरण भी हैं, जिनमे विशिष्ट गुण अधिक पीढ़ियो तक नही चलते, बल्कि पितासे पुत्र तक पहुँच कर ही रह जाते हैं। ल्यूथसने वंशानुक्रमण पर जो ग्रन्थ लिखा है, उसमे उसने बतलाया है कि अधिकांश कुलोमे मूल-पुरुषोके विशिष्ट गुण प्रायः तीसरी पीढ़ी तक जाकर रुक जाते है और बहुत ही कम दशाओमे चौथी पीढ़ी तक पहुँचते हैं, पाँचवी पीढ़ी तक उनका पहुँचना तो बहुत ही कठिन होता है। और बहुत-सी दशाओमे तो वे एक ही पीढ़ीमे समाप्त हो जाते हैं, दूसरी पीढ़ी तक भी उनके पहुँचनेकी नौबत नही आती। कुलके किसी एक ही मनुष्यमें कुछ विशिष्ट गुण होते है और उसीके साथ उनका अन्त हो जाता है। बहुतसे लोगोको यह बात एक दिल्लगी मालूम होगी कि वैज्ञानिक अन्वेषण करनेकी शक्ति खूनके साथ पुश्त दर-पुश्त चलती है और इस प्रकारके वंशानुक्रमणके भी अनेक उदाहरण है। फ्रान्सके एक कुलमे लगातार सदा सौ वर्षों तक बराबर सब लोग ज्योतिषी ही हुए थे। एक कुलमे चार पीढ़ियो-के आठ आदमी बराबर अच्छे गणितज्ञ ही हुए। एक वंश ऐसा था, जिसमे कई पीढ़ियो तक सभी लोग अच्छे योद्धा और नाविक होते थे, वे लोग जहाजो पर अच्छे-अच्छे पद पाते थे और बड़े-

बड़े युद्धोमे जाकर वीरता-पूर्वक लड़ते थे। लड़ाईमे उनके हाथ-पैर कट जाते थे और घर आकर वे लोग अपने लिये बढ़ईसे काठ की टाँगे बनवाया करते थे। तबसे प्रसिद्ध हो गया कि "काठकी टाँगे भी किसी कुलमे पीढ़ियो तक चलती है।"

इन सब उदाहरणोंसे विदित होगा कि वंशानुक्रमण जगत्-व्याप्त है। शारीरिक सगठनमे तो यह बहुतसे अंशोमे जगत्-व्याप्त है ही। किसी परिवारके लोग कंजे और किसीके भेगे ही होते है। किसी परिवारके लोगोका चमड़ा बहुत मोटा होता है और किसीका पतला। किसी परिवारके लोगो के हाथो या पैरोमे छ छ. उँगलियाँ होती हैं। किसी कुलके सभी लोगोकी आँखें बहुत कमजोर होती है और किसी कुलवालोको वर्णान्धताका रोग होता है। किसी वशवालोके हाथ बहुत लम्बे होते है और किसीके पैर। कोई कुल उजड्डोका होता है और कोई बेवकूफोका। इसी प्रकारकी और भी बहुतसी बाते वंशानुक्रमिक होती है। जरमी बेनथमने तो यहाँ तक कहा है कि नीदमे जोर-जोरसे खर्राटे लेना भी वंशानुक्रमिक है। उसने अपने ही परिवारके सम्बन्धमे लिखा है कि "हमारे कुलमे जो खर्राटे न लेता हो, वह अपने माता-पितासे उत्पन्न ही नही है। मेरे पिता खर्राटे लेते थे, मेरी माता खर्राटे लेती थी और यदि मेरा भतीजा खर्राटे न ले तो उसे मक्कार समझना चाहिए।" एकबार दो कुलीन महिलाओने धनके लालच-से दो मूर्खोंके साथ विवाह कर लिया था। उनके यहाँ पाँच पीढ़ियो तक सभी बच्चे महामूर्ख होते रहे। स्मालेटके एक उपन्यासके नायकने सड़क पर पड़ी हुई एक छोटी जिप्सी नामकी बालिका पाई थी। उसने उसे अपने घर लाकर रखा और सब प्रकारसे युरोपियन ढङ्गकी शिक्षा दी और उसे विलायती ढङ्गका

नाचना-गाना भी सिखलाया। जब वह सयानी हुई, तब लोगोंने समझा कि अब इसमे कुछ भी जिप्सीपनकी बू नही रह गई। एक बार वह कुछ स्त्रियोंके पास ताश खेलने गई। वहाँ एक स्त्रीने खेलमे उसके साथ कुछ बेईमानी की। इस पर बिलकुल जिप्सियो की तरह वह बिगड़ खड़ी हुई और सबको कोसती-काटती हुई वहाँसे उठकर चलती बनी। इसीलिये कहा है—

जाकर जौन सुभाव, छूटै नहि जीसों।
नीम न मीठी होय सिंचो गुड़-घीसो॥

केवल एक चीज ऐसी है जो वंशानुक्रमिक नही होती और वह चीज़ है प्रतिभा, विशेषतः काव्य-सम्बन्धी प्रतिभा। और गुण तो वंशानुक्रमिक होते है, पर यह गुण व्यक्ति-गत होता है और जिस व्यक्तिमे होता है उसीके मरनेके साथ नष्ट हो जाता है। जो लोग प्रतिभाशाली होते है, उनके माता-पितामे कोई असाधारण या विलक्षण बात नही पाई जाती। अपने वंशमे ऐसे प्रतिभाशाली मनुष्य अकेले होते हैं। उनके लड़के-पोतोमे कुछ भी प्रतिभा नही होती और वे बहुत ही साधारण मनुष्योकी कोटिमे चले जाते है। न तो उनके समान योग्य और प्रतिभाशाली पुरुष उनके कुलमें कोई पहले होता है और न उनके बाद। माता-पितासे उन्हे किसी प्रकारका ज्ञान और बुद्धि-बल नही प्राप्त होता, वे स्वयं योग्यता और पाण्डित्य अर्जित करते हैं। काशीके अनेक स्वर्गीय महामहोपाध्याय इसी कोटि के थे। म० म० पं० शिवकुमार शास्त्री, म० म० पं० रामभिश्र शास्त्री, म० म० पं० गंगाधर शास्त्री और पं० मथुराप्रसाद मिश्र आदिकी ऐसे ही लोगोमे गणना की जा सकती है।

यह मानना ही पड़ेगा कि प्रतिभाकी व्याख्या नहीं हो सकती और न उसके मूलका ही पता लग सकता है। बड़े-बड़े कवियोका

उदय धूमकेतुओंकी तरह होता है, वे आते है, अपने मार्गसे होते हुए निकल जाते है और हम लोगोंको आश्चर्य्य-सागरमे छोड़ जाते है। कालिदास, भवभूति और माघ ; केशव पद्माकर और भूषण; चासर, स्पेन्सर और शेक्सपियर सब ऐसे ही थे। बिहारी, देव और सूदन आदि साधारण माता-पिताके पुत्र थे। उर्दूके प्रसिद्ध कवि सौदाके पिता सौदागर थे और कहा जाता है कि इसी लिये उन्होने अपना उपनाम "सौदा" रखा था। मीर सोजके पिता अच्छे तीरंदाज थे, पर कवितासे उनका कोई सम्बन्ध नही था। मीर दर्दके पितामे कोई विलक्षणता या विशेषता नही थी। सैयद इशाके पिता और बातोमे भले ही योग्य हो, पर काव्यकी दृष्टिसे उनमे कोई विशेषता नही थी। गालिबके पिता मामूली सिपाही थे। और इन लोगोंके वंशज भी कवि नही हुए। यदि प्रतिभा वंशानुक्रमिक होती, तो इनकी सन्तान और भी अधिक प्रतिभाशाली होती।

बहुतसे महापुरुष ऐसे हुए है, जिनमे उनके माता-पिताका एक भी विशिष्ट गुण नही था। बल्कि उनके आचरण उनके माता-पिताके आचरणोंके बिलकुल विपरीत थे। इसीलिये बहुतसे लोगोका यह भी विश्वास है कि योग्य पुरुष सदा योग्य पिताके ही घर जन्म नही लेते और न योग्योंके आगे योग्य सन्तान ही होती है, इसीलिये बहुतसे महापुरुषोंको अपने माता-पिताकी इच्छाके विरुद्ध और अपने अनुकूल मार्गका अवलम्बन करना पड़ा है। पिताको पुत्रके मार्गमे बाधा डालने मे सफलता नहीं होती। उधर योग्य पिता अपनी अयोग्य सन्तानसे परम दुखी देखे जाते है। प्रसिद्ध सम्राट् मारकस, ओरेलियस गुणों और विद्याकी खान था, पर उसका पुत्र

सम्राट कामाडेस बड़ा ही निर्दयी और पूरा पिशाच था। सिसरोका पुत्र मारकस वडा भारी शराबी था। कमाल यद्यपि अयोग्य नही था, तो भी उसके सिद्धान्त कबीरके सिद्धान्तोंके बिलकुल विपरीत थे। फ्रान्सके काउण्ट जोकेलिनका लड़का बडा भारी ऐयाश और शराबी था। उसने अपने बापकी सारी रियासत चौपट कर दी और अन्तमे उसे भूखों मरना पड़ा। प्रथम एडवर्ड बड़े ही सज्जन और वीर थे, पर उनके पुत्र द्वितीय एडवर्डका चरित्र बड़ा ही निन्दनीय था। सर थामस मूरका लड़का बड़ा ही मूर्ख था। लूथरका लड़का भी उद्दण्ड था और अपने पिताकी आज्ञा नही मानता था। ओलीवर क्रामवेलका लड़का रिचर्ड क्रामवेल बड़ा नालायक था। एडिसनकी एक मात्र लड़कीमे जरा भी समझ नही थी। लार्ड चेस्टर फील्डने अपने पुत्रको उपदेश देनेके लिये जो पत्र लिखे थे, उनकी एक बहुत अच्छी पुस्तक बन गई है, पर तो भी उनका लड़का न सुधरा। सर वाल्टर स्काटका लड़का फौजमे मामूली अफसर था। वह कहा करता था कि मेरे पिताने साहित्य-क्षेत्रमे जो कीर्त्ति प्राप्त की है, उससे मैं लज्जित हूँ और मैंने आज तक उनका एक भी उपन्यास नही पढ़ा। काशीके एक बहुत बड़े और प्रतिष्ठित पण्डितका लड़का, जो स्वयं भी थोड़ा बहुत विद्वान् है, अपनी लाखों रुपयोकी सम्पत्ति नष्ट करके गलियोमे मटर-चाप बेचता और लोगोसे गाली-गलौज करता फिरता है। इसीलिये एक फ्रान्सीसी कहावत है कि "वही बालक अच्छा है, जिसका बाप ऐरा-गरा है। उस बालकको बहुत भाग्यवान् समझना चाहिए, जो केवल अपने पिताके गुणोंके कारण ही आदरणीय न हो।"

शिल्प और कलामे उन्नति करनेवाले लोग प्रायः दरिद्र ही होते हैं और आरम्भमें उन्हे अनेक बड़ी-बड़ी कठिनाइयोका सामना करना पड़ता है। रेनाल्डने कहा है कि किसी शिल्पकारके घरमे जन्म लेनेसे ही मनुष्य शिल्पकार नही बन सकता, जो अवसर पाकर अच्छा प्रयत्न करता है वही शिल्पकार हो सकता है। इसमे सन्देह नही कि जिसका जन्म किसी शिल्पकारके घर होगा, उसमे शिल्पके सम्बन्धमे कुछ स्वाभाविक गुण अवश्य होगा, परन्तु उसकी वृद्धि और विकाशके लिये निरन्तर परिश्रम करनेकी आवश्यकता होगी। रम्ब्राण्ट नामक एक प्रसिद्ध चित्रकारने अपने पुत्र टाइटसको चित्रकारी सिखलानेके लिये बहुत दिनो तक पूरा परिश्रम किया, पर टाइटसको कुछ भी न आया। टाइटसने जो ख्याति प्राप्त की वह केवल यही थी कि यह प्रसिद्ध चित्रकार रम्ब्राण्टका लड़का है। प्रसिद्ध गवैये मोजर्टके लड़केका हाल भी सुनने लायक है। जब क्लैंक्विनी नामक प्रसिद्ध गवैया मिलन नगरमे गया तब वहाँ उसे मोजर्टके लड़केसे मिलनेका शौक हुआ। वह उसके आफिसमे पहुँचा और साहब-सलामत करके उसे ऐसे कीर्त्तिशाली पिताके घर जन्म लेने पर बधाई देने लगा। मोजर्टका लड़का जरा उजड्ड था और उसे बात-चीत करनेका शऊर नहीं था। उसकी बातोसे क्लेक्विनीको बहुत आश्चर्य्य हुआ और उसने पूछा—"क्यो साहब! आप क्या सचमुच मोजर्टके ही लड़के है?" उत्तर मिला—"हाँ।" उसने कहा—'तब तो आपने इस कला-कुशल देशमे एक पूज्य और सुयोग्य पिताकी छायामे जन्म लिया है।" उत्तर मिला—"ऊँह।" उसने पूछा—'आप पियानो या वायोलिन तो बहुत अच्छा बजाते होगे?"

उत्तर मिला—"तुम क्या मुझे शैतान समझते हो ? मैं गाना-बजाना कुछ भी नही पसन्द करता।" उसने पूछा—"तो क्या आप गवैये नही है ?" उत्तर मिला—"नही, मैं महाजन हूँ।" यह कहकर उसने जमीन पर पड़ी हुई अशरफियोंके ढेरमेसे मुट्ठी भर अशरफियाँ उठा ली और खूब खनखनाते हुए उन्हे रोकड़िएके ऊपर बरसा दिया और कहा—"मै यह संगीत पसन्द करता हूँ।" क्लैंक्विनी को इससे बड़ी ही घृणा हुई, वह तुरन्त उठकर वहाँसे चल दिया।

अच्छे-अच्छे और प्रसिद्ध कुलोका अन्त बड़ी ही बुरी तरह होता है। और बड़े-बड़े महापुरुषोकी कीर्त्ति प्राय: उनके लड़के नष्ट कर देते है। मेवाड़के राजवंशको ही लीजिए। बाप्पा रावलसे लेकर महाराणा प्रताप तक तो मेवाड़की महत्ता और स्वतन्त्रता सब प्रकारसे बनी रही। पर महाराणा प्रतापको पहलेसे ही अपने पुत्रसे कोई विशेष आशा नही थी। और न महाराणा अमरसिहने उनके प्रणोका निर्वाह ही किया। और आगे चलकर उनके वंशज तो और भी दुर्बल और पराधीन होते गये। दिल्लीके मुगल-वशका अन्त करनेवाले मुहम्मद शाह और शाह आलम द्वितीयकी दुर्बलता, अयोग्यता और परवशताका हाल पढ़कर दुःख होता है। मुहम्मद शाह इतना दुर्बल था कि और तो और स्वयं अपने शरीर तककी रक्षा न कर सकता था। शाह आलम द्वितीयकी तो आँखे तक निकलवा ली गई थी। और अन्तमे द्वितीय अकबर और द्वितीय बहादुर शाह नाममात्रके सम्राट् रह गये थे। महलमे पड़े-पड़े ऐयाशी, शायरी, और बटेरबाजी आदिके सिवा उन्हे और कुछ आता ही न था। यद्यपि अवधके नवाब भी अँगरेजोकी कृपासे बादशाहोके दरजे तक पहुँच गये थे और कुछ समय तक उनकी अच्छी चल गई थी; पर

वाजिद्अली शाहने अपनी ऐयाशी और अयोग्यताकी पराकाष्ठा करके अवधको अँगरेजी राज्यमे मिलवा दिया। खुद मटिया बुर्जमे नज़रबन्द कर दिये गये और बारह लाख रुपये सालाना पेन्शन मिलने लगी। उन्होने उसीको गनीमत समझा और "सन्तोषं परम सुख" के न्यायानुसार नजरबन्दीमे भी खूब ही गुलछर्रे उड़ाये। छत्रपति महाराज शिवाजीने अपने पुत्र शम्भाजीकी परम दुराचारिता और अयोग्यतासे बहुतही दुखी और अप्रसन्न होकर स्वय उन्हे पानोलके किलेमे कैद कर दिया था। शम्भाजीका आचरण परम निन्दनीय था और उनमे कुछ भी योग्यता न थी। इसी लिये बड़े-बड़े सरदार उनसे असन्तुष्ट रहते थे। करनाटकसे राज-स्व आना बन्द हो गया था और उधर रिआया भी बहुत ही दुखी हो गई थी। इसके बाद दक्षिणमे पेशवाओका जमाना आया। पेशवा-वंशके प्रधान सस्थापक बाजीराव पेशवा बड़े ही योग्य थे और वे उत्तर-भारत तकमे अपना राज्य स्थापित करना चाहते थे। राणा सेन्धिया और मल्हारराव होलकर उनके सेनापति थे। उन्होने अनेक नये प्रान्तों पर अधिकार भी किया था। उनके पुत्र बालाजी बाजीराव भी बहुत योग्य थे। बालाजी बाजीरावके पुत्र माधवराव भी अच्छे वीर और योग्य शासक थे। पर माधवरावके बाद ही पेशवाईका ह्रास होने लगा और अन्तमे द्वितीय बाजीरावकी अयोग्यताके कारण उसका अन्त हो गया। उन्होने अपने आपको अँगरेजोके अधीन कर दिया और आठ लाख पेन्शन लेकर बिठौरमे रहना स्वीकार किया। महाराज रणजीतसिहके पुत्र खड्गसिह भी प्रायः अयोग्य ही थे। उनमे अनेक दुर्गुण थे। सिख-साम्राज्यके नाशके पूर्ण नहीं तो आंशिक कारण वे अवश्य थे।

एक विद्वान्‌ने कहा है कि राजा लोगोको केवल उपाधियाँ दे सकता है ; वह उन्हे योग्य नहीं बना सकता। राजा चाहे किसी बन्दरको लोगोसे "शेर" भले ही कहलवा ले, पर वह वास्तवमें उसे शेर नही बना सकता। किसी उच्च कुलमे या बहुत बड़े आदमीके घरमे जन्म लेनेसे कुछ भी नही हो सकता। वास्तवमे मनुष्यके लिये गुणो और योग्यताकी आवश्यकता होती है। गुणो और योग्यताका होना जहाँ बहुतसे अंशोमें अपने प्रयत्न और परिश्रम पर अवलम्बित हैं वहां वह कुछ अशोमे ईश्वरीय देन भी है। राजा प्रथम जेम्स धन लेकर लोगोको बड़ी-बड़ी उपाधियाँ दिया करता था, पर साथ ही वह यह भी कहता था—"मैं किसीको लार्ड तो बना सकता हूँ, पर उसे भलाआदमी नही बना सकता।" धन, बल, अधिकार या उपाधि आदिसे ही कोई भलाआदमी और योग्य नही हो सकता। बहुत ही तुच्छ कुलमे जन्म लेनेवाला मनुष्य भी अपने सद्‌गुणो और सत् कार्योंके कारण श्रेष्ठ बन सकता है और बहुत श्रेष्ठ कुलमे जन्म लेनेवाला मनुष्य भी अपने दुर्गुणो और दुष्कर्मोंके कारण परम नीच बन सकता है। उच्च और श्रेष्ठ बनना बहुतसे अंशोमे प्रत्येक मनुष्यके अपने अधिकारकी बात है। पर साथ ही हम यह भी मानते है कि मनुष्यके बनने-बिगड़नेमे परिस्थिति आदि भी बहुतसे अंशोमे कारणीभूत होती है। मनुष्य कालानुसार ही उन्नति करते हैं। यदि समय अनुकूल हो और मनुष्यमे बल तथा दृढ़ता हो तो वह अनेक कठिनाइयोको पार करता हुआ उन्नतिके शिखर तक पहुँच जायगा ; और बहुतसे अंशोमे उन्ही कठिनाइयोका अभाव लड़केको अयोग्य बनानेमे सहायक होगा जिन कठिनाइयोके कारण पिता उन्नति करता है। बहुधा योग्य पुरुषोंके आगे अयोग्य

सन्तान होनेका मुख्य कारण यही है कि सन्तानको रास्ता साफ मिलता है। लड़का देखता है कि मेरे बापने इतनी कीर्त्ति या इतनी सम्पत्ति सम्पादित की है, अब मुझे कुछ करने-धरनेकी आवश्यकता क्या है? और इसी लिये वह अपने साथ अपने पूर्वजोकी कीर्त्ति आदि भी नष्टकर देता है।

आजकल युरोप और अमेरिका आदि इस विषयमे वहुत ही उन्नति पर हैं। विशेषत' अमेरिकामे अधिकांश महापुरुप ऐसे ही हो गये हैं जिनका जन्म वहुत ही साधारण वल्कि दरिद्र गृहस्थके यहाँ हुआ है और जिन्होंने केवल अपने ही बाहु-बलसे बहुत अधिक कीर्त्ति और महत्ता प्राप्त की है। महात्मा वाशिंगटन एक साधारण किसानके लड़के थे। शेरमन मोची था, नाक्स जिल्द-साज था, ग्रीन लोहार था और हैमिल्टन एक साधारण क्लर्क था। अब्राहम लिंकन पहले मल्लाही करता था। इन सबके पूर्वज न तो उच्च वशके थे और न धनवान्। सच तो यह है कि महत्ताका कुल और धनसे कोई विशेष सम्बन्ध ही नही है। जो मनुष्य खूब काम करता है वही महापुरुष होता है। ऐसे मनुष्यके मनमे बहुत उच्च विचार उत्पन्न होते हैं। वह अच्छे-अच्छे ग्रन्थ बनाता और बड़े-बड़े काम करता है और इस प्रकार ससारमे अपनी अक्षय कीर्त्ति छोड़ जाता है। अपने भाग्य, अपने वैभव और अपने महत्त्वका वह स्वय निर्म्माता होता है। और दूसरा मुख्य कारण यह है कि यह बहुत अधिक अरिश्रम और खूब विचार करता है। और वास्तवमे ससारमे ऐसे ही मनुष्यका आदर होता है जो स्वय अपनी ही बुद्धि और अपने बलसे महत्त्व और कीर्त्ति प्राप्त करता है।

प्रतिभाशाली मनुष्योंके विषयमे एक और बहुत विलक्षण बात

यह है कि वे प्राय. निःसन्तान होते हैं। ऐसे लोग या तो विवाह ही नही करते और यदि करते भी हैं तो उससे उन्हे कोई सन्तति नही होती। यदि संयोग-वश उन्हे बाल-बच्चा हो भी तो वह अधिक दिनो तक नही जीता, शीघ्र ही मर जाता है। और यदि जीता भी रहता है तो प्राय' नालायक होता है। मि० कोथरने जॉन्सनकी जो जीवनी लिखी है उसमे उन्होने बतलाया है कि अंग-रेजीके महा कवियोंको तो कोई सन्तति ही नही हुई और बहुत से दूसरे अच्छे-अच्छे कवियोको भी नही हुई। शेक्सपियर, जॉन्सन, मिल्टन, ड्राइडन, रो, एडिसन, पोप, स्विफ्ट, ग्रे, गोल्डस्मिथ और काउपरका कोई नाम-लेवा नही था। लार्ड वाइरन और सर वाल्टर स्काटके भी कोई पुत्र न था। कदाचित् विधिने कुछ ऐसी विलक्षण योजना ही कर दी है कि प्रतिभाशाली मनुष्यकी कृतियॉ उनकी सन्तानका काम दे—उन्हे कोई लड़की या लड़का न हो। कई ऐसे अँगरेज विद्वान भी हो गये है जिनका वंश केवल एक दो या चार पीढ़ी तक चलकर रह गया और अब जिनके वशमे कोई पुरुष नही है, हॉ, उनकी कन्याओंके कुछ वंशज हैं। उक्त महानुभावोमेसे कुछने तो विवाह ही नही किया था। उनके ग्रन्थ-रूपी पुत्र ही अवशिष्ट रहे। बेकनने माता-पिता और सन्तान पर जो निबन्ध लिखा है उसमे एक स्थान पर उसने कहा है—"निःसन्तान लोगोने ही बहुत बड़े-बड़े ग्रन्थ लिखे है और बड़े-बड़े कामोकी नीव डाली है। जब उन्होने अपने आपको शरीर द्वारा अपनी प्रतिमा तैयार करनेमे असमर्थ पाया तब उन्होने अपने मनकी प्रतिमा तैयार की।"❀

❀ आत्मा वैजायते पुत्रः।—मनु।

छठा प्रकरण ।

साहित्यिक रोग या बहुत अधिक मानसिक श्रम ।

हम बतला चुके है कि महापुरुष सदा बहुत अधिक काम करनेवाले होते है। उनमेसे कुछ जल्दी फूलते हैं और कुछ देरसे। कुछ ऐसे भी होते है जो कभी फूलते ही नही। वे कभी प्रौढ़ नही होते, महत्व प्राप्त करनेके प्रयत्नमे ही उनका दम निकल जाता है। कुछ लोग ऐसे भी होते है जो बहुत अधिक प्रयत्न करके अपने उद्दिष्ट स्थान या सफलताके शिखर तक तो पहुँच जाते हैं, पर वहाँ पहुँचनेके लिये उन्हे जो बहुत अधिक परिश्रम करना पड़ता है उसीके कारण, सफल-मनोरथ होते ही वे परलोकगामी हो जाते है। घोड़ा घुड़-दौड़मे जीत तो जाता है पर दौड़के समाप्त होते ही तुरन्त मर जाता है।

आक्सफोर्डके एक विद्यार्थीने अपने एक मित्रके सम्बन्धमे एक बार कहा था कि वह नित्य पन्द्रह घण्टे तक पढ़ा करता था, पर अन्तमे उस बेचारेका दिमाग खराब हो गया। उसका एक और मित्र परीक्षाके लिये बहुत अधिक प्रयत्न और परिश्रम करने के कारण ही मर गया था। डा० गारनटेने एक ग्रन्थ पढ़नेके सम्बन्धमे कहा था—"मैंने उसे एक महीनेमे खतम किया, पर उसने भी मुझे करीब-करीब खतम ही कर दिया।"

जो लोग साहित्य-क्षेत्रमे कीर्त्ति प्राप्त करना चाहते हैं उनके भाग्यमे सुख और चैन नही होता। श्रेष्ठ कवि बनना मानो आत्म-बलि करना है। किसीने कहा है कि ज्ञान-वृक्षका फल अवश्य ही बहुत मीठा होता है, परन्तु उसे प्राप्त करना बहुत ही कठिन और कष्ट-प्रद है, बल्कि कभी कभी तो उसके लिए मनुष्यको अपने प्राण तक गँवाने पड़ते हैं। साहित्यिक कीर्त्तिके मुकुटके नीचे छिपा हुआ काँटोका एक वृन्त होता है और ज्ञनाकी वृद्धि बहुधा दुःखकी वृद्धिका कारण होती है।

प्रतिभाको एक विद्वान्ने एक प्रकारका पारीका ज्वर बतलाया है। जब यह ज्वर चढ़ता है तब मनुष्यको अपने शरीरकी सुध नही रह जाती। प्रतिभाशाली मनुष्य एक प्रकारके आवेशमे आ जाता है और उसी आवेशकी दशामे उसके द्वारा बहुत बड़े-बड़े काम हो जाते है। उसका दिमाग उसके शरीर पर एक प्रकारके बिजलीके यंत्रका काम करता है और शरीर तथा ज्ञान-तन्तुओ पर एक प्रकारका आघात पहुँचाता है। वह आघात जितना ही प्रबल होता है उससे उतनी ही अधिक और उतनी ही स्थायी शिथिलता भी आती है। इस प्रकार उससे शारीरिक शक्तियोका निरन्तर क्षय होता रहता है और उसकी पूर्त्ति केवल बहुत अधिक विश्रामसे ही हो सकती है। और यदि विश्राम न हो तो शारीरिक शक्तियोका पूरा-पूरा नाश हो जाता है। सूदेने एक ऐसी बहुत ही अच्छी स्त्री-कविका विवरण लिखा है जो सत्रह वर्षकी अवस्थामे ही परलोक सिधार गई थी।

एक पाश्चात्य गीत बनानेवालेके सम्बन्धमे प्रसिद्ध है कि जब कभी वह कोई अच्छा गीत बनानेको होता था तब उसे एक प्रकार

का गुप्त रोग होता था। वह गुप्त रोग वास्तवमे उसी मानसिक परिश्रमके कारण ज्ञान-तन्तुओके क्षुब्ध होनेसे होता था जो उसे उस गीतके बनानेमे करना पड़ता था। गाथेने लिखा है कि जब-जब वह कोई अच्छा गीत बनाता था तब-तब वह बीमार होता था। शिलरने अपने सभी अच्छे ग्रन्थ अपने जीवनके अन्तिम पन्द्रह वर्षोंमे लिखे थे, पर उन्ही दिनो वह सदा बहुत अधिक पीड़ित रहा करता था। कारलाइलने एक बार कहा था कि ग्रन्थ-रचना और स्वास्थ्यका बड़ा भारी वैर है। वह जब कुछ लिखने लगता तब उसकी तबीयत खराब हो जाती थी। एक ग्रन्थ लिखनेके समय तो वह मरणासन्न हो गया था। डा० डार्विन एक दिनमे कभी तीन घण्टेसे अधिक काम न कर सकते थे। कभी-कभी तो उन्हे बात-चीत तक करनेमे कष्ट बोध होता था।

मस्तिष्कमे जो क्षोभ उत्पन्न होता है उसके कारण ज्ञान-तन्तु, उदर, हृदय, कलेजा और यहाँ तक कि शरीरके सभी अंग क्षुब्ध हो जाते हैं। ऐसे विचारशील मनुष्य बहुत ही कम मिलेगे जिनका मुख प्रसन्न और प्रफुल्लित दिखाई देता हो। उनका चेहरा पीला पड़ जाता है और बाल सफेद हो जाते है। उनकी उपमा ऐसे ज्वालामुखी पर्वतसे दी जा सकती है जो ऊपरसे बरफसे ढँका रहता है।

मस्तिष्क जिस समय काम करता है उस समय वह हमारी जीवनी-शक्तिको जलाता है। उसमेसे एक प्रकारकी गरमी निकलती है जो हमारी शारीरिक शक्तियोको जलाती रहती है। बल्कि मस्तिष्कको एक प्रकारकी यज्ञ-शाला समझना चाहिए जिसमे हमारी शारीरिक और जीवनी-शक्तिकी आहुति पड़ती

रहती है। यदि हम ठीक समय पर और उचित मानमे खायें, सोये और विश्राम करे, तो उस यज्ञ-शालामे—जिस शक्तिकी आहुति होती है, उसकी पूर्त्ति हो जाती है और उस दशामे मानसिक परिश्रम करना हमारे लिये शुभ प्रमाणित होता है। पर यदि इन सब बातोमे कमी हो, तो वह हमारे लिये बड़ा ही घातक प्रमाणित होता है।

जब कि मनुष्य अपनी सभी शारीरिक शक्तियोका समुचित और समान-रूपसे प्रयोग करता और उन सबको एक-रस रखता है, तब वह नीरोग रहता है। पर पढ़ने-लिखनेवाले लोग अपने अन्य शारीरिक अंगोकी अपेक्षा अपने मस्तिष्कका इतना अधिक उपयोग करते हैं कि शारीरिक शक्तियोमे भारी विषमता उत्पन्न हो जाती है, जिसके परिणाम-स्वरूप उन्हे रोगी होना पड़ता है। शरीरके सबसे कोमल अंगसे तो बहुत अधिक काम लिया जाता है और रग-पट्ठोकी कोई चिन्ता नही की जाती। इसमे सन्देह नही कि मानसिक श्रमका परिणाम अवश्य अच्छा होता है; क्योकि उसीसे बल, ज्ञान और प्रतिष्ठाकी प्राप्ति होती है। पर इनके लिये मनुष्यको अपनी बहुत कुछ शारीरिक हानि भी करनी पड़ती है। मानसिक श्रम बड़ी-बड़ी आशाओसे किया जाता है, पर जिस समय उन आशाओकी पूर्त्ति होती है उस समय तक वह बहुत ही रोगी और दुर्बल हो जाता है। नीरोग रहनेके लिये ही मानसिक श्रमकी आवश्यकता होती है, पर बहुत अधिक मानसिक श्रम मनुष्यके मरणका कारण होता है। गणितज्ञ, दार्शनिक, उपदेशक, वकील, डाक्टर, सम्पादक और लेखक आदि सभी मानसिक श्रम करनेवाले अपना स्वास्थ्य बिगाड़ कर ही श्रम करते हैं। हमारी जिस शारीरिक शक्तिका काम पाचन, पोषण, रक्त-संचालन और

क्षति-पूर्त्ति आदि है, वह शक्ति जब केवल मस्तिष्कमे ही जा लगेगी, तब क्यो न उन कामोमे त्रुटि रहेगी ? यही कारण है कि अधिक मानसिक श्रम करनेवालोको प्राय वदहजमी, दस्त या इस तरहकी और बातोकी शिकायत बनी रहती है।

मान लिया कि बहुत अधिक मानसिक श्रम करके आप दूसरे वृहस्पति या कुबेरके अवतार हो गये, पर बिना स्वास्थ्यके आपका ज्ञान या धन किस कामका ? मानसिक श्रम करनेवालोको कमानेकी उतनी चिन्ता नही होती, जितनी पचानेकी होती है। बड़े-बड़े धनवान् और विद्वान् बदहजमीसे सदा परेशान रहते और साधारण देहातियोसे इस विषयमे ईर्ष्या करते हैं। कालविन दिन-रातमे केवल एक बार बहुत ही हलका भोजन किया करता था। विलायतके एक बहुत बड़े प्रोफेसरने जब एकबार एक डाक्टरसे अपने पेटकी शिकायत की, तब डाक्टरने उससे कहा कि सबसे अच्छा उपाय यह है कि तुम लिखने-पढ़नेकी अपनी सारी सामग्री चौमुहानी पर रखकर जला दो, बहुत जल्दी तुम्हारा स्वास्थ्य सुधर जायगा। प्रसिद्ध कवि काउपर मन्दाग्निके कारण होनेवाले अन्य रोगोसे इतना दुखी रहता था कि कई बार उसने आत्म-हत्या तक करनेका विचार किया था। यदि वह अपने भोजन और व्यायाम आदिका यथेष्ट ध्यान रखता तो उसे जीवन भर रोना न पड़ता। कारलाइलकी भी यही दशा थी। उसने बहुत-सी दवाए खाई और तरह-तरहकी तरकीवे की, पर किसीसे कुछ न हुआ, उसकी बदहजमी सदा बनी ही रही। यद्यपि इंगलैण्डके प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ पिटके सम्बन्धमे कहा जाता है कि उसकी मृत्यु कई राजनीतिक पराजयोकी चिन्तासे हुई थी, पर वास्तवमे उसे भी हाजमेकी ही शिकायत थी, जिसके कारण उसे

प्राय गठियाका भी दौरा हो जाता था। गठिया बहुधा धनवानोको ही होती है और पैतृक मानी जाती है। पर वह निर्धनोंके सिवा उन लोगोको भी हो जाती है, जिनके पूर्वजोको पहले कभी नही होती। गठिया पुरुषोको ही बहुत अधिक होती है। गठियाके सौ रोगियोमे बीससे कम स्त्रियाँ और अस्सीसे अधिक पुरुष होते हैं। जो मनुष्य यथेष्ट व्यायाम नही करता और जिसके पेटमे बहुतसा बिना पचा हुआ भोजन पड़ा रह जाता है, उसीको गठिया होती है। प्रसिद्ध डाक्टर सिडनहमने पहले पहल इसके सम्बन्धकी बहुतसी बातोका पता लगाया था और उसकी मृत्यु भी इसी रोगके कारण हुई थी। उसने गठियाके सम्बन्धमे कहा था—इससे दरिद्रोकी अपेक्षा धनवान् और मूर्खोंकी अपेक्षा बुद्धिमान् ही अधिक मरते हैं। बड़े-बड़े बादशाह, सेनापति और दार्शनिक इसीसे मरे हैं। यही पर प्रकृति अपनी निष्पक्षता सिद्ध करती है। वह बतला देती है कि जो कुछ बातोमे मेरा विशेष कृपा-पात्र है, वही कुछ बातोंमे मेरा विशेष कोप-भाजन भी है।" यह रोग केवल धनवानोको ही नही, बल्कि बड़े-बड़े राजनीतिज्ञोको भी होता है।

जो मनुष्य अपने मस्तिष्क और उदरका बहुत अधिक तथा हाथ-पैरका बहुत कम उपयोग करता है, उसे गठिया हो जाता है। पैतृक गठियासे पीछा छूटना भी बहुत कठिन होता है। जनरल थामसन को पैतृक गठिया थी। उन्होने बड़े-बड़े उपाय किये, सदा बहुत कुछ शारीरिक श्रम भी किया, सब तरहकी मदिरा छोड़ दी, बहुतसे भोजनोसे भी परहेज किया, पर कुछ भी फल न हुआ। बहुत दिनो तक जब उन्होने शराब पीना छोड़ दिया, तब कही जाकर उन्हे कुछ फुरसत हुई। इस अवसर पर यह बात

ध्यानमे रखने योग्य है कि शराबियोको भी प्रायः गठियाका रोग होता है और ऐसे लोग जब शराब पीना छोड़ देते हैं, तब उनके रोगमे भी कुछ कमी हो जाती है।

जो मनुष्य बहुत अधिक चिन्तन करता है, उसकी पाचन-शक्ति अवश्य बिगड़ जाती है। केवल शारीरिक श्रम करने-वाले देहाती खूब हट्टे-कट्टे और मजबूत होते हैं, यथेष्ट भोजन करते है और सब कुछ अच्छी तरह पचा लेते हैं। पढे-लिखे नागरिक सदा रोगी और दुर्बल रहते हैं। उन्हे एक एक कौर गिनकर खाना पड़ता है और सदा पेटकी लगी रहती है। उधर देहातियोको सदा भोजनकी ही चिन्ता बनी रहती है, पचानेकी चिन्ता उन्हे कभी नही होती। जिस मनुष्यकी पाचन-शक्ति ठीक नही होती, उसकी मानसिक-शक्ति भी अपना काम ठीक तरहसे नही कर सकती। एक फ्रेंच चिकित्सकने कहा है कि जो मनुष्य जिस प्रकार भोजन पचाता है, वह उसी प्रकार विचार, चिन्तन या मनन भी करता है। बहुत अधिक मान-सिक श्रम करनेसे पाचन-शक्ति बिगड़ जाती है, जिससे तरह तरहके रोग तो उत्पन्न होते ही हैं, साथ ही मस्तिष्क भी बिगड़ जाता है।

पहले कहा जा चुका है कि हमारा मस्तिष्क बिजलीके एक यंत्रके समान है, जिसके कारण हमारे ज्ञान-तन्तुओ पर आघात पहुंचता है। यदि बीच-बीचमे विश्राम और निद्राके द्वारा इन आघातोको रोका न जाय तो हमारे मस्तिष्कका भी दिवाला निकल जायगा और ज्ञान-तन्तुओ पर भी उसका बहुत ही बुरा प्रभाव पड़ेगा। बड़े-बड़े प्रतिभाशाली कवियोकी प्रतिभा जिस समय जागृत होती है, उस समय उनकी शारीरिक अवस्था बहुत

ही खराब हो जाती है। कोई कॉपने लग जाता है, किसीकी आँखोंके आगे अन्धेरा छा जाता है और किसीको ज्वर चढ़ जाता है। ऐसे मनुष्यो की मृत्यु भी बहुत ही शीघ्र हो जाती है। लेकिन ऐसे लोगोकी मृत्युके लिये दुःख नही होना चाहिए, क्योकि मनुष्यकी आयुके दीर्घ होनेका प्रमाण वर्षोंकी संख्या नही है, बल्कि वह ज्ञान तथा सुख है, जो वह अपने जीवनमे प्राप्त तथा अनुभव करता है। डीन स्विफ्टका मत था कि कोई महापुरुष दीर्घजीवी नही हो सकता। जब कोई उससे किसी वृद्ध महापुरुषका जिक्र करता, तव वह कहता कि "यदि उस मनुष्यका मस्तिष्क या हृदय किसी योग्य होता तो वह अबसे बहुत पहले मर चुका होता।" अपने मस्तिष्क-रूपी यज्ञ-कुण्डमे जो अपनी शारीरिक शक्तियोकी जितनी ही अधिक आहुति देता है, उसका अन्त भी उतनी ही जल्दी हो जाता है। एकबार एक चित्रकार बहुत बीमार हो गया। उसे देखनेके लिये कई डाक्टर आये। सब कहने लगे कि अभी इसकी अवस्था अधिक नही हुई है, अतः यह बच जायगा। उस चित्रकारने कहा—"आप लोग मेरी छियालीस वर्षकी अवस्था पर मत जाइए, मैने दिन और रात परिश्रम किया है, इस लिये मेरी अवस्था दूनी समझिए।" और वास्तवमे बहुत अधिक परिश्रम करनेके कारण वह बहुत ही शिथिल और क्षीण हो गया था। जो लोग अपने मस्तिष्कके साथ-साथ शरीरके और अंगो तथा शक्तियोका भी बराबर उपयोग करते रहते है, उनकी यह दशा नही होती; वे अधिक दिनो तक सुख-पूर्वक जीवन व्यतीत करते है।

साधारणत. सदा लिखते-पढ़ते रहनेवाले मनुष्योके फेफड़ो तक सॉसकी हवा ठीक-ठीक नही पहुँचती; क्योकि टेबुल या डेस्क

आदि पर ही झुक कर अपना काम करना पड़ता है। जब वे रातके समय अथवा गन्दी हवामे बैठकर लिखते-पढ़ते हैं तब साँसका यह दोष और भी बढ़ जाता है। शारीरिक अङ्गोका हवासे यथेष्ट पोषण नही होता। भोजनकी आवश्यकता कुछ विशिष्ट अवसरो पर ही होती है, पर हवा और रोशनीकी आवश्यकता प्रत्येक मनुष्यको हरदम रहती है। हवाके अभावमे रक्तके सचालन और शुद्धिमे बहुत बाधा पहुँचती है और अनेक प्रकारके रोग उत्पन्न होते हैं। यदि यथेष्ट व्यायाम किया जाय, तो इन दोषो और रोगोकी नौबत नही आती। आजकलके चित्रकार और कवि प्रायः ऐसे स्थान पर बैठकर काम करते है, जहाँ शुद्ध वायु और सूर्य्यकी किरणोकी पहुँच ही नही होती। बड़े-बड़े प्रसिद्ध ज्योतिषी अपना सारा समय अपनी वेधशालाओ मे ही व्यतीत करते हैं और बरसो तक बाहर नही निकलते। बड़े-बड़े विद्वानो और लेखकोंकी भी यही दशा होती है। जब उनकी तबीयत बहुत अधिक घबराती है, तब वे थोड़ी देरके लिये खिड़कीसे बाहर मुँह निकाल कर हवाका एकाध झकोरा ले लेते हैं। बस, यही उनका व्यायाम है और यही हवा खाना है। ऐसी दशामें मनुष्यका रोगी होकर मर जाना आश्चर्य्य-जनक नही है, बल्कि वास्तवमे उसका बच रहना ही आश्चर्य्य-जनक है।

लेकिन सबसे बड़ी कठिनता तो यह है कि मानसिक श्रम एक प्रकारका नशा हो जाता है। ऐसे मनुष्यको बिना मानसिक श्रम किये चैन ही नही पड़ता। एक बार पेट्रार्कने एक पादरीसे अपने बीमार रहनेकी शिकायत की। पादरीने असली मतलब समझ लिया और इस लिये उसके पुस्तकालयकी कुंजियाँ

उससे माँग ली। तीन ही दिन वाद पेट्राकने वहुत गिड़-गिड़ाकर पादरीसे कहा कि मुझे मेरी तालियाँ लौटा दीजिये, नही तो मैं आपके सामने ही मर जाऊंगा। तात्पर्य्य यह कि जो लोग इस प्रकार प्रकृतिके नियमोका उल्लंघन करते है, वे कुछ दिनोमे उसके वहुत ही अभ्यस्त हो जाते हैं और आगे चलकर इसके लिये उन्हे वहुत कुछ दण्ड भी भोगना पड़ता है।

अधिक मानसिक श्रम करनेवालोके लिये सब दण्डोमेसे पहला दण्ड तो यह है कि उन्हे उन्निद्र रोग हो जाता है—उन्हे कभी गहरी नीद नही आती। वास्तवमे मानसिक श्रम करनेवालोके लिये वहुत अधिक सोनेकी आवश्यकता होती है। पर तो भी वे लोग सोते वहुत ही कम है। अधिक कार्य्य करनेके उपरान्त भी वहुत देर तक मन क्षुब्ध रहता है और वह बराबर कुछ न कुछ सोचा करता है। मन और मस्तिष्क परसे मनुष्यका अधिकार उठ जाता है और वे दोनो आप ही आप विना रुके वरावर काम करते रहते है। इस प्रकार मस्तिष्क तथा शरीरकी जो शक्ति नष्ट होती है, उसकी पूर्ति विना गहरी नीदके हो ही नही सकती। लेकिन जव कि मनुष्यको गहरी नीद नही आती और वह करवटे बदलता या स्वप्न देखता रहता है, तव उसका मस्तिष्क और शरीर शान्ति नही पाता, क्षति ज्योकी त्यो बनी रहती है, उसकी पूर्त्ति नही होती। नीद उसी समय नही आती, जव कि मनुष्य वहुत ही शिथिल और चिन्तित रहता है। और अधिक मानसिक श्रम करनेवालेका सदा शिथिल और चिन्तित रहना वहुत ही स्वाभाविक है। वहुत ही कम साहित्य-सेवी ऐसे होगे, जिन्हे पूरी और गहरी नीद आती हो। व्यापारी लोग भी प्राय सोनेके समय अनेक प्रकारकी चिन्ताएं किया करते हैं,

स्वप्नमे भी उन्हें सट्टे और नफे-नुकसानका ध्यान बना रहता है। जमींदारों और महाजनोकी भी प्रायः यही दशा होती है। उन्हे नीद नही आती, इसलिये उनके मस्तिष्क और शरीरको भी विश्राम नही मिलता।

पोप जिन दिनो होमरका इलियड ग्रन्थ पढ़ता था, उन दिनो एक बार उसकी इच्छा हुई थी कि कोई मुझे फाँसी लटका दे, जिसमे इस ग्रन्थसे मेरा पीछा छूट जाय। फाँसी पर लटकनेके लिये तो आप तैयार थे, पर स्वयं पुस्तक नही छोड़ सकते थे। लार्ड आक्सफर्डके मनमे रातके समय जो विचार उठते थे, उन्हे लिखनेके लिये वे अपनी स्त्रीको एक रातमे चार-चार बार कागज आदि लानेके लिये जगाते थे। बोरहैवको एक बार बहुत अधिक अध्ययन करनेके उपरान्त छ हफ्ते तक विलकुल नीद नही आई थी। गोलडोनीने बहुत अधिक परिश्रम करके एक सालमे छः नाटक तो अवश्य लिख डाले थे, पर इसके बाद वह जन्म भर और किसी कामका न रह गया था। पर जो लोग खूब सोते हैं उनका स्वास्थ्य बहुत अच्छा रहता है और वे अधिक दिनो तक जीते भी हैं, जो मनुष्य सचमुच काम करना चाहता हो, उसे उचित है कि वह सात-आठ घण्टे अवश्य सोया करे।

थोड़ीसी गहरी नीद भी आदमीकी सारी थकावट दूर कर देती है। पर झपकी, ऊँघ और स्वप्नोसे थकावट ज्योकी त्यो बनी रहती है। उस दशामे मस्तिष्क बराबर अपना काम करता है। सर आइजक न्यूटनने तो एक बार उसी दशामे गणित-सम्बन्धी एक बहुत कठिन समस्याकी मीमांसा तक कर डाली थी। दो एक ऐसे लेखक भी हो गये है, जिन्होने सोनेके समय कोई विचार अधूरा ही छोड़ दिया था, पर उन्हे गहरी नीद आई और पड़े-पड़े

ऊँघनेकी दशामे ही उन्होने वे विचार पूर्ण कर लिये। अधिक मानसिक श्रम करनेवालोमेसे किसीने स्वप्नमे ही कोई आविष्कार तक कर डाला है और किसीने कविता भी करली है।

बहुतसे लोग रात-रात भर स्वप्न ही देखा करते हैं और उन्हे गहरी नींद नही आती। ऐसे आदमियोके लिये यह जान लेना बहुत ही लाभदायक है कि नीदका अभ्याससे भी बहुत कुछ सम्बन्ध है। सिपाही और मल्लाह जब चाहते हैं, तब सो जाते हैं और जब चाहते हैं तब उठ बैठते है। नेपोलियन जब चाहता था, तब सो जाता था। लार्ड ब्रूहमको यदि पन्द्रह मिनटका भी समय मिलता तो नीद आ जाती थी। अमेरिकाके प्रसिद्ध आविष्कारक मि० एडिसन भी जब चाहते है, तब पन्द्रह मिनट तककी एक गहरी नीद ले लेते हैं। इंगलैण्डका प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ और प्रधानमंत्री पिट भी इसी प्रकार सो लेता था। पर उसमें विशेषता यह थी कि वह सोये सोये पार्लमेण्टके व्याख्यान और वाद-विवाद सुना करता था। एक बार किसी विवादके अवसर पर एक मेम्बरने कहा कि मंत्री महाशय सो रहे है। उसने चट आँखे खोल कर कहा—"नही, ईश्वर करता कि मुझे नींद आ जाती।" काशीमे ही हमारे एक मित्र हैं जो सोनेमें इन सब लोगोसे बढ़े-चढ़े जान पड़ते हैं। वे नित्य रातको दूर-दूरके मन्दिरोमे दर्शन करनेके लिये प्रायः पैदल ही जाते हैं और रास्तेमे चलते समय पूरी नहीं, तो बहुत कुछ नीद अवश्य ले लेते हैं। उनमें सबसे बढ़कर विशेषता यह है कि वे कभी इक्के या गाड़ी आदिकी ठोकर नही खाते और निश्चित स्थान पर पहुँचनेसे दस-पाँच कदम पहले ही जाग भी जाते है।

एक विद्वान्‌का मत है कि जिस मनुष्यको अच्छी तरह नींद नही आती, वह कभी महत्त्व प्राप्त नही कर सकता। जो आदमी सब प्रकारकी चिन्ताएँ छोड़कर इच्छा करते ही सो सकता है, उसकी काम करनेकी शक्ति बराबर बनी रहती है और कभी नष्ट नही होती। सिकन्दर, नेपोलियन, पिट और वेलिंगटन आदि ऐसे ही लोग थे, जो इच्छा होते ही तुरन्त सो जाते थे। वेलिंगटन तकिये पर सिर रखते ही गहरी नींदमे सो जाता था। उसे कभी करवट बदलनेकी भी आवश्यकता नही होती थी। लार्ड पामर्स्टन हाउस आफ कामन्समे भी सोया करते थे, और इसी लिये वे बयासी वर्षकी अवस्था तक इतना काम कर सके। जेम्स वाट ने कदाचित् इसी लिये भाफके इंजिनका आविष्कार किया था कि वह दस-ग्यारह घण्टे रोज सोया करता था। नींद आनेसे आदमी का दिमाग ठिकाने रहता है, पर जिसे पूरी नींद नही आती, उसके पागल हो जानेकी सम्भावना रहती है। प्राचीन कालमे बहुतसे देशोमे प्राण-दण्ड देनेकी एक प्रथा यह भी थी कि आदमी को सोने नही दिया जाता था और जो आदमी सोनेसे रोका जाता था, वह दस पन्द्रह दिनके अंदर अवश्य मर जाता था।

मनुष्य को किस प्रकार नींद आ सकती है, इसके सम्बन्धमे बहुत से लोगोके भिन्न-भिन्न मत हैं। किसीका मत है कि आदमी को तड़के उठना चाहिए, इससे उसे रात को जल्दी और गहरी नींद आवेगी। किसीका मत है कि अधिक शारीरिक श्रम करना या कमसे कम सोनेके कुछ पहले चार-पाँच मील पैदल चलना चाहिए। कुछ लोगोने इसके लिये कृत्रिम उपाय भी बतलाये है। एकने कहा है कि सोनेके समय पहाड़ा पढ़नेसे जल्दी नींद

आ जाती है। एक ने कहा है कि कोई प्रसिद्ध कविता पढ़नी चाहिए। एक पादरी उस समय तक ईश्वर-प्रार्थना किया करता था, जब तक कि शैतान आकर उससे उसका पीछा छुड़ाकर उसे सुला न देता था। एक आदमीने कहा है कि एक कल्पित विन्दु पर बहुत देर तक निगाह जमानेसे नीद आ जाती है। एक डाक्टरका मत है कि पन्द्रह-बीस मिनट तक ठडी हवामे गहरी साँस लेनेसे आदमी तुरन्त सो जाता है। एक का मत है कि दाहिनी करवट लेट कर और खूब आरामसे तकिये पर सिर रख कर खूब गहरी साँस खीचनी चाहिए और तब उसे धीरे-धीरे छोड़ना चाहिए। साथ ही साँस छोड़नेके समय कल्पना करनी चाहिए कि हमारी नाकमेसे हवाकी एक धारा निकल रही है और उस कल्पित धारा पर दृष्टि जमानी चाहिए। इस क्रियासे तुरन्त नीद आ जायगी। एक दूसरे आदमीका मत है कि सोनेसे थोड़ी देर पहले और सब कामोके अन्तमे कोई ऐसा काम करना चाहिए जिसका दिन भरके और सब कामोसे कोई सम्बन्ध न हो। इसी प्रकारके और भी अनेक उपाय हैं। पर सबसे अच्छा उपाय यही है कि मनुष्य दिनमे खूब शारीरिक श्रम करे, अथवा सन्ध्या के समय खूब लम्बा चक्कर लगावे और बढ़िया ठण्डी हवाका सेवन करे।

ऐसे लोगोको क्या कहा जाय, जो पूरी नीद तो लेते नही, उलटे नीदको रोकनेके लिये तरह-तरहके उपाय करते है। पश्चिमी देशोमें और उनकी देखा-देखी पूर्वी देशोमे भी लोग जागनेके लिये चाय, कहवा या कई तरहकी शराबे पीते या अफीम खाते हैं। अधिकांश युरोपीय साहित्य-सेवी कहवेका इस्तेमाल करते है। पर उसके कारण किसीकी गांठो मे दर्द होने लगता है और किसी

की आंखोकी ज्योति जाती रहती है। किसी-किसीको सदा बुखार भी बना रहता है। किसी-किसीने तो अधिक कहवा पीकर थोड़ी ही अवस्थामे अपने प्राणो तकसे हाथ धोये हैं। कहवेमे उत्तेजना-शक्ति अवश्य होती है, पर उसका अन्तिम परिणाम बहुत ही बुरा होता है। मिचेलेटने लिखा है कि अठारहवी शताव्दीमे फ्रान्सीसियो के मनमे जो-जो क्रान्तिकारक विचार और भाव उठे थे, उसका मुख्य कारण यही था कि उन दिनो वहाँके लोग कहवे-का बहुत अधिक व्यवहार करते थे और इधर उनकी तबीयतके दब जानेका कारण यह है कि वे तमाखूका बहुत अधिक व्यवहार करने लगे हैं।

जागनेके लिये बहुतसे लोग चायका भी व्यवहार करते है। डा० जान्सन जागनेके लिये प्राय बीस प्याले चायके पीया करते थे। कभी-कभी रातके चार बजे तक उनके लिये चाय बना करती थी। जब उन्हे आगे चलकर उन्निद्र रोग हो गया, तब उन्होने यह भी समझ लिया था कि इसका कारण चाय ही है। हैजलिट बहुत बढ़िया और मँहगी एक पाउण्ड चाय एक हफ्तेमे पी जाता था। इसीसे उसका हाजमा बिगड़ गया था, जिसके परिणाम-स्वरूप वह बहुत जल्दी मर गया। शराब पीकर उसने अपना रोग और भी बढ़ा लिया था। बाटर्लूके युद्धमे जब नेपो-लियन हार गया, तब उसकी हारसे हैजलिट बहुत ही दुखी हुआ था। हफ्तो तक वह बिना नहाये और बिना हजामत बनवाये दिन-रात इधर-उधर घूमा करता था और चौबीसो घण्टे शराब-मे बदमस्त रहता था। कई हफ्तोके बाद अन्तमे मानो उसकी नीद टूटी, वह चैतन्य हुआ और उसके उपरान्त उसने शराब

पीना बिलकुल छोड़ दिया। फिर आमरण उसने कभी शराबको छूआ भी नही।

बहुतसे मानसिक श्रम करनेवालोंमे शराब छोड़नेका नैतिक साहस नहीं होता। उनका मस्तिष्क तो यो ही क्षुब्ध रहता है, जागनेके लिये किसी प्रकारके मादक द्रव्यके सेवनकी तो उन्हे आवश्यकता ही नही रहती। उन्हे तो उलटे ऐसा प्रयत्न करना चाहिए, जिसमे उन्हें नींद आवे। पर वे सदा जागनेके लिये मादक द्रव्योका ही व्यवहार करते है। शराब आदिका बहुत अधिक व्यवहार मनुष्यको शारीरिक हानि भी पहुँचाता है और नैतिक भी। प्राचीन कालमे जितने बड़े-बड़े महाकवि और कवि हो गये हैं, वे कभी शराब नही छूते थे और इसीलिये उनके महाकाव्य और काव्य आज-कलके शराबी कवियोकी कविताओंसे कही बढ़कर है। पर आज-कलके कवियोको तो शराबकी लतसी पड़ गई है। बेन जान्सन दिन-रात शराब पीता था। एक बार एक दोस्तके साथ बहुत अधिक शराब पीनेके कुछ ही समय उपरान्त शेक्सपियरकी मृत्यु हुई थी। काले एक बार किसी देहातमे अपने एक मित्रके यहाँ शराब पीने गया था। बहुत अधिक शराब पीनेके कारण वह बे-होश हो गया और घरका रास्ता भूल गया। कुछ देर बाद वह एक खेतमे गिर पड़ा और रातभर वही खुलेमे पड़े रहनेके कारण मर गया। ओटवेकी मृत्यु भी शराबसे हुई थी। बॉयस शराब पीकर सड़क पर गिर पड़ा था। उसके ऊपरसे एक गाड़ी चली गई और वह मर गया। एडिसन लिखनेके समय बराबर शराब पीता जाता था। लिखाई खतम होनेसे पहले उसकी शराबकी बोतल खाली हो जाती थी। स्टील तो शराब खानेमे ही बैठ कर लिखा करता

था। पोपकी अकाल मृत्यु भी बहुत अधिक शराब पीनेके कारण हुई थी।

गोल्डस्मिथ भी बड़ा भारी शराबी था। एकबार मकानका किराया न चुकाने के कारण उसके यहाँ कुर्की आई और वह गिरफ्तार हो गया। उसका हाल सुनकर डा० जान्सनने एक गिनी भेजी और कहलाया कि मैं अभी आता हूँ। गोल्डस्मिथने समझ लिया कि जान्सन तो आते ही हैं, उस गिनीकी शराब मँगा ली। जान्सन ने आकर पूछा कि अब किराया कहाँसे चुकाओगे? उसने उत्तर दिया—"मेरे पास एक उपन्यास तैयार है।" वह उपन्यास Vicar of Wakefield था। जान्सनने ६० पाउण्ड पर वह उपन्यास एक प्रकाशकके हाथ बेच डाला। किराया चुका दिया गया, जान्सन और चपरासी चले गये, गोल्ड-स्मिथने तब फिर मालिक-मकानसे एक प्याला शराबका माँगा। बर्न्स तो सिर्फ अपने दोस्तोंकी खातिर ही बहुत शराब पीता था। पादरी लागेन एक बार शराबके नशेमे ही उपदेश देनेके लिये गिरजेमे पहुँच गया था। सर वाल्टर स्काटने धीरे-धीरे शराब कम करके सिगरेट पीना आरम्भ किया था। अपने लड़केसे उसने कहा था—"रोज थोड़ीसी शराब पीनेसे भी मेदा खराब हो जाता है और मैं शराब पीता था इस लिये तुम्हारा मेदा तो और भी कमजोर है।" शराबके कारण बाइरनकी सदा बहुत ही बुरी दशा रहा करती थी। वह बिलकुल वहशी, शक्की और झगड़ालू हो गया था। कीट्स एकबार एक तीव्र आलोचनाके कारण इतना दुखी हुआ था कि छ: हफ्ते तक वह दिन-रात शराब ही पीता रहा। चार्ल्स लैम्बको रास्तेमे जो शराब खाना मिलता था, उसीमे वह घुस

जाता था। पीछेसे उसने शराव छोड़कर तमाखू पीना आरम्भ कर दिया था। डी क्विन्सी और कालेरिज अफीम खाया करते थे। कालेरिज वहुत अधिक अफीम खाता था, जिसके कारण अन्तिम चौदह वर्षोंमे उसकी बड़ी ही दुर्दशा हुई थी। पर इसके वाद कुछ दिनोंमे उसने अपनी दशा थोडी वहुत सुधार ली थी। उसका लड़का हार्टली यद्यपि अच्छा प्रतिभाशाली था, पर शराबी होनेके कारण उसने भी अपने आपको चौपट कर दिया था। छापेखानेवालोंको जव कम्पोज करनेके लिये कापी की जरूरत होती थी, तव वे लड़कोंको शराव खानोंमे उसे ढूँढ़नेके लिये भेजा करते थे। उसके एक परम मित्रने जव देखा कि वह रोज दो पहर तक शरावके नशेमे वे-होश पड़ा रहता है, तव उसने उससे मिलना तक छोड़ दिया था। स्वय हार्टली शरावके दोषोंसे वहुत अच्छी तरह परिचित था, पर वह अपनी बुरी आदत छोड़ नहीं सकता था और जानबूझ कर उसका शिकार वनता था। उसकी इच्छा शक्तिकी दृढ़ता बिलकुल नष्ट हो चुकी थी। उर्दूके सुप्रसिद्ध कवि मिरजा गालिव भी बड़े भारी शराबी थे। शरावके कारण ही वे प्राय' दरिद्र वने रहा करते थे और वहुत कुछ कर्जदार भी वने रहते थे। एक वार महाजनोंने नालिश कर दी। आपने अदालतमे पहुँचते ही कहा—

कर्जकी पीते थे मै लेकिन समझते थे कि हाँ।
रंग लाएगी हमारी फाकः मस्ती एक दिन॥

मि० महमूद जो प्रयाग हाईकोर्टमे कुछ दिनो तक जज भी रह चुके थे, बड़े भारी शराबी थे। एक बार आपको लखनऊकी एक अदालतमे बहस करनेके लिये जाना था। सुनते हैं, उस समय आप शराबके नशेमे इतने चूर थे कि दो आदमियोंको दोनो ओरसे

पकड़कर आपको अदालत तक ले जाना पड़ा था। बहुत अधिक शराब पीनेके कारण ही आपकी मृत्यु प्रायः चालीस ही वर्षकी अवस्थामे हो गई थी। उर्दूके सुप्रसिद्ध लेखक पं० रत्ननाथ सरशार भी दिन-रात शराबके नशेमे चूर रहते थे और इसीके कारण उनकी मृत्यु भी थोड़ी ही अवस्थामे हो गई। जब वे प्रयाग हाईकोर्टमे अनुवादक थे, तब जेबमे शराबकी बोतल रख कर हाईकोर्ट जाया करते थे। प्रयागमे उनका चार वर्षका जो लड़का मरा था, उसके सम्बन्धमे यही प्रसिद्ध है कि उसे स्वयं उन्होने ही शराबके नशेमे छत परसे नीचे फेक दिया था। हिन्दीके लेखकोमे ज्लाकटानन्द और राजा रामपालसिह परले सिरेके शराबी थे और पं० रामगरीब चौबे तो शराबके सिवा अफीम, भॉग और गॉजेकी भी खबर लिया करते थे। और उनके थोड़ी अवस्थामे मर जानेका यही कारण था। कलकत्तेके श्रीयुत हरिनाथ दे जो बहुतसी भाषाओके एम० ए० थे, केवल बहुत अधिक शराब और ताड़ी पीनेके कारण प्राय· ३२-३३ वर्षकी अवस्थामे मर गये थे।

बहुतसे ऐसे बड़े-बड़े विद्वान् भी हो गये है जिनका शरीरान्त केवल बहुत अधिक मानसिक श्रम करनेके कारण ही हुआ है। यदि ऐसे लोग बहुत अधिक मानसिक श्रम करनेके साथ-साथ मादक द्रव्योका सेवन भी आरम्भ कर दे, तो उनका और भी अल्प आयुमे मर जाना बिलकुल स्वाभाविक है। वास्तवमे मानसिक श्रम करनेवालोको मानसिक विश्रामकी सबसे अधिक आवश्यकता होती है; इसलिये उन्हे तो मादक द्रव्योसे और भी दूर रहना चाहिए।

अधिक मानसिक श्रमसे मनुष्यको उन्निद्र रोग हो जाता है और उसकी पाचन-शक्ति बिगड़ जाती है। साथ ही कभी-कभी

उसे एक प्रकारका उन्माद या मालीखोलिया भी हो जाता है। सर आइजिक न्यूटनको एक वार प्रायः पन्द्रह दिन तक बिलकुल नींद न आई थी, जिसके परिणाम-स्वरूप उनका दिमाग खराब हो गया था। कई महीने तक विश्राम करनेके उपरान्त कही जाकर उनका दिमाग दुरुस्त हुआ था। इसी प्रकार और भी ऐसे बहुतसे लोग हो गये हैं, बहुत अधिक मानसिक श्रम करनेके कारण जिनका दिमाग खराब हो गया था। यहाँ तक कि बड़े-बड़े विदूषको और मसखरोको भी मालीखौलिया हो जाता है। डाक्टरने अपने एक रोगीसे कहा—"तुम्हे चित्तकी थोड़ी प्रसन्नता की आवश्यकता है। इस लिये तुम प्रसिद्ध विदूषक ग्रिमाल्डीके पास जाओ। वह तुम्हे केवल हँसा कर अच्छा कर देगा।" रोगीने उत्तर दिया—"महाशय! मैं ही ग्रिमाल्डी हूँ।" प्रसिद्ध नाटककार और विदूषक मोलियरको भी मालीखौलिया हो गया था। टस्सो, जान्सन, स्विफ्ट, बाइरन आदि भी इस रोगसे नही बचे थे। टस्सोको कही चैन ही नही पड़ता था। वह जहाँ जाता था, वहाँ उसे तरह तरहके भीषण शब्द सुनाई पड़ते थे।और जान पड़ता था कि चारो तरफ लपटें निकल रही हैं। गेलीलियो और नेपोलियनका दिमाग भी कुछ खराब हो गया था। स्मालेट-को कही कुछ अच्छा ही नही लगता था। उसने सारे युरोपकी यात्रा कर डाली, पर कही उसका जी न लगा।

सुप्रसिद्ध कवि काउपरको कुछ भी हजम न होता था, इसीलिये उसे मालीखौलिया हो गया था। वह सदा दुखी और चिन्तित रहता था। इसी दुःख और चिन्तामे उसने हास्य-रस-पूर्ण एक बहुत अच्छा काव्य भी लिख डाला था। जान लीच एक बहुत अच्छा चित्रकार था, जिसके बनाये हुए हास्य-चित्रोसे प्रसिद्ध

हास्य-रस-पूर्ण पत्र "पंच" की शोभा बहुत बढ़ गई थी। पर स्वयं लीचको भी मालीखौलिया था। डाक्टरोंके मना करने पर भी वह बराबर परिश्रम करता ही जाता था, इसलिये बहुत जल्दी उसका दिमाग खराब हो गया और अन्तमे बहुत अधिक कार्य्य करनेके कारण ही वह शीघ्र मर गया। उसका अन्तिम हास्य-चित्र उसके मरनेके दिन "पच" मे प्रकाशित हुआ था। प्रसिद्ध कवि कीट्स और शेलीके दिमागने भी कुछ दिनो बाद जवाब दे दिया था। कभी-कभी ऐसा भी होता था कि न तो वे कुछ सोच सकते थे और न समझ सकते थे।

जिस समय मस्तिष्कको बहुत अधिक काम करना पडता है, उस समय खून बहुत तेजीसे मस्तिष्ककी ओर दौड़ता है। मेटा-स्टासियो जब काम करने बैठता था, तब उसका खून इतनी तेजी और इतनी अधिकतासे मस्तिष्ककी ओर दौड़ता था कि उसका चेहरा बिलकुल लाल और शराबियोका-सा हो जाता था और प्रायः लाचार होकर उसे काम छोड़ देना पड़ता था। इसके अतिरिक्त बहुत अधिक मानसिक श्रम करनेके समय यह भी होता है कि उस समय यदि थोड़ासा श्रम और किया जाय तो उसका बहुत ही बुरा परिणाम होता है। एक विद्वान्का एक अच्छी पुस्तक पढनेके समय हृदय धड़कने लगा था। एक कवि बहुत दिनो तक एक वाक्यकी तलाशमे था। जब एक दिन संयोग-वश उसे वह वाक्य मिल गया, तब उसे इतनी प्रसन्नता हुई कि उसकी ज्ञान-शक्तिने कुछ देरके लिये जबाब दे दिया। स्विफ्ट बहुधा बडी तेजीसे काँपने लग जाता था, उसके सिरमे बहुत दर्द होने लगता था और कानोमे तरह-तरहकी आवाजें सुनाई देने लगती थ। थामस हुड केवल बहुत अधिक मानसिक श्रम

करने और बहुत जागनेके कारण ही एक बार बहुत सख्त बीमार हो गया था। यहाँ तक कि उसके फेफड़ेमे से खून निकलने लग गया था और वह मरनेके करीब हो गया था।

वीटी अपनी लिखी पुस्तकको लिखनेके उपरान्त फिर कभी एक बार भी उसे नही पढ़ सकता था। उसका एक मित्र प्रूफ देख दिया करता था। इसका कारण उसने यह बतलाया है कि "लिखी हुई पुस्तक को फिरसे पढ़नेमे मेरे ज्ञान-तन्तुओ पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता था और मुझे उसके पढ़नेमे बहुत कष्ट होता था। इस कष्ट का कारण यह था कि जिन दिनो मैं अपनी पुस्तक लिखनेके लिये अन्य पुस्तकोका बहुत अध्ययन किया करता था, उन दिनो पढ़नेके उपरान्त मुझे बहुत ही भय लगता था और लिखी हुई पुस्तकको फिरसे पढ़नेसे मुझे फिर उसी भयका स्मरण हो आता था।" सर वाल्टर स्काटने पैंतालिस-छियालिस वर्षकी अवस्थामे बहुत अधिक परिश्रम किया था और लगातार कई बड़े-बड़े उपन्यास लिख डाले थे। परिणाम यह हुआ कि उसके पेटमे मरोड़ होने लगा। वह बहुत ही दुर्बल हो गया था, पढ़नेके समय उसकी आँखोके आगे अन्धेरा छा जाता था, हरदम उसके कान मे तरह तरहकी आवाजे सुनाई पड़ती थी, जिससे वह और कुछ भी न सुन सकता था और न कुछ सोच-विचार ही सकता था। कुछ आराम होते ही उसने फिर लिखना आरम्भ कर दिया। दो तीन पुस्तके लिखनेके उपरान्त फिर उसकी बीमारीका दौरा हुआ, तब उसने लाचार होकर परिश्रम करनेके लिये अफीमका सेवन आरम्भ कर दिया। वह साल भरमे प्रायः बारह जिल्दें लिखा करता था। जब डाक्टरने उसे बहुत अधिक श्रम करनेसे मना किया, तब उसने कहा कि स्वस्थ दशामे मुझसे काम न करने

के लिये कहना वैसा ही है, जैसा कि किसी पानी भरे हुए बरतन को चूल्हे पर चढ़ा कर पानीसे कहना कि तुम खौलो मत। आखिरी बार फिर उसकी बीमारीका दौरा हुआ। उस समय उस का चित्त बहुत ही दुखी और भयभीत रहता था। एक दिन वह एक शब्द भी शुद्ध नही लिख सका था और न कुछ सोच या समझ ही सकता था। उसे कई कई रोग एक साथ ही हुए, पर फिर भी उसने काम करना न छोड़ा। वह समझता था कि इतना अधिक परिश्रम करनेसे आदमी मर जाते हैं, पर फिर भी उसे बहुतसा ऋण चुकाना था, इसलिये वह बराबर परिश्रम करता ही जाता था। जब उसका रोग बराबर बढ़ने लगा, तब उसने भ्रमण प्रारम्भ किया। लेकिन उसका भी कुछ फल न हुआ; क्योंकि साथ ही साथ वह काम भी करता जाता था। उनसठ वर्षकी अवस्थामे उसे लकवा मार गया, पर तब भी उसने लिखना न छोड़ा। डाक्टरोका कहना भी उसने नहीं माना। दूसरे वर्ष उसे लकवेका दूसरा दौरा हुआ। पर फिर भी उसका काम बराबर उस समय तक जारी रहा, जब तक कि मृत्युने आकर उसे सब कामोसे रोक न दिया।

स्काटका दामाद लॉकहार्ट भी बहुत अधिक मानसिक श्रम करनेके कारण ही मरा था। सूदे भी बहुत अधिक मानसिक श्रम करता था, इसलिये उसका दिमाग खराब हो गया था। स्काटकी तरह वह भी बिना काम किये रह ही न सकता था। वह जब टहलनेके लिये निकलता, तब भी कुछ न कुछ पढ़ता या नोट करता रहता था। आगे चल कर उसका दिमाग बिलकुल खराब हो गया था और वह कुछ भी काम करने योग्य न रह गया था। जान गाल्ट, जिसने इतिहास और अर्थ-शास्त्रके

वहुतसे ग्रन्थ और लेख आदि लिखे हैं, हरदम लिखता ही रहता था। लकवेके कारण जब वह स्वयं लिखनेमे असमर्थ हो गया, तब दूसरोसे बोलकर लिखाने लगा। उसे चौदह बार लकवेके दौरे हुए और अन्तमे वह मर ही गया। कवि हेन भी वहुत अधिक श्रम करनेके कारण बीमार हो गया था और आठ वर्ष तक वहुत बीमार रह कर मरा था। पर अन्त समय तक उसने भी काम नही छोड़ा था। सन् १८५५ मे पेरिसमे एक वहुत वड़ी प्रदर्शिनी हुई थी। उस समय रास्तेमे एक आदमीने उससे उसकी तवीयतका हाल पूछा। उसने कहा—"मेरे ज्ञान-तन्तु इस समय ऐसी वढ़िया दशामे हैं कि मुझे दृढ़ विश्वास है कि यदि मैं उन्हे प्रदर्शनीमे दिखला सकूँ, तो पीड़ा और दुःखके लिये उन्हे एक वढ़िया पदक मिलेगा।" अपने रोगके सम्बन्धमे वह वहुतसी डाक्टरी कितावें पढ़ा करता था और कहता कि "इन पुस्तकोंके पढ़नेसे इसके सिवा और क्या लाभ होगा कि मैं स्वर्गमे यह व्याख्यान दे सकूँगा कि मृत्युलोकमे डाक्टर लोग इस रोगके सम्बन्धमें बहुत ही अज्ञान हैं।"

पादरी राबर्टसन लिखता भी था और उपदेश भी देता था। उसके सिरमे बहुत दर्द होता था, दिमागमें चक्कर आता था और रातभर उसे नींद न आती थी। एक बार एक व्याख्यान देनेके समय उसके दिमाग पर इतना जोर पड़ा कि जब वह व्याख्यान समाप्त करके दूसरे स्थान पर व्याख्यान देनेके लिये जाने लगा, तव रास्तेमे ही वेहोश होकर गिर पड़ा। लोग उसे उठा कर एक दवाखानेमें ले गये। ज्योंही उसकी तवीयत कुछ ठहरी, त्यो ही वह दूसरा व्याख्यान देनेके लिये चल पड़ा। उसने एक स्थान पर लिखा है—"मैं जो विचार करता हूँ या जो सतर

लिखता या पढ़ता हूँ, उससे मेरे दिमागमे बहुत सख्त और कभी कभी मामूली दर्द होता है।" कई डाक्टरोंने उसका इलाज किया, पर फल कुछ भी न हुआ; क्योकि वह काम नही छोड़ता था। सिरके दर्दके कारण वह कभी-कभी पागल हो जाता था। पर ज्योही उसका दर्द कम होता था, त्योही वह फिर पढ़ने या काम करने लग जाता था। अन्तमे सैंतीस वर्षकी अवस्थामे उसका देहान्त हो गया।

मानसिक श्रम करनेवालोका जीवन बड़ी बड़ी कठिनाइयोसे भरा होता है। एक स्त्रीने लिखा है—"जो मनुष्य किताबें लिख कर अपनी जीविका-निर्वाह करता हो, वह बड़ा ही अभागा है। मोचीको तो उसकी मजदूरी अवश्य मिलेगी, पर ग्रन्थकारके लिये कुछ भी मिलना निश्चित नही है।" कालेरिजने लिखा है—"साहित्य-सेवाको कभी व्यवसाय न बनाओ; इसमे मनुष्य न तो सुखी रहता है और न नीरोग।" पर मेकालेकी सम्मति साहित्य-सेवाके पक्षमे थी। पाइनेलने कहा है कि जो लोग बहुत अधिक बुद्धिमान् या प्रतिभाशाली होते हैं, वे अपने मानसिक श्रमके कारण ही मरते हैं। फिर भी लोग प्रतिभाशाली और बुद्धिमान् होनेकी प्रबल इच्छा रखते है। साहित्यमे महत्त्व प्राप्त करनेके लिये लोगोको बदलेमे बड़े बड़े दण्ड—बड़ी बड़ी विपत्तियाँ सहनी पड़ती हैं। उसके लिये मनुष्यको मानसिक और शारीरिक श्रम करना पड़ता है, आत्म-त्याग करना पड़ता है, सुख-चैन छोड़ना पड़ता है और प्रायः विपत्तियाँ भी झेलनी पड़ती हैं। प्रतिभाके कारण जहाँ मनुष्यकी कीर्ति होती है, वहाँ उसे दुःख भी सहना पड़ता है।

संसारकी सभी चीजे जल्दी नष्ट हो जाती हैं। जीवन बहुत

शीघ्र व्यतीत हो जाता है, मृत्यु अवश्य और वहुत शीघ्र आती है। साहित्य-क्षेत्रमे लोग क्यो उतरते हैं ? क्या यश और कीर्त्तिके लिये ? इतने वड़े ससारके एक छोटेसे कोनेमे यदि किसीका कुछ नाम हो ही जाय, तो उससे क्या होता है ? किसी वहुत वड़ी झीलके एक कोनेमे यदि एक ककड़ी गिरनेके कारण कुछ क्षोभ ही हो जाय, तो उससे क्या होता है ? सौन्दर्य्य क्या है ? वह एक ऐसा गुलाव है जो एक ही दिन रहता है। स्वास्थ्य क्या है ? वह एक ऐसी ईश्वरीय देन है, जिसे तुम क्षण भरमे खो सकते हो। यौवन और वल क्या है ? दोनो ऐसे खजाने हैं, जिन्हे काल नित्य खाली करता रहता है। मनुष्यके सभी सुख नश्वर हैं। इतने वड़े विश्वमे मनुष्य कैसा तुच्छ पदार्थ है ? इस अनन्त कालके सामने उसका छोटासा जीवन क्या चीज है ? ज्ञानके इतने विशाल और अनन्त भाण्डारमे भी एक मनुष्यके पल्ले कितना थोड़ा ज्ञान पड़ता है ? ये सव वातें ऐसी है, जिन पर थोड़ा सा विचार करते ही वड़े वड़े समझदार उदास और दुखी हो जाते हैं—उनकी अक्ल कुछ भी काम नहीं करती।

लेकिन इसके साथ ही एक वात और भी है। अपनी सभी शक्तियोकी वृद्धि और उपयोग करना भी प्रत्येक मनुष्य और स्त्री का परम कर्तव्य और धर्म्म है। मन और शरीरका प्रत्येक कार्य पूरा पूरा और वहुत ही अच्छी तरह होना चाहिए। हमे सव वातोका ज्ञान भी प्राप्त करना चाहिए और हमे अपने कर्तव्यो का पालन भी करना चाहिये, पर इस वातका सदा ध्यान रहना चाहिए कि किसी काम या किसी वातमे अति न हो, क्योकि अतिका परिणाम वहुत ही वुरा होता है। जो मनुष्य

किसी काममे अति नही करता, सब शक्तियोका समान-रूपसे उपयोग करता है, वह बड़े ही सुखसे अपनी पूरी आयु तक जीवित रहता है और इस प्रकार अपने जीवनको बढ़ाकर उसका सदुपयोग कर सकता है।

दार्शनिक तथा धनवान् और जमीदार आदि ऐसे लोग जिनकी आय निश्चित होती है और जिन्हे उसके लिये चिन्ता नही करनी पडती, प्राय अपनी पूरी आयु भोगते हैं। उनसे कम उमर व्यापारियो और देहातियो या मालियो आदिकी होती है और उनसे भी कम चिकित्सको और कसाइयोकी। कल-कारखानो और खानो आदिमे काम करनेवालो और सङ्गतराशो आदिकी आयु उनसे भी कम होती है। स्त्रियोको जीविकाकी चिन्ता नही करनी पड़ती, इसलिये उनकी आयु पुरुषोसे अधिक होती है। व्याहे हुए आदमी विना व्याहे हुए आदमियोसे अधिक जीते है। सदाचारी और परोपकारी मनुष्य भी अपेक्षाकृत अधिक दिनो तक जीवित रहते हैं। नैतिक शुद्धता और शारीरिक स्वास्थ्यका प्राय उतना ही घनिष्ट सम्बन्ध है, जितना कि आत्मा और शरीरका है। इसके अतिरिक्त चित्तकी शान्ति और सुखका भी दीर्घ जीवनके साथ बहुत कुछ सम्बन्ध है।

आज-कल मानसिक श्रम बहुत ही बढ़ता जा रहा है, जिसके कारण लोगोकी आयु बहुत घटने लग गई है। आज-कल लोग पढ़ाई पर इतना ज्यादा जोर देते हैं कि मानो हमे अपने शरीर और मस्तिष्ककी चिन्ताकी आवश्यकता ही नही है। विद्यार्थियोमे भी खूब प्रतिद्वन्द्विता होती है और शिक्षकोमे भी। छोटे छोटे वालकोके कोमल मस्तिष्कसे बहुत अधिक काम लिया जाता है और बहुत ही थोड़ी अवस्थामे उन्हे बहुत अधिक ज्ञान कराने

का प्रयत्न किया जाता है और इसके लिए उन्हे पुरस्कार दिये जाते हैं। पर उस स्वास्थ्यका कुछ भी ध्यान नही रखा जाता, जिसके सामने ये पुरस्कार बिलकुल तुच्छ हैं। यही कारण है कि अच्छे अच्छे पुरस्कार पानेवाले बालक आगे चलकर बिलकुल निकम्मे और बे-काम हो जाते हैं। जो बालक बोदे और मूर्ख होते हैं, वे बड़े होकर उन तेज और बुद्धिमान् बालकोसे कही अच्छे निकलते हैं। ज्ञान तो आगे चल कर भी अर्जित किया जा सकता है, पर स्वास्थ्य जब एक बार नष्ट हो जाता है, तब वह फिरसे प्राप्त नही किया जा सकता। इस लिये स्वास्थ्यको नष्ट करनेकी अपेक्षा मस्तिष्कको खाली छोड़ देना ही कही अच्छा है। आज-कलकी परीक्षा एक ऐसी वेदी है, जिस पर माता-पिता अपने बालकोकी बलि चढ़ाते हैं। बड़ी बड़ी परीक्षाओमे उत्तीर्ण होनेके उपरान्त उनमे प्राय. कुछ भी तत्त्व नही रह जाता। जो फल जल्दी पकता है, वह जल्दी सड़ भी जाता है।

शिक्षाका वास्तविक उद्देश्य यह होना चाहिए कि युवक जिस समय ससारमे प्रवेश करे, उस समय उसे अपने ऊपर तथा अपनी शक्तियो पर पूरा पूरा अधिकार हो। शक्तियोके नष्ट हो जाने पर शिक्षा प्रायः निरर्थक होती है। सन् १८८२ के अन्तमे टाइम्स पत्रमे निकला था कि सिविल-सर्विस-परीक्षामे उत्तीर्ण, जो सौ सिविलियन बम्बई प्रान्तमे नियुक्त हुए थे, उनमे नौ मर गये और दोको अपनी दुर्बलताके कारण काम छोड़ देना पड़ा। दस सिविलियन उनमेसे ऐसे निकले जिनकी शारीरिक अवस्था देखकर डाक्टरोने उन्हे कामके अयोग्य ठहरा दिया। दो आदमी जीन-सवारी अच्छी तरह न कर सकनेके कारण अलग कर दिये गये और आठ करीब करीब पागल हो गये। जब शासक-वर्गमे पहुँचे हुए लोगो

का यह हाल है, तब और वर्गोंकी क्या दशा होगी ? आज-कल जिधर देखो उधर स्त्री-शिक्षाकी ही धूम है। सब लोग बालिकाओ और स्त्रियोको पढ़ानेकी ही धुनमे लगे है। पर उन्हे यह नही मालूम कि अधिक मानसिक श्रमका बालको और पुरुषोकी अपेक्षा बालिकाओ और स्त्रियो पर और भी बुरा परिणाम होता है। पाश्चात्य देशोमे स्त्री-शिक्षाके कारण जो अनेक दोष उत्पन्न हुए है, उनमे स्त्रियोके स्वास्थ्यकी हानि भी एक है। बड़े बड़े विद्वान् अब इस बातको मानने लगे हैं कि पुरुषोके जिन कामोमे स्त्रियाँ आजकल लगाई जाती हैं, उनमेसे अधिकांशके लिये वे बिलकुल अयोग्य और असमर्थ होती है। जिन स्त्रियोको लोग पढ़ा-लिखाकर और उनसे तरह तरहके काम लेकर बिलकुल रोगी बना देते हैं, उनकी सन्तानसे भला क्या आशा की जा सकती है। तात्पर्य यह कि आज-कल जिन उपायोसे लोगोको शिक्षा देकर उन्नत करनेका प्रयत्न किया जाता है, वास्तवमे वे ही उपाय उनकी अवनतिके कारण होते है।

इन दोपो पर बड़े बड़े विद्वानोका ध्यान बहुत पहले आकृष्ट हुआ था और सन् १८६५ मे ब्रिस्टल नगरमे जो Science Congress हुई थी, उसमे कई बड़े बड़े डाक्टरो और विद्वानोने कहा था कि प्रस्तुत शिक्षा-प्रणाली बालकोको बहुत कुछ शारीरिक हानि पहुँचाती है और विशेषत. स्त्रियोके लिये तो वह और भी घातक होता है। आजकल बालकोके स्वास्थ्यका तो थोड़ा बहुत ध्यान रखा जाता है, पर इस बातका प्रयत्न नही होता कि उनके मस्तिष्क पर जोर कम पड़े। स्त्रियोको मानसिक श्रम करनेसे रोकनेके बदले उलटे उन्हे और अधिक उत्तेजना दी जाती है और इस प्रकार मनुष्य-जातिको हानि पहुँचाई जाती है।

स्त्रियोका शारीरिक संगठन ऐसा नही होता कि वे अधिक श्रम सह सके। अतः उन्हे कभी अधिक-श्रम-साध्य कामोमें न लगाना चाहिए। यह मत हमारा नहीं; बड़े बड़े डाक्टरो और विद्वानो का है। अतः जो लोग स्त्रियोको खूब पढ़ा-लिखा मर्दोंकी तरह उन्हे बैरिस्टर और डाक्टर बनाने अथवा जल या स्थल-सेनामे भर्ती होनेके योग्य बनानेकी धुनमे हो, उन्हें उक्त विचारोसे लाभ उठा कर समय पर ही सावधान हो जाना चाहिए।

सातवाँ प्रकरण

स्वास्थ्य और मनोविनोद

जब बहुत अधिक शारीरिक या मानसिक श्रम करनेसे मनुष्य बिलकुल थक जाता है, तब उसे विश्रामकी आवश्यकता होती। विश्राम करनेसे उसकी नष्ट शक्तियोकी फिरसे पूर्त्ति होती है और तब मनुष्य फिर पहलेकी तरह ज्योका त्यो शक्तिशाली हो जाता है। स्वयं निद्रा भी विश्राम ही है और यह निद्रा जितनी ही गाढ़ होगी, शरीरकी नष्टशक्तियोकी उतनी ही अधिक पूर्त्ति होगी। लेकिन इसके अतिरिक्त मानसिक श्रम करनेवालोके लिये एक और प्रकारके विश्रामकी आवश्यकता होती है और वह विश्राम कार्य्यके रूपमे होता है। भिन्न भिन्न जातियोका विश्राम एक दूसरेसे भिन्न प्रकारका होता है। हम भारतवासी प्राय. इधर उधर घूम-फिर कर, जंगलो और देहातोमे जाकर, भिन्न भिन्न स्थानो और प्रकारोकी यात्राएँ करके और हममेसे कुछ लोग सैर-शिकार करके विश्राम करते हैं।

जिस क्रियासे हमारे फेफड़ोको खूब अच्छी तरहसे फैलनेका अवसर मिले, हम उसीको व्यायाम कह सकते हैं। हमारे जीवनका केन्द्र बहुतसे अंशोमे हमारी छातीमे ही है। यदि यह बात ठीक हो कि हमारे सारे शरीरका रक्त एक घण्टेमे बारह

वार हमारे कलेजे और फेफड़ोमे होकर गुजरता है, तो अवश्य ही हमारी श्वास-क्रियाका महत्त्व भली भाँति प्रमाणित हो जायगा। हमारे शरीर तथा मनको स्वस्थ रखने और रग-पट्ठो आदिकी क्षति-पूर्त्तिके लिये श्वास-क्रियाकी बहुत बड़ी आवश्यकता है। हमारी छाती जितनी ही मजबूत होगी, हमारा दिमाग भी उतना ही मजबूत होगा और हमारे फेफड़ोंमे जितनी ही शक्ति होगी, हममे चिन्तन और विचार करनेकी शक्ति भी उतनी ही अधिक होगी। दृढ़ता-पूर्वक कोई विचार और निर्णय करनेके लिये अच्छी विचार-शक्तिके साथ साथ अच्छी शारीरिक और जीवन शक्तिकी भी आवश्यकता होती है। प्रत्येक मनुष्यकी नैतिक और मानसिक शक्ति उसके शारीरिक संगठन पर ही निर्भर होती है।

मनको ठीक दशामे रखने और उससे पूरा पूरा काम लेनेके लिये शरीरके प्रत्येक अंगका पूरा पूरा ध्यान रखनेकी बहुत बड़ी आवश्यकता होती है। जिन प्राकृतिक नियमोंके अनुसार मानव-शरीरकी सृष्टि और रचना होती है, मनुष्यको उन्ही नियमोका पालन करते हुए अपने जीवनका निर्वाह करना चाहिए। नहीं तो वह रोगी और पीड़ित हो जागया। इन नियमोका न तो कभी विरोध हो सकता है और न होना चाहिए। हमारा यह तात्पर्य नहीं है कि मनुष्य सदा अपनी प्रत्येक शारीरिक क्रियाका विचार ही करता रहे; क्योकि यह भी एक प्रकारका रोग ही है। लेकिन प्राकृतिक नियमोके अनुसार जीवन व्यतीत करनेके लिये इस बातकी आवश्यकता है कि प्रत्येक पूर्णशिक्षा-प्रणालीके अन्तर्गत जीवनके नियमोका कुछ ज्ञान भी आ जाय, क्योकि हमारा सारा सुख और शान्ति उसी शरीरके स्वास्थ्य पर निर्भर

है, जिसमे हमारी आत्मा रहती है और जिसके द्वारा हमारा मन काम करता है।

सिडनी स्मिथने कहा है—"विना स्वास्थ्य, प्रसन्नता असम्भव है, लेकिन उसकी प्राप्ति बहुत ही कठिन है। स्वास्थ्यसे मेरा यह तात्पर्य नही है कि शरीरमे भारी भारी रोग न हो, बल्कि शरीरके किसी अंगमे किसी प्रकारकी त्रुटि या दोष न होना चाहिए। मनुष्यमे पूर्ण बल, उत्साह और कार्य्य करनेके लिये तत्परता होनी चाहिए। इसे युवकोका दुर्भाग्य ही समझना चाहिए कि उनके माता-पिता उन्हे बल-पूर्वक, समयसे पहले ही और बहुत अधिक मानसिक श्रम करनेके लिये विवश करते हैं और इस प्रकार उनके एक अंग पर बहुत अधिक जोर पहुँचा कर उसे विगाड़ देते हैं और उन्हे शेष सब अगोके समान नही रहने देते। उनके ज्ञान-तन्तुओसे बहुत अधिक काम लिया जाता है और शारीरिक संग-ठनका कुछ भी ध्यान नही रखा जाता। मस्तिष्कको बहुत अधिक कार्य्य करना पड़ता है और शरीरको बहुत कम। मनका तो खूब पोषण होता है, पर भूख मारी जाती है और शरीरका यथेष्ट पोषण नही होता। इसीलिये समाजमे अधिकांश लोग रोगी, दुर्बल और पीले दिखाई देते हैं। एक विद्वान्‌के मतसे यह अव-नति और सब प्रकारकी दुर्दशाओसे बहुत ही बुरी है। इसकी पीड़ाका प्रतीकार या शान्ति, शहदकी मिठाससे नही हो सकती। जब तक मनुष्य नीरोग और स्वस्थ न हो, तब तक उसका जीवन वास्तवमे "जीवन" ही नहीं है। कहावत है—"एक तन्दुरुस्ती हजार न्यामत है।"

बालको और उनसे भी बढ कर बालिकाओको आज-कल जो हानि पहुँचाई जाती है, उसका वर्णन पिछले पृष्ठोमे हो चुका है,

यहाँ उनके दोहरानेकी आवश्यकता नहीं है। यहाँ हम केवल इतना ही और कहना चाहते हैं कि युवकोंको उनका प्राकृतिक दृढ़ शारीरिक संगठन तो मानसिक श्रम करनेके योग्य बना देता है, पर युवतियोंका कोमल संगठन उन्हें मानसिक श्रमके लिये बिलकुल ही अयोग्य रखता है।

आज-कलके जमानेका सबसे बड़ा दोष दुर्भाग्य-वश अधिक मानसिक श्रम है और विशेषत नगरोंमे यह दोष और भी अधिक पाया जाता है। व्यापार, ज्ञानार्जन, राजनीति, साहित्य आदिमे लोग प्राय बहुत ही लम्बे लम्बे डग बढ़ाते हैं, जिससे जीवन जल्दी जल्दी और बहुत अधिक नष्ट होता है। शारीरिक और मानसिक-श्रमसे हमारी जीवन-शक्ति क्षीण होती है और उस क्षीण अंशकी पूर्त्ति, भोजन, निद्रा और विश्रामसे होती है। पर क्षीण तो प्राय. बहुत अधिक अंश हो जाता है और हमारी दुर्बल पाचन-शक्ति उसकी यथेष्ट पूर्त्ति करनेमे असमर्थ होती है। यद्यपि हम पौष्टिक औषधें आदि खाकर कृत्रिम-रूपसे अपनी जीवन-शक्तिको कुछ जाग्रत कर सकते हैं, तथापि बिना व्यायाम आदिके उसे ठीक दशामे रखना प्राय. असम्भव ही है।

यदि मन या शरीरसे बहुत अधिक कार्य्य न लिया जाय, तो मनुष्य बहुत ही प्रसन्न रह सकता है। पर उस प्रसन्नताका पूरा पूरा उपयोग करनेके लिये विश्रान्तिकी आवश्यकता होती है। मनुष्य अपने जीवन पर बहुत ही अनुराग रखता है; जहाँ तक हो सके, आनन्द-पूर्वक अधिक समय तक जीवित रहनेकी उसकी स्वभाविक प्रवृत्ति होती है। सुकरातने अरिस्टोडीमससे पूछा था कि "ज्यो ही हमे अपने अस्तित्वका ज्ञान होता है, त्योंही हममे अपने जीवनके प्रति जो अनुराग उत्पन्न होता है, उसके सम्बन्धमे

तुम्हारा क्या विचार है ?" उसने उत्तर दिया कि "मेरी समझमे तो महान् और बुद्धिमान् कर्ता (परमेश्वर) ने अपनी कृतिको अधिक समय तक रक्षित रखनेका यह सबसे अच्छा उपाय निकाला है।" इस बातमें आज भी उतनी ही सत्यता है, जितनी आजसे दो हजार वर्ष पूर्व, इसके कहे जानेके सयय, थी। प्राचीन ग्रीक लोग अपने शरीरको ईश्वरके अंश-स्वरूप आत्माका मन्दिर समझते और उसके प्रति बहुत ही पूज्यभाव रखते थे। हमारे यहाँ मनु आदि प्राचीन ऋषियोने भी शरीर-रक्षाको बहुत ही आवश्यक और परम धर्म्म बतलाया है।

सुकरात बहुत बड़ा बुद्धिमान् था। उसने पुस्तके नही लिखी थी, वह केवल अपने मित्रो और शिष्योसे चलते-फिरते बात-चीत किया करता था। उसके उन्ही मित्रों और शिष्योने जो कुछ लिख रखा था, उसीसे हमें उसके सम्बन्धकी सब बाते मालूम होती हैं। सुकरातके सम्बन्धमे यह कहा जाता है कि वह अनेक प्रकारसे विश्राम करनेके अतिरिक्त काठके घोड़े पर भी सवारी किया करता था। जिस समय वह कोई शारीरिक व्यायाम नही करता था, उस समय अपने चित्तको प्रसन्न करनेके लिये वह एक प्रकारका बाजा बजाया करता था। उसका शिष्य प्लेटो भी खूब विश्राम करता था और अपने समयके व्यायाम करनेमे सब से बढ़ा-चढ़ा था और अरस्तूने लिखा है कि जीवनके आरोग्य के लिये विश्रामकी तरह खेल-कूद और मनोविनोद भी बहुत ही आवश्यक है। प्राचीन यूनानियो तथा आर्योंमे जो शिक्षा-प्रणाली थी, उससे मनुष्यके सारे शरीरकी समान-रूपसे उन्नति होती थी। प्राचीन आर्य्य-महर्षि जहाँ विद्या आदिमे पारंगत होते थे, वहाँ धनुष चलाने और अनेक प्रकारके शारीरिक व्यायाम

करनेमे भी निपुण होते थे और मनोविनोदके लिये तरह तरहकी कलाओंमें बड़े सिद्ध-हस्त होते थे। वे अच्छी तरह समझते थे कि नैतिक और मानसिक शिक्षाका मूल आधार शारीरिक संगठन ही है। वे विद्याका अध्ययन करके मनको संस्कृत करनेके साथ ही साथ शारीरिक संगठनको दृढ़ करनेकी भी आवश्यकता समझते थे। उनका सिद्धान्त था कि बिना शारीरिक दृढ़ताके मानसिक दृढ़ता हो नही सकती।

यदि हम यह चाहते हो कि हम सदा प्रत्येक कार्य्यको बड़े ही उत्साह और तत्परतासे करनेमे समर्थ हो,तो हमे बीच बीचमे मनो विनोद और विश्राम भी करते रहना चाहिए। स्वास्थ्यकी रक्षा केवल इसी प्रकार हो सकती है। यदि धनुष पर सदा तीर चढ़ा रहे और उसकी डोरी बराबर खिची रहे, तो वह बेकाम हो जायगा और उसका बल जाता रहेगा। एकबार एक व्याध कही चल जा रहा था। रास्तेमे उसने देखा कि एक महात्मा अपने मकान के दरवाजे पर बैठा हुआ हाथमे एक चिड़िया लेकर उसे बड़ी ही प्रसन्नतासे देख रहा था। उसे यह देखकर बड़ा ही दुःख हुआ कि एक महात्मा इस प्रकार अपना समय व्यर्थ नष्ट कर रहा है। उसका दु.ख और आश्चर्य देख कर महात्माने उससे पूछा—'तुम सदा अपना धनुष चढ़ाये क्यो नही रहते ?" उसने उत्तर दिया—"जिसमे उसका जोर टूट न जाय।" महात्माने कहा—"बस यही दशा मेरे मनकी भी समझो। यदि मैं उसे विश्राम देकर सुखी न करूँ, तो उसकी शक्ति भी नष्ट हो जायगी।"

इस प्रकार खाली बैठना, कोरा खाली बैठनाही नही है। जिन मानसिक कार्य करनेवालोको रात रात भर नीद न आती हो, दिल धड़कता हो, कमजोरी हो, मिजाज खराब हो गया हो या भोजन

न पचता हो, उनके लिये यही एकमात्र और सबसे अच्छी दवा है। विश्राम-पूर्ण विश्रामसे बढ़ कर ऐसे रोगियोके लिये और कोई नुस्खा ही नही है। लेकिन कुछ लोग ऐसे भी होते हैं, जो विश्राम नही कर सकते और जो खाली बैठनेको नैतिक दृष्टिसे बहुत ही बुरा समझते हैं। लेकिन ऐसे लोगोको समझ लेना चाहिए कि मनुष्यके सुख और कल्याणके लिये विश्राम भी उतना ही आवश्यक है जितना कि काम करना आवश्यक है।

अनेक महापुरुष ऐसे हो गये हैं,जो अपने कामके साथ साथ व्यायाम या मनोविनोद भी किया करते थे। एक बार अगेसिलास अपने लड़केका दिल बहलानेके लिये एक छड़ीका घोड़ा बनाकर इधर उधर घूम रहा था। इतनेमें एक आदमी उससे मिलनेके लिये आया। अगेसिलासने उससे कहा कि जब तक तुम भी एक लड़केके बाप न हो जाओ, तब तक यह हाल किसीसे न कहना। फ्रान्सका राजा चतुर्थ हेनरी एक बार अपने कमरेमे घोड़ा बनकर घुटनोके बल चल रहा था। एक बच्चा उसकी पीठ पर सवार था और बाकी बच्चे हेनरी घोड़ेको जल्दी जल्दी चलनेके लिये कह रहे थे। इतनेमे कहीसे अचानक एक राजदूत आ पहुँचा। हेनरीने पूछा—"क्या आपके भी लड़के-बाले हैं?" उसने कहा—"हाँ श्रीमान्।" राजाने कहा—"मै तो इन लोगोके साथ इसी तरह खेला करता हूँ।" इंगलैण्डके प्रसिद्ध प्रधान मंत्री मि० ग्लैडस्टन भी एक बार इसी तरह घोड़े बनकर पीठ पर अपने पोतेको चढ़ाये हुए इधर उधर घूम रहे थे। इतनेमे एक आदमी उनसे मिलनेके लिये आया। उन्होने कहा—"भाई, जरा ठहर जाओ। मैं इसे एकबार और घुमा लूँ तो तुमसे बाते करता हूँ।" इसी प्रकार और भी

अनेक महापुरुष हो गये है, जो इसी तरहके और और कामोसे अपना मन वहलाया करते थे।

एक विद्वान्‌की सम्मति है कि जो मनुष्य अपना स्वास्थ्य वनाये रखना चाहता हो, उसे अपने मुख्य कार्य्यके अतिरिक्त समय समयपर और भी अनेक प्रकारके ऐसे कार्य्य करने चाहिए, जिनसे उसका मनोविनोद हो और तरह तरहके कामोमे सैर, शिकार, तैरना, दौड़ना, जीन-सवारी और व्यायाम आदि सभी सम्मिलित हैं। एक दूसरे विद्वान्‌का मत है कि लगातार किसी कामको दो घण्टे तक करनेके उपरान्त मनुष्यको उचित है कि थोड़ी देरके लिये वह किसी दूसरे हलके काममे लग जाय, जिसमे उसे कुछ विश्राम मिले। इस प्रकार मनको थोड़ी देरके लिये दूसरे काममे लगाना वहुत ही लाभदायक होता है। सीजर ने एक स्थान पर लिखा है—"जिस समय घोर युद्ध होता रहता है, उस समय भी रण-क्षेत्रमे अपने खेमेमे बैठे बैठे मुझे वहुतसी दूसरी वातो पर विचार करनेका अवसर मिल जाता है।" वहुतसी दूसरी बातो पर विचार करना ही कदाचित् वलका मूल-मन्त्र है।

खाली रहना या वेकारी दो प्रकारकी होती है। एक वेकारी तो वह है, जिसमे मनुष्य अपने अस्तित्व और समय आदिका नाश करता है और दूसरी वेकारी वह है, जिसमे मनुष्य अपने अस्तित्व और समय आदिका सदुपयोग करता है। जो लोग वचे हुए समयको किसी दूसरे काममे लगा कर अपना जी वह-लाते है, उन्हीकी फ़ुरसत हमेशः कदर करनेके काबिल होती है। लिखने-पढ़नेवाले लोग कभी अपना समय व्यर्थ नष्ट नही करना चाहते और व्यायाम आदिकी ओर भी उनकी प्रवृत्ति नही होती,

इसलिये वे एक प्रकारकी पढ़ाई-लिखाई छोड़कर दूसरे प्रकारकी पढ़ाई-लिखाईमे लग जाते है। फ्रान्सके एक चैन्सलर थे, जो अध्ययनको बदल देनेको ही विश्राम समझते थे। एक न्यायाधीश थे, जो फुरसतके समय बीजगणितके प्रश्न निकाला करते थे। एक बैरिस्टर साहब जब अपनी गृहस्थीके झगड़ोसे बहुत तंग आ जाते थे,तब बैठ कर हिसाब करने लग जाते थे और कहते थे कि इससे मेरी सारी चिन्ताएँ मानो सो जाती हैं। एक जर्मन विद्वान् जब मानसिक श्रम करता करता थक जाता था, तब वह खिड़की के पास खड़ा होकर अपने पड़ोसीकी छतकी ईंटे गिना करता था। स्पिनोजा थक कर मित्रोसे बात-चीत करने लगता था और कभी कभी मकड़ियोकी लड़ाई देखने लग जाता था। यह लड़ाई देख कर वह इतना हँसता था कि उसकी आँखोसे आँसू बहने लगते थे। फ्रेडरिक दी ग्रेट वास्तवमे केवल योद्धा ही था, पर वह अपना जी बहलानेके लिये ऐसी तुकबन्दी करता था, जिसे ठीक करनेके समय उसका भद्दापन देखकर वाल्टेयरको हँसी आती थी। एक बहुत बड़ा दार्शनिक कठपुतली नचानेमे बड़ा सिद्ध-हस्त था। उसने थियेटर भी खड़ा किया था, जिसका वह स्वयं प्रबन्ध करता था और स्वयं ही जिसके लिये नाटक लिखता था। इसी प्रकार अनेक ऐसे वैज्ञानिक, योद्धा और शासक आदि हो गये हैं,जो फुरसतके वक्त अच्छी अच्छी कविता किया करते थे और इस प्रकार अपना जी बहलाया करते थे।

बड़े बड़े राजनीतिज्ञ और शासक जब राज्य-सम्बन्धी चिन्ताओंसे घबरा जाते हैं, तब साहित्य उनके उद्विग्न चित्तको शान्त करनेमे बहुत बड़ी सहायता देता है। उनके लिये राज-नीतिका द्वार तो कभी कभी बन्द हो जाता है, पर साहित्यका

द्वार सदा खुला रहता है। एडिसन जब बहुत दुखी या चिन्तित होता था, तब अनुवाद करने लग जाता था। पिटने अपना पद छोड़ने पर लैटिन और ग्रीकका अध्ययन आरम्भ किया था। लार्ड कैनिंग और वेलेसली भी अनुवादमे अपना समय बिताया करते थे। लार्ड नारमनबीने एक उपन्यास लिखा था और अर्ल-रसालने बहुत ही निम्न कोटिका एक उपन्यास और एक नाटक लिखा था। लार्ड ब्रूहमने तो अनेक विषयो पर अच्छे अच्छे ग्रन्थ और लेख लिखे थे। लार्ड डरबी और मि० ग्लैडस्टन प्राचीन साहित्यका अध्ययन किया करते थे। इन दोनोके दो ग्रन्थ ऐसे है, जो बहुत दिनोतक साहित्य-क्षेत्रमे इनकी कीर्त्ति और स्मृति बनाये रखेंगे। बहुतसे राजनीतिज्ञ ऐसे भी हो गये हैं, जो कभी चिन्तित या दुखी रहना जानते ही न थे। स्वय सदा प्रसन्न रहते थे और साथ ही दूसरेको भी खूब हँसाया करते थे। सर राबर्ट वालपोल और लार्ड मेलबोर्न ऐसे ही लोगोमे से थे। लार्ड एलथार्प जब सन् १८३२ मे अपने पदसे च्युत हो गये, तब वे तनिक भी चिन्तित या दुखी नही हुए। इस्तीफा देनेके दूसरे ही दिन वे बहुतसे पौधे आदि खरीद लाये और अपने मालीको उनके सम्बन्धमे आवश्यक बाते लिखने बैठ गये थे।

एक महात्माने कहा था—"मेरे पास बहुत अच्छी अच्छी पुस्तके है और एक बहुत बढ़िया बाग है, जिसमे पौधे आदि बड़ी ही प्रसन्नतासे मै अपने ही हाथ लगाता हूँ। भला इससे बढ़ कर शुद्ध मनोविनोद और कौनसा हो सकता है कि हम अपने बोये हुए बीजोसे ही पृथ्वीको फूलते देखे?" और वास्तवमे अपने कृत्योंका इससे अच्छा और कौनसा शुभ और सुखदायक फल हो सकता है। डायोक्लीशियनने जब अपना राज्याधिकार

छोड़ दिया, तब कुछ लोगोने उसे फिरसे ग्रहण करनेके लिये उसके पास प्रार्थना-पत्र भेजा। प्रार्थना-पत्र लानेवालेसे उसने कहा—"मैंने जो पेड़ लगाये हैं और जो बढ़िया तरबूज तैयार किये है, उन्हे यदि तुम देखते तो कभी मुझसे इस बातकी प्रार्थना न करते!" प्रसिद्ध विद्वान् वरजिलकी पहली कामना अच्छे दार्शनिक होनेकी और दूसरी कामना अच्छे खेतिहर होनेकी थी। केटो कहा करता था कि बुढ़ापेमे जितना आनन्द खेती-बारी और पौधे लगानेसे होता है उतना और किसी बातसे नही होता। यदि उपयोगिता, निर्दोषिता, प्राचीनता और प्रतिष्ठा आदिके विचारसे देखा जाय, तो दर्शनके उपरान्त इसीका नम्बर आता है।

लार्ड बेकनने अपने निबन्धमे लिखा है—"सर्वशक्तिमान् परमेश्वरने पहले पहल एक बाग लगाया और वास्तवमे मनुष्यके मनोविनोदोमेसे यह सबसे अधिक शुद्ध और पवित्र है। मनुष्यकी आत्माको यही सबसे अधिक प्रफुल्लित और सुखी करता है। इसके बिना बड़ी बडी इमारतो और महलोकी शोभा ही नही होती और जब सभ्यताका विकाश होता है, तब मनुष्य अच्छी इमारते बनाना पहले सीखता है और अच्छे बाग लगाना पीछे। मानो बाग लगानेकी विद्या अधिक कठिन और उत्तम है।" वह स्वयं बागवानीका काम बहुत अच्छी तरह जानता था। पोप कविने भी अपने मकानके चारोओर स्वय अपने हाथसे तरह तरहके पेड-पौधे लगाये थे। काउपर भी स्वय अच्छा माली था। जार्ज स्टेफेन्सन सदा इस बातसे परेशान रहता था कि उसकी लगाई हुई ककड़ियाँ सदा टेढ़ी होती थीं। तब उसने शीशेकी बड़ी बड़ी लम्बी बोतले बनवाई। जब उनमे रखे हुए फल बढ़ाकर सीधे होने लगे, तब कहीं जाकर उसका समाधान

हुआ। सर वाल्टर स्काटको भी पेड़ लगानेका बहुत शौक था और वह अपने हाथसे फावड़ा और कुल्हाड़ी भी खूब चलाता था।

इंगलैण्डका प्रधान मन्त्री पिट छुट्टीके दिन अपने गाँव पर चला जाता था और वही पेड़ोके बीचमेसे फावड़ा चला कर नई नई पगडडियाँ निकालता था। डा० व्हाटेलेको जब दवाखानेकी जरूरत होती थी, तव वह उसके बदलेमे एक पेड़ काट डालता था। जब जब उसकी तबीयत खराब होती थी, तब तब वह कुल्हाड़ी लेकर जंगलकी तरफ निकल जाता था। मि० ग्लैड-स्टनके वृद्धावस्था तक भी पहुँच कर स्वस्थ और नीरोग रहनेका मुख्य कारण यही था कि उन्होने अपने जीवन-कालमे बहुतसे पेड काट गिराये थे। स्काटका कथन है—"व्यायाम चाहे शारीरिक हो चाहे मानसिक, उसका परिणाम सदा बहुत ही अच्छा होता है। उससे हमे नीद भी बहुत अच्छी तरह आती है और हमारा जागनेका समय भी बड़ी प्रसन्नतासे बीतता है और पुस्तकका समय सुखसे बितानेके लिये थोड़ा श्रम करना भी बहुत ही आवश्यक है।" लार्ड कालिंगउड जल-सेनाकी नौकरी छोड़ने पर अपने बागमे मामूली मजदूरोकी तरह खाइयाँ खोदा करता था। न्यूबरने वृद्धावस्थामे एक खेत खरीदा था, जिसे वह अपने हाथसे जोता करता था। इतिहासका अध्ययन करते समय वह गाजर बोता और जानवरोको चारा खिलाता था और सत्तर वर्षकी अवस्थामे वह दस फुट चौड़ी खाई कूदकर पार कर जाता था। सिडनीस्मिथ, एडिनबरा रिव्यूके लिये लेख लिखते समय उठकर दरवाजे पर आ खड़ा होता था और वहीसे बड़े भोपूमे मुँह लगा कर अपने हरवाहेको काम बतलाया करता था।

जब लूथरको बदहजमी हो गई, तब उसके एक मित्रने उसे सम्मति दी कि तुम नित्य खूब व्यायाम किया करो। उस समय लूथरने जंगलमे दो दिन तक शिकार खेला था और खूब दौड़-धूप कर दो खरगोश और दो तीतर पकड़े थे। जब वह जानवरोके पीछे दौड़ता या पेड़ो पर चढ़ता था, तब उसे बहुत आनन्द आता था। वालटेयरको भी जब बदहजमी होती थी, तब वह शिकार खेलने निकल जाता था। इससे उसका भोजन पच जाता था और खूब भूख लगती थी। लार्ड एलडन भी शिकार के बहुत शौकीन थे। शेरिडन बहुत अच्छा निशानेबाज था। पिटका मन तो शिकारमे नही लगता था, पर वह केवल व्यायाम के विचारसे ही शिकार खेला करता था।

सब प्रकारके व्यायामोसे घोड़ेकी सवारीको लोग बहुत अच्छा व्यायाम मानते हैं। जीन मानो स्वास्थ्यका आधार है। जीन सवारोसे रग-पट्ठो और फेफड़ो पर जोर पहुँचता है और साँस लेनेके लिये खूब अच्छी साफ हवा मिलती है। खून खूब साफ होता है और शरीरके बाहरी और भीतरी सभी भागोमे बहुत अच्छी तरह हवा पहुँचती है। जीन सवारी करनेवालेको कभी पित्त या वातकी कोई बीमारी नही होती। कारलाइलसे किसीने पूछा—"तुम्हारा डाक्टर कौन है?" उसने उत्तर दिया—"घोड़ा।" सिडेनहम जीन सवारीको इतना अच्छा समझता था कि उसने अपनी एक चिकित्सा-सम्बन्धी पुस्तकमे लिखा है कि "यदि किसीको कोई ऐसी दवा मिल जाय, जिससे मनुष्यके शरीरको उतना ही लाभ पहुँचे, जितना कि दिनमे दो बार घोड़े पर सवार होकर घूमनेसे होता है, तो समझना चाहिए कि उसे पारस पत्थर मिल गया।" पोपने लिखा है कि लार्ड रसल नामके एक आदमी

थे, जिन्हे बिलकुल भूख नही लगती थी और जिनका स्वास्थ्य बहुत खराब हो गया था। वे घोड़े पर सवार होकर और अपने कुत्तो को साथ लेकर जंगलमें शिकार खेलने निकल जाते थे। थोड़ी ही देर बाद उन्हे खूब भूख लगती थी और वे घर लौट आते थे। इसी तरह और भी बहुतसे ऐसे लोग हो गये हैं, जिन्हे किसी प्रकारके व्यायाम या औषधि आदिसे कोई लाभ नही हुआ और जिनका स्वास्थ्य केवल जीनसवारी करनेसे ही सुधरा।

लार्ड वेलिग्टन जिस समय स्पेनमे भागते हुए फ्रान्सीसियोका पीछा कर रहे थे, उस समय भी उन्होने लोमड़ीका शिकार नही छोड़ा था। एक बार इसी लोमड़ीके शिकारमे लगे रहनेके कारण ही उन्हे अपने एक मित्रको एक बहुत ही आवश्यक और महत्त्व-पूर्ण सार्वजनिक प्रश्नका उत्तर भेजनेमे बहुत अधिक विलम्ब हो गया था। लार्ड पामर्स्टन नित्य कई घण्टे जीन-सवारी किया करते थे। जब सर फ्रान्सिस बरडटसे हेडन चित्रकारने पूछा कि इतनी वृद्धावस्था तक भी आपका स्वास्थ्य किस प्रकार बना रहा, तब उन्होने उत्तर दिया कि 'मै प्रायः स्नान किया करता हूँ, भोजनके समयको छोड़ कर और कभी शराब नही पीता और जहाँ तक हो सकता है, खूब शिकार किया करता हूँ।

लेकिन सवारीके लिये घोड़ा रखने और बन्दूक लेकर शिकार करनेमे बहुत खर्च पड़ता है और ये दोनो काम केवल सम्पन्न लोग ही कर सकते हैं। लेकिन सर्व साधारण इन बातोसे लाभ नही उठा सकते। ऐसे लोगोके लिये भी मनोविनोदके साथ साथ अपना स्वास्थ्य सुधारनेके बहुतसे उपाय है, जिनमेसे टह-लना सर्वश्रेष्ठ है। यह एक ऐसा काम है, जिसे सब लोग बहुत ही सहजमे और बिना किसी प्रकारके व्ययके कर सकते हैं। यदि

ईश्वर सामर्थ्य दे, तो आदमी बाइसिकिल भी रख सकता है। खाली टहलनेमें कुछ विशेष खर्च नहीं होता; केवल थोड़ासा समय लगता है और जरा जूता घिसता है। नाव खेने या जीन-सवारी करनेकी तरह इसके लिये किसी प्रकारकी तैयारीकी भी आवश्यकता नहीं होती। जब जी चाहे तभी आदमी टहलनेके लिये निकल सकता है। इसमें एक विशेषता यह भी है कि मस्तिष्कके काममें इससे कोई बाधा नहीं पहुँचती। जिस प्रकार पढ़नेके समय मनुष्यका मस्तिष्क काम करता है, उसी प्रकार टहलनेके समय भी करता है। ऐसे बहुतसे महात्मा, विद्वान् और धनवान् हो गये हैं, जो समय समय पर पैदल किसी देहात या जंगलकी तरफ निकल जाते थे और बड़े बड़े चक्कर लगा कर अपने मनको शान्त और प्रसन्न करनेके साथ ही अपना स्वास्थ्य भी सुधार लेते थे। सिसरोने दो ऐसे महात्माओंका जिक्र किया है, जो सांसारिक चिन्ताएँ छोड़ कर प्रायः देहात चले जाते थे और वहाँ छोटे छोटे लड़कोंसे खेला करते थे, या समुद्रके किनारे जाकर घोंघे चुनते थे। उसने एक स्थान पर लिखा है कि "जो मनुष्य कभी कभी अपने सब काम नहीं छोड़ देता, मेरी सम्मतिमें वह वास्तवमें कभी स्वतंत्र नहीं है।" एक और स्थान पर उसने लिखा है—"एक ऐसा स्वर्ग अवश्य होना चाहिए जहाँ, सुस्ती और अकर्मण्यताके कारण नहीं, बल्कि अच्छी तरह विश्राम करनेके लिये समय समय पर हम पहुँच जाया करें।"

प्राचीन आर्य्य लोग टहलनेके महत्त्व और लाभसे भली भाँति परिचित थे। हमारे यहाँ चारों धाम तथा अन्यान्य अनेक प्रकारकी यात्राओंका जो विधान है, उससे सिद्ध होता है कि वे

लोग पैदल चलने फिरनेके ही नही, बल्कि लम्बी लम्बी यात्राएँ करनेके भी बहुत बड़े पक्षपाती थे। पैदल चलनेकी उपयोगिता उनकी समझमे इतनी अधिक थी कि उन्होने उसे धर्म्मका एक प्रधान अंग बना दिया था और उन्हीकी कृपासे अब भी भारतवर्षमे ऐसे हजारो आदमी मौजूद हैं, जिन्होने पैदल भारतके चारो कोनो तक यात्रा की है। इन बड़ी बड़ी यात्राओके अतिरिक्त प्रत्येक तीर्थके आसपासकी अनेक छोटी यात्राएँ और उनकी परिक्रमाएँ आदि भी है। जो लोग ये यात्राएँ और परिक्रमाएँ करते है, उन्हे पैदल चलनेका उत्तम फल भी होता है और प्रकृतिके निरीक्षण तथा देशका ज्ञान प्राप्त करनेका भी बहुत अच्छा अवसर मिलता है।

पाश्चात्य देशोमे भी बहुतसे ऐसे महात्मा हो गये है, जो प्रायः बड़ी बड़ी यात्राएँ किया करते थे अथवा यो ही नित्य मीलोका चक्कर लगाया करते थे। प्रसिद्ध दार्शनिक हाब्स वृद्धावस्थामे भी नित्य बहुत तड़के उठ कर पासकी किसी पहाडी पर चढ़ जाता था। इमेनुअल कैण्ट बारहो महीने चाहे कड़ाकेका जाड़ा पड़ता हो और चाहे मूसलधार पानी बरसता हो— बराबर टहलता था। आरम्भमे वह बहुत ही दुबला पतला और कमजोर था, पर संयम-पूर्वक रहने और नित्य टहलनेकी बदौलत ही उसने अस्सी वर्षकी आयु पाई थी। हाब्सकी अवस्था तो मरनेके समय बानवे वर्षकी थी। इन दोनो दार्शनिकोके उदाहरणसे सिद्ध है कि यदि मनुष्यका शरीर नीरोग रहे, तो उसका मन भी काम करनेमे खूब समर्थ होगा और यदि वह बहुत ही वृद्ध हो जाय, तो भी उसमे गहन विषयो पर बहुत अच्छी तरह विचार करनेकी शक्ति बनी रहेगी।

प्रसिद्ध अमेरिकन ग्रन्थकार टियोथी डवाइटका मस्तिष्क बहुत अधिक काम करनेके कारण खराब हो गया था। सत्रह वर्षकी अवस्थामे ही उसने एक स्कूलमे पढ़ानेका काम आरम्भ कर दिया था। वह नित्य छः घण्टे तक लड़कोको पढ़ाता था और नौ घण्टे तक स्वयं पढ़ता था। किसी प्रकारका व्यायाम वह बिलकुल न करता था। उसके इस पागलपनका परिणाम यह हुआ कि कुछ दिनोमे उसका दिमाग बिलकुल कमजोर और खराब हो गया और उसमे लगातार पन्द्रह मिनट तक पढ़नेकी भी शक्ति न रह गई। धीरे धीरे उसकी आँखोने भी जवाब देना शुरू कर दिया और उसे लिखना-पढ़ना छोड़ देना पड़ा। लेकिन उसका मन तब तक बराबर काम करता था। तब बहुत सोच समझ कर अन्तमे उसने टहलनेकी ठानी। उसने पैदल लम्बी लम्बी यात्राएँ की, जिससे उसका स्वास्थ्य भी सुधर गया और आँखें भी ठीक हो गई और तब उसने कई खण्डोमे अमेरिकाके संयुक्त राज्योकी यात्राका बहुत ही उत्तम वर्णन लिखा।

बरमिघमके प्रकाशक और पुस्तक-विक्रेता विलियम हट्टनने जब सत्तर वर्षकी अवस्थामे अपना सब काम छोड़ दिया, तब उसे इस बातकी चिन्ता लगी कि मै अपना समय किस प्रकार बिताऊँ। बहुत कुछ सोच-विचार कर उसने पैदल भ्रमण करना निश्चय किया और थोड़े ही दिनोमे इस प्रकार सारे इंगलैण्डकी यात्रा कर डाली। अठहत्तर वर्षकी अवस्थामे उसने पैंतीस दिनोमे छः सौ एक मीलकी यात्रा की थी। उसने अपने भ्रमणके सम्बन्धमे अनेक पुस्तके भी प्रकाशित की थी और पचासी वर्षकी अवस्था तक और भी अनेक छोटे बड़े भ्रमण किये थे। अट्ठासी वर्षकी अवस्थामे उसने अपनी डायरीमे लिखा था—"बयासी वर्षकी

अवस्थामे मैं अपने आपको बिलकुल जवान समझता था। मैं बिना किसी प्रकारकी थकावटके एक दिनमे चालीस मील चल सकता था।" उसकी डायरीके अन्तमे लिखा हुआ था—"आज ११ अक्तूबर मेरा जन्म दिन है। आज मेरा नव्वेवाँ वर्ष आरम्भ होता है और मैंने आज दस मीलका चक्कर लगाया है।" उसकी कन्याने उसकी जो जीवनी लिखी है, उसमे उसने बतलाया है कि वह सदा अपनी चलाईको ही अपनी जीवनी-शक्तिका प्रमाण समझता था और उसका विश्वास था कि जिस दिन मेरा चलना बन्द होगा, उसी दिन मेरे जीवनका भी अन्त होगा और वास्तवमे हुआ भी यही। बानवे वर्षकी अवस्थामे उसका चलना-फिरना बन्द हुआ और तभी उसकी मृत्यु भी हुई।

बीथोवेन मरनेसे कुछ दिनो पहले बहुत कमजोर और बहरा हो गया था। उसमे दो विशेषताएँ थी। एक तो यह कि वह सदा देहातोमे चक्कर लगाया करता था और दूसरी यह कि वह सदा अपने रहनेका मकान बदला करता था। उसके न तो स्त्री थी और न कोई रहनेका निश्चित स्थान। जो मकान वह लेता था, उसमे उसे एक न एक दोष दिखलाई देता था और वह उसे छोड़ कर दूसरे मकानमे चला जाता। इसके अतिरिक्त वह देहातोमे खूब घूमता था। वह कहा करता था कि चलनेसे मेरे दिमागकी बेचैनी दूर होती है और मुझे खूब नीद आती है। स्काट लंगड़ा होने पर भी खूब चलता था। डिकेन्स, विलसन, सूदे और वर्ड्स्वर्थ भी खूब चलनेवाले थे। विलसन सिर्फ चलनेवाला ही नही था, बल्कि तेज दौड़नेवाला, कूदनेवाला और मुक्केबाज भी था। उसका शरीर खूब हृष्ट-पुष्ट और बलिष्ठ था। उसने फुरसतके समय ही सारे इंगलैण्ड, स्काटलैण्ड और आयर्लैण्डकी यात्रा कर डाली थी।

जब राजा चतुर्थ जार्ज एडिनवरा पहुँचे, तब वह वहाँसे वावन मील दूर केलसो नामक स्थान पर था। उसने वग्घी पर जानेका विचार किया, पर उसे जगह नही मिली। दूसरे दिन सवेरे चार वजे वह उठा और नहा धोकर चल पड़ा और वावन मील चल कर दो पहरको भोजनके समय वह एडिनवरा पहुँच गया।

डा० आर्नल्ड अपने शिष्योके साथ खूब दौड़ा, तैरा और कूपा करता था और जो समय वचता था, उसमे वह पेड़ लगाया और टहला करता था। वह ऊँचे-ऊँचे पहाड़ो पर भी चढ़ा करता था और वहाँकी हवासे उसकी सारी थकावट मिट जाती थी और चित्त प्रफुल्लित हो जाता था। वास्तवमे पहाड़परकी हवा होती भी वहुत ही लाभदायक और पुष्टकर है। अधिक मानसिक श्रम करनेसे जो लोग वहुत ही दुर्वल हो गये हैं, उनके लिये पहाड़की हवाको अक्सीर ही समझिए।

पर कभी-कभी अच्छी वातोमे भी कुछ दोष मिलते है। युरोपका पहाड़ी प्रदेश स्विजरलैण्ड वड़ा ही रमणीक है और वड़ी दूरसे लोग वहाँ सैर करने और पहाड़ो पर चढ़नेके लिये जाते हैं। वहुत अधिक ऊँचाई पर चढ़ जानेसे कभी-कभी रक्त-संचालन वहुत वढ़ जाता है, जिससे मनुष्यको वहुत कष्ट होता है, उसे नींद भी नही आती। इसलिये उसे पहाड़से कुछ नीचे उतर आना पड़ता है। हमारे यहाँ जो वदरी-केदारकी यात्रा करने जाते है, लौटने पर उनमेसे वहुतोको दस्त आने लगते हैं। इसलिये पहाड़ों पर वहुत अधिक ऊँचाई तक नही जाना चाहिए। साधारण ऊँचाई पर ही रह जाना चाहिए। पर इसमे सन्देह नही कि पहाड़ी हवा वहुत ही लाभदायक होती है और विशेषत मानसिक पीड़ाओके लिये वह वहुत ही अच्छी है।

बहुतसे लोग जब फुरसत पाकर सैर करनेके लिये बाहर निकलते हैं, तब इतनी जल्दी मचाते है कि मानो कोई उनके पीछे पड़ा हो, वे दौड़ते हुए एक स्थानसे दूसरे स्थान तक पहुँचते हैं और वहाँसे भी आगे बढ़ कर तीसरे स्थानकी खबर लेते हैं। मानसिक श्रम करनेवालोको जिस विश्राम और शान्तिकी आवश्यकता होती है, वह उन्हे बिलकुल प्राप्त नही होती। उनकी शक्ति और भी नष्ट हो जाती है और वे अच्छे होनेके बदले और भी बीमार होकर घर पहुँचते हैं। यह बड़ी भारी मूर्खता है। जब आदमी सैर और आराम करनेके लिये बाहर निकले, तब उसे उचित है कि वह बहुत ही शान्ति और स्वस्थता-पूर्वक यात्रा करे, मार्गके सुन्दर दृश्य देख कर अपना जी बहलावे और सैरसे होनेवाले लाभ पूरी तरहसे उठावे। डाकके हरकारोकी तरह कही दौड़ते हुए जाने और उलटे पॉव उसी तरह वहाँसे वापस आनेसे कही न जाना ही अच्छा है।

अगर कोई सुस्ताना चाहे, तो वह एक काम छोड़कर और किसी दूसरे काममे लग कर भी सुस्ता सकता है। किसी दूसरे काममें लगना भी सुस्तानेसे कम नही है। प्रत्येक पदार्थके अधिक सेवनमात्रसे ही उसका आनन्द जाता रहता है। अधिक समय तक आराम करते रहने या सुस्तानेसे भी जी ऊब जाता है। बड़े बड़े विद्वान् अपना उच्च श्रेणीका कार्य छोड़कर जी बहलानेके लिये बहुत ही साधारण कोटिके काममे लग जाते हैं। जिस प्रकार बढ़िया बढ़िया भोजन करके उनसे जी ऊब जाता है और तब केवल दाल चावल ही सब से अधिक स्वादिष्ट जान पडता है, उसी प्रकार बड़े कामोको छोड़ कर साधारण काम करनेमे आनन्द मिलता है। ऐसे साधारण

काम दूसरोकी दृष्टिमे भले ही तुच्छ और निरर्थक हो, पर उनसे करनेवालेका जी खूब बहलता है और उसे पूर्ण विश्राम मिलता है। अगर कोई वैज्ञातिक थोड़ासा गाने-बजानेका अभ्यास कर ले, कोई सम्पादक थोड़ी चित्र-कला सीख ले, कोई इंजीनियर फोटोग्राफीका शौक कर ले या कोई राजनीतिज्ञ बढ़ई या लोहारका कुछ काम जान ले,तो उसका फुरसतका समय बड़े ही सुखसे बीत सकता है और उसका ज्ञान भी बढ़ सकता है। अनेक विद्वान्, लेखक, राज्य-संचालक आदि ऐसे हो गये हैं, जो फुरसतके समय कुछ गा-बजा कर या कुत्ते बिल्लियोसे खेल-कूद कर ही अपना जी बहला लेते थे। क्रेबिलन नामका एक विद्वान् हो गया है, जो बहुत ही दरिद्रावस्थामे भी अपने यहाँ आठ कुत्ते और पन्द्रह बिल्लियाँ रखता था। उसी दरिद्रावस्थामे एक दिन जब वह अपने साथ दो और कुत्ते ले आया, तब उसकी स्त्री उस पर बहुत बिगड़ी थी। हेलवीटियस नामका एक और लेखक हो गया है, जो प्राय एक कोड़ी बिल्लियाँ अपने यहाँ रखता था। वह उन्हे बहुत बढ़िया चीज़े खिलाता था और उन्हे मखमल, साटन तथा रेशम के कपड़े पहनाता था। एक महात्मा बत्तको और मुर्गियोके बहुत शौकीन थे। उनका कथन था—"जब आदमी बुड्ढा हो जाय, तब उसे उचित है कि वह कुछ जानवर पाले और उन्हीसे अपना जी बहलावे।"

लार्ड अर्सकिन, सर वाल्टर स्काट और लार्ड बाइरन आदि सभी कुत्तोके बहुत शौकीन थे। लार्ड अर्सकिनके पास तो और जानवरोके सिवा दो जोके भी थी। वे कहा करते थे कि वे दोनो जोकें मुझसे बहुत परची हुई हैं। लार्ड बाइटरका घर तो बिलकुस चिड़ियाखाना ही था। एक आदमीने

अपने एक मित्रको एक पत्रमे लिखा था—"नौकरोके अतिरिक्त यहॉ दस घोड़े, आठ वड़े-वड़े कुत्ते, तीन वन्दर, पॉच विल्लियाँ, एक गिद्ध, एक कौवा और एक वाज था।" पत्र समाप्त कर चुकने के उपरान्त नीचे एक कोनेमे उसने फिर लिखा था—"मेरी गिन्ती मे भूल हो गई, क्योंकि जब मै वड़ी सीढ़ियॉ चढ़ रहा था, तव मैने पॉच मोर, दो मुर्गियॉ और एक सारस भी देखा था।" रैम्ब्राएटने एक वन्दर पाला था, रिचरने गिलहरियॉ रखी थी, काउपरने खरगोश पाले थे, गाथेके पास एक साँप था, लैट्यूके पास चूहे थे और पैलिनसके पास एक मकड़ी थी!

वहुतसे महात्माओ और विद्वानोको लड़कोके साथ खेलनेमे वड़ा आनन्द मिलता है। रिचरने कहा है कि जिस मनुष्यको बच्चोंके साथ प्रेम न हो, कभी उसका साथ न करना चाहिए। केटो जव तक देख नही लेता था कि स्त्रीने लड़केको नहला-धुला कर कपड़े पहना दिये है, तब तक वह, चाहे राज्यका कितना ही आवश्यक कार्य्य क्यो न हो कभी घरसे सवेरे वाहर नही निकलता था। सिसरो भी अपने बच्चोसे खूब खेलता था। पिट भी छोटे छोटे लड़कोके साथ खूब खेला करता था, प्राय. खेलमे उनसे लड़ने-झगड़ने भी लगता था। सर विलियम नेपियर जब वहुत छोटे थे, तब वे प्रायः पिटके यहॉ खेलने जाया करते थे। एक वारका जिक्र है कि खेलके समय वहुतसे लड़कोने मिल कर इंगलैएडके प्रधान मंत्रीके मुंह पर कालिख मलना निश्चय किया। मन्त्री महाशय लड़कोसे लड़ने लगे। इतनेमे नौकरने आकर खवर दी कि दो लार्ड आपसे मिलनेके लिये आये हैं। पिटने कहा—"उन्हे दूसरे कमरेमे बैठाओ।" लड़कोसे फिर लड़ाई आरम्भ हुई। लड़के वहुत थे। दस मिनटमें सबने मिल कर किसी

तरह प्रधान मंत्री महाशयको जमीनपर पटक ही दिया और थोड़ीसी कालिख भी उनके मुँह पर लगा ही दी। तब आपको लड़कोंसे पीछा छुड़ानेकी सूझी। आपने कहा—"ठहरो, हो गया। मै तुम लोगोको दुरुस्त तो कर देता, पर इन दो बड़े आदमियोको अधिक समय तक बैठाना ठीक नही होगा।" तब लड़कोंने उन्हे एक तौलिया और थोड़ा पानी लाकर दिया। मुँह धोकर पिटने लार्डोंसे भेट की और उनके बिदा होते ही फिर लड़ाई-झगड़ा आरम्भ हो गया। यदि पिटके घर भी कोई बाल-बच्चा होता, तब तो उसके इस कृत्यका उतना महत्त्व न होता। पर सबसे बड़ी बात तो यह थी कि उसने आजन्म विवाह ही नही किया था।

लेबनिज प्रायः लड़कोको पढ़ते समय देखा करता था और बड़े ध्यानसे उनकी बाते सुना करता था। बहुत देर तक इसी तरह बैठा कर वह लड़कोको मिठाई देकर बिदा कर देता था और तब फिर अपने काममे लग जाता था। रोसियो रास्ता चलते समय खड़ा होकर लड़कोका खेल-कूद और उत्पात देखने लग जाता था और इसमे उसे बहुत आनन्द मिलता था। नेपोलियन और वेलिंगटनको भी लड़कोंसे बहुत शौक था। नेपोलियन रोमके शिशु-राजाको गोदमे लेकर शीशेके सामने खड़ा हो जाता था और उसे दिखला कर खूब मुँह चिढ़ाता था। वेलिंगटन लड़कोंके साथ खेला करता था और उन्हे तरह तरहकी चीजें दिया करता था।

जो लोग फुरसतका समय आनन्द-पूर्वक बिताना चाहते हो, उन्हे इस प्रकारके किसी छोटे-मोटे विनोदमे लग जाना चाहिए। साधारणतः सब लोग सदा ऐसे बड़े काम नही कर सकते जिनमे

उन्हे आनन्द मिलता हो, क्योकि अधिक समय तक उन्ही कामो को करके मन वहलाना उनकी वित्तके बाहर होता है। पर इस प्रकारके छोटे-मोटे शौक विना खर्चके और सव जगह पूरे किये जा सकते हैं। और वास्तविक सुख भी इन्ही छोटी छोटी वातो से ही मिलता है। वहुत लोग आनन्द प्राप्त करनेके लिये "वगलमे लड़का, शहरमे ढिढोरा" वाली कहावत पूरी करते हैं और जी वहलानेके लिये बहुत कष्ट उठाते और वड़े-वड़े प्रपंच रचते हैं। ऐसे लोग यदि इस प्रकारके छोटे-मोटे कामोका शौक करे, तो उन्हे इतना आनन्द मिले कि वे वड़े वड़े मेले तमाशे आदि भूल जायँ। प्रत्येक मनुष्यके लिये एक ऐसे ही साधारण, पर सुखदायक कामकी आवश्यकता है, जिसमे वह जव जी चाहे तब लग सके और तुरन्त अपना जी वहला सके।

जिस मनुष्यका सारा समय तरह-तरहके कामोमे बॅटा रहता है, उसके दिन वड़े ही आनन्दसे बीतते है। जिस समय परिश्रम करता-करता मनुष्य थक जाय, उस समय किसी साधारण काममे लग कर अपना जी वहला ले, उसकी सारी थकावट दूर हो जायगी और उसमे काम करनेकी नई शक्ति आ जायगी। इस प्रकार फुरसतका समय साधारण विद्या-विनोदमे लगा कर बहुतसे लोगोने बड़े-बड़े आविष्कार तक कर डाले हैं। चार्ल्स व्हीटस्टोन पहले बाजे वनाया करता था; पर फुरसतके समय शब्दकी उत्पत्ति और गति आदि पर विचार करते-करते उसने तारके द्वारा समाचार भेजनेकी तरकीव ढूँढ़ निकाली। नाइप, फौजमे नौकर था; पर उसे भौतिक विज्ञानका शौक था। इस लिये उसने फोटोग्राफीका आविष्कार किया। मि० लैसलका असली काम अत्तारीका था, पर उसे ज्योतिषका भी शौक था। उसने एक

बहुत बढ़िया दूरवीन बनाई थी, जिसकी सहायतासे उसने छः सौसे अधिक नीहारिकाओ, आरोयनके नये तारे, नेपचून या वरुणके उपग्रह, शनिके आठवे उपग्रह और यूरेनस या वारुणीके दो और उपग्रहोका पता लगाया था। इन सब उदाहरणोसे सिद्ध होता है कि मनुष्य प्रत्येक अवस्था और परिस्थितिमे रह कर अपनी उन्नति तथा मानव-जातिका कल्याण कर सकता है। जान्सनने कहा है कि "यदि वृद्धावस्था में किसी मनुष्यका मन मर जाय और कोई काम करनेके योग्य न रह जाय, तो इसमे स्वय उस मनुष्यका ही दोष है।"

बहुतसे लोगोने तो बीमारीकी दशामे ही बहुत बड़े-बड़े आविष्कार और कार्य्य कर डाले हैं। बात यह है कि विद्या और ज्ञानका प्रेम सदा मनुष्यको उन्नत ही करता है। इसके अतिरिक्त जिस मनुष्यमे विद्याके प्रति अनुराग होता है, वह कभी स्वार्थी या नीच नही हो सकता और जिन लोगोमे किसी विद्या या कलाके प्रति अनुराग नही होता, वे प्रायः निकम्मे रहते, बल्कि तरह-तरहसे लोगोका अपकार करते फिरते हैं। इस प्रकार लोगोको हानि पहुंचानेकी अपेक्षा मनुष्यके लिये यह कही अच्छा है कि वह किसी बिलकुल ही निरर्थक विद्या या ज्ञानके सम्पादनमे लग जाय।

बहुतसे लोगोको पुरानी किताबे, चित्र या सिक्के आदि जमा करने का शौक होता है। कोई सिर्फ दोस्तोके साथ गप लड़ाने का शौकीन होता है। राजा पंचम चार्ल्स फुरसतके समय बहुत-सी घड़ियोमे चाबी देकर उन्हे मिला दिया करता था। उसे यह देखकर बहुत ही आश्चर्य्य होता था कि उनमेंसे कोई दो घड़ियाँ बराबर साथ साथ नही चलती थी; उन सबमे कुछ न कुछ

अन्तर अवश्य पड़ जाता था। साम राजर्सने एक ऐसे भले आदमीकी जिक्र की है, जिसने एक प्रकारका ऐसा बोरा निकाला था, जिसमे बैठ कर वह अपनी खिड़कीके रास्ते चटपट गलीमें पहुँच जाता था। एक-बार रातके समय उसकी स्त्री कहीसे तमाशा देखकर लौटी। उस समय वह सोया हुआ था। उसकी गाड़ीकी खड़-खड़ाहट सुनकर उसने समझा कि मकानमे आग लगी है और उसे बुझानेके लिये लोग पम्प लाये है। उसने चट अपना बोरा उठाया और खिड़कीके रास्ते वह गलीमे पहुँच गया, जहाँ सामने ही उसे गाड़ी परसे उतरती हुई उसकी स्त्री मिली।

ऊपर जितनी बाते बतलाई गई हैं उनसे सिद्ध होता है कि प्रत्येक मनुष्यको और विशेषतः मानसिक श्रम करनेवालोको सदा संयम और नियम-पूर्वक रहना चाहिए और कभी अध्ययन, व्यायाम, भोजन, पान और यहाँ तक कि विश्राममे भी अति न करनी चाहिए। लार्ड बेकनने कहा है—"प्रकृति पर विजय पानेका सबसे अच्छा उपाय यह है कि उसकी आज्ञा माने।" प्रकृतिका सर्व-प्रधान नियम यह है कि हम कभी किसी काममे अति न करें। जीवनको सुख-पूर्ण और फलतः दीर्घ बनानेका सबसे अच्छा उपाय यही है।

मनुष्यके लिये संयमकी भी बड़ी भारी आवश्यकता है। बहुतसे प्राचीन विद्वानोका तो यहाँ तक मत है कि प्रतिभाका पालन-पोषण संयमसे ही होता है। सबसे पहला संयम तो भोजनमे होना चाहिए। अन्न न मिलनेके कारण उतने अधिक लोग नही मरते जितने अधिक भोजन करनेके कारण मर जाते हैं। प्रायः मानसिक श्रम करनेवालोकी पाचन-शक्ति बहुत ही दुर्बल होती है, अत. जो कुछ वे खाते हैं वह उनके लिये बहुत

अधिक होता है और बहुत अधिक भोजन दिमागको खराब करता और उसका बल घटाता है। संसारमे जितने बड़े-बड़े महात्मा हो गये हैं, वे सब बहुत ही परिमित आहार-विहार आदि करते थे। एक महात्माका उपदेश है—"यदि तुम अपने मनसे पूरा और ठीक काम लेना चाहते हो, तो सदा अपने शरीरका ध्यान रखो।" ठीक तरहसे काम करनेके लिये दोनोकी जीवनी-शक्तिको बनाये रखनेकी बहुत बड़ी आवश्यकता है। बहुतसे दुर्बल मनुष्योंने भी केवल सयमके कारण ही दीर्घ-जीवन प्राप्त किया है। ऐसे मनुष्योके लिये मृत्यु भी कभी कष्टदायक नही होती। अन्त समय वे मानो लम्बी यात्रा करके सोनेके लिये जाते हैं। एक महापुरुषका नियम था कि जब तक उसे भूख नही लगती थी, तब तक वह कभी भोजन नही करता था; जब उसका जी नही चाहता था, तब वह कभी अध्ययन नही करता था। नित्य वह कुछ न कुछ काम करता था, पर कभी बहुत अधिक काम न करता था और उसमे सबसे बढ़ कर यह बात थी कि वह सदा प्रसन्न रहता था। भोजनके विषयमे सिडनी स्मिथने लार्ड मेरेको एक पत्रमे लिखा था कि यदि आप सदा प्रसन्न और सुखी रहना चाहते हो, तो आप जितना भोजन और पान कर सकते हो, सदा उसका आधा करे। अधिक भोजनसे होनेवाली हानियाँ और अल्प भोजनसे होनेवाले लाभ इतने अधिक हैं कि सहजमे उनकी गणना नही हो सकती, हाँ विचार-वान् पाठक स्वयं उनका अनुमान कर सकते हैं।

मिताहारी होनेके अतिरिक्त इस बातकी भी बहुत बड़ी आवश्यकता है कि मनुष्य कभी किसी प्रकारके नशे या मादक द्रव्यका व्यवहार न करे। साधारणतः लोग अधिक पुष्ट होनेके लिये

नशेका व्यवहार करते हैं, पर शरीर पर उसका परिणाम उलटा ही पड़ता है, किसी प्रकारका मादक द्रव्य सेवन करनेके थोड़ी देर बाद तक शरीरमे अवश्य कुछ अधिक बल और फुर्ती मालूम होती है, पर वह बल और वह फुर्ती शीघ्र ही नष्ट हो जाती है और उसके स्थान पर आलस्य और शिथिलता आ जाती है। मादक द्रव्यके सेवनका अभ्यास हो जानेका मुख्य कारण यही है कि उस समय मनुष्यको फिर नये बल और फुर्तीकी आवश्यकता होती है, जिसकी प्राप्तिके लिये उसे फिर उस मादक द्रव्यका सेवन करना पड़ता है। इस प्रकार मानो हम अपने बल और जीवन-शक्तिकी जल्दी-जल्दी आहुति देने लग जाते हैं और बराबर मृत्युके समीप होते जाते है। अतः प्रत्येक मनुष्यको सब प्रकार के मादक द्रव्योंसे सदा बचना चाहिए।

अब सोनेको लीजिए। साधारणतः यही माना जाता है कि अधिक सबेरे सोकर उठना बहुत ही लाभदायक है और वास्तवमे बहुतसे अशोमे यही ठीक भी है। प्रात.काल उठनेसे मनुष्य नीरोग और प्रसन्न रहता है और दिन भर बहुत अच्छी तरह अपने सब काम करता है। पर कुछ लोगोका मत है कि मनुष्य-को देर तक सोना चाहिए। डाक्टर फाउलरने कहा है कि जब तक शरीर स्वस्थ न हो जाय, तब तक बराबर सोये रहो। अधिक सोना अवश्य लाभदायक है, पर हमारी समझमे सूर्य्योदयके उप-रान्त अधिक देर तक सोना कभी लाभदायक नही हो सकता। जो लोग सूर्य्योदयके उपरान्त अधिक देर तक सोते है, उनके शरीरमे प्रायः दिन भर आलस्य मानो भरा रहता है। मनुष्यको अधिक अवश्य सोना चाहिए, पर उस आधिक्यकी पूर्ति जल्दी सोकर की जानी चाहिए। रातको नौ बजे सो जाना और प्रात.-

काल पाँच बजे उठ बैठना ही अधिक लाभदायक है। एक मनुष्यके लिये आठ घण्टेकी नींद यथेष्ट है।

जो लोग सयम-पूर्वक रहते, थोड़ा भोजन करते, मादक द्रव्योंसे बचते और यथेष्ट सोते है, वे तो दीर्घ-जीवी होते ही है, पर कुछ विशिष्ट विषयोंका अध्ययन और मनन करनेवाले लोग भी दीर्घ-जीवी होते है। प्रकृति-सम्बन्धी विषयो और सिद्धान्तोंका अध्ययन करनेवाले तथा राजनीतिज्ञ लोग अपेक्षाकृत दीर्घ-जीवी होते देखे जाते हैं। बात यह है कि प्रकृति और सत्यका अन्वेषण कठिन भले ही हो, पर वह वहुत ही आनन्ददायक होता है। हफलैण्डने "दीर्घ-जीवी होनेकी कला" नामक जो पुस्तक लिखी है, उसमे उसने वतलाया है—गूढ़ विचार करनेवाले दार्शनिक सदा दीर्घ-जीवी होते है। विशेषत वे दार्शनिक भी और दीर्घ-जीवी होते है, जो प्रकृतिका अध्ययन और मनन करते है। नवीन महत्त्व-पूर्ण सत्य-सिद्धान्तोंके अन्वेषणसे उन्हे स्वर्गीय सुख मिलता है और यही स्वर्गीय सुख मनुष्यके जीवनको दीर्घ करनेका सर्व-प्रधान साधन है।" तात्पर्य्य यह कि जो मनुष्य सदा सुखी और प्रसन्न रहता है, वह अवश्य दीर्घ-जीवी होता है। दीर्घ-जीवी होनेका दूसरा साधन सदाचार और श्रेष्ठ जीवन है। डा० मालिसने प्रसिद्ध दीर्घ-जीवी मनुष्योंकी एक तालिका बनाई है और उसके अन्तमे लिखा है—"मैने चाहा था कि इसमे दुराचारी मनुष्योंके भी नाम रखूँ, पर मुझे एक भी दुराचरी दीर्घ-जीवी न मिला।" इससे सिद्ध होता है कि सदाचार और दीर्घ जीवनका भी घनिष्ट सम्बन्ध है। साथ ही इसी सदाचार पर ही मनकी प्रसन्नता भी निर्भर करती है, क्योंकि दुराचारी मनुष्य कभी प्रसन्न और सुखी रह ही नहीं सकता। दार्शनिको आदि

के अतिरिक्त राजनीतिज्ञ और राज्य-संचालक आदि भी दीर्घ-जीवी होते हैं। जो लोग दूसरोंके जीवनको सुख-पूर्ण बनानेका प्रयत्न करते हो, स्वयं उनके जीवनका सुख-पूर्ण और फलत: दीर्घ होना बहुत ही स्वाभाविक है। वकील, बैरिस्टर और जज आदि भी प्राय दीर्घ-जीवी होते है। इसका कारण कदाचित् यही है कि वकीलो और जजो आदिको बीच-बीचमे विश्राम करनेका भी यथेष्ठ अवसर मिलता है। पर दुर्भाग्य-वश लेखक और कवि आदि प्राय. अल्प-जीवी होते है और इसका कारण यही है कि साहित्य-सेवा उनके लिये नशेसे भी बढ़कर हो जाती है। परोपकार तो अवश्य करते हैं, पर परोपकारीके मनको जो प्रसन्नता होनी चाहिए, उस प्रसन्नताका वे भोग नही करते। वे सदा काममे लगे रहते है और कभी विश्राम नही करते। और यही प्रसन्नता तथा विश्रामका अभाव, जीवनके दीर्घ होनेमे बाधक होता है।

आठवाँ प्रकरण

शहर और देहात

यह आवश्यक नही कि बड़े-बड़े शहरोंमे बड़े-बड़े लोग उत्पन्न हो ही, बल्कि शहरका जीवन और निवास तो बहुतसे अशोमे छोटे आदमियोको उत्पन्न करनेके लिये ही अधिक उपयुक्त और अनुकूल है। शहरमे या तो व्यापार अधिक होता है या ऐश आराम और ये ही दोनो बाते मानसिक उन्नतिमे बहुत बाधक होती हैं। शहरमे रहनेवाले बालकोकी मानसिक उन्नति नियमित और स्वाभाविक नही होती, बल्कि अनियमित और अस्वाभाविक होती है। शहरमे रहनेवाले लड़के बहुत तेज और चलते हुए होते है और बड़े होने पर जब वे अपने काममे लग जाते हैं, तब उनकी मानसिक उन्नति वही रुक जाती है।

नागरिक जीवनको मानसिक कार्य्यका शत्रु ही समझना चाहिए। नगरोंमे क्षोभ उत्पन्न करनेवाली बातें बहुत अधिक होती है और शान्ति तथा विश्रामके साधन बहुत कम होते है। नगर-निवासी दिन भर अपने काम-धन्धेमे ही लगे रहते हैं; बहुत हुआ तो उन्होने कोई अखबार पढ़ लिया या आधीरात तक जाग कर थिएटर-सरकस या और कोई मेला-तमाशा देख लिया। ऐसे मनुष्योकी कभी मानसिक या आत्मिक उन्नति नही हो सकती, वे लखपती और करोड़पती भले ही बन जायँ।

प्रायः सभी देशोके सभी महापुरुष देहाती होते हैं। इसका कारण भी बहुत ही स्पष्ट है। शहरमे बहुतसे लोग रहते हैं; कोई एक दूसरेको जानता-पहचानता नही। सब अपने अपने काममे लगे रहते हैं। बहुत बड़े बड़े शहरोमे तो यहाँ तक होता है कि एक ही मकानमे रहनेवाले बहुतसे लोग एक दूसरेको नही जानते। शहरमे रहनेवाले लोग या तो अपना काम-धन्धा करना जानते है और या अपनी जरूरते पूरी करना और ऐश-आराम करना। आगे बढ़ने की उत्तेजना उन्हे मिलती ही नही। पर देहातियोका जीवन इससे बहुत भिन्न होता है। उनमेसे प्रत्येकका कुछ व्यक्तित्व और कुछ उत्तर-दायित्व होता है। इसके अतिरिक्त उन्हे बहुतसे ऐसे काम स्वयं करने पड़ते हैं, जो शहरवालोके लिये दूसरोको करने पड़ते है। देहातमे मनको क्षुब्ध करने और बहकाने-वाली बातें भी नही होती, जिनसे मनुष्यको उन्नति करनेका यथेष्ट अवसर मिलता है। हर एक देहाती अपने पड़ोसियो को जानता है और उसके पड़ोसी उसे जानते हैं। उसके मित्र प्रायः ऐसे होते हैं, जिनका साथ आजन्म रहता है और किसी युवकके लिये बहुतसे लोगोके साथ जान-पहचान पैदा करनेकी अपेक्षा, किसी एक भले आदमीसे गाढ़ी मित्रता कर लेना बहुत अच्छा है। उसे अपने साथियोंके साथ बराबर काम पड़ता है। उस पर सब बातोका अच्छा प्रभाव पड़ता है और यदि उसका मन शुद्ध हो, तो वह पूर्ण सदाचारी हो जाता है। केवल उसकी भाषामे ही देहातीपन नहीं होता, बल्कि आचार-विचार और व्यवहार आदिमे भी देहातीपन होता है, जो कि शहरातीपनसे कही अधिक शुद्ध और श्रेष्ठ होता है।

देहाती बालकको देखनेके लिये चाहे थोड़ीही चीजे मिले,पर वह उनका निरीक्षण बहुत ही अच्छी तरह करता है। इसका कारण यह है कि एक तो वे चीजे अधिक मनोहर और आकर्षक होती हैं और दूसरे यह कि वे उसके सामने अधिक समय तक रहती है। यह एक साधारण नियम है कि जो चीज जल्दीसे हमारी आँखोके सामनेसे निकल जाय, वह न तो हमारे लिये अधिक मनोरंजक होती है और न अधिक समय तक हमे उसकी स्मृति रहती है। इसीलिये देहात मे रहनेवालोकी प्रकृति और मनुष्यों का पूरा-पूरा ज्ञान होता है। देहातो और गाँवोमे सब लोग एक दूसरेको जानते हैं। देहाती बालको को प्रत्येक मनुष्यके अच्छे और बुरे कामो का पूरा पूरा पता रहता है। उन्हे अपने वशका इतिहास भी अच्छी तरह मालूम रहता है। पर बड़े-बड़े शहरोमे जहाँ कि बहुतसे लोग रहते हैं, कोई एक दूसरेको नहीं जानता। इसीलिये उनमे पारस्परिक सहानुभूति और प्रेम-भावका भी अभाव ही रहता है। गाँवोकी अपेक्षा नगरोमे सामाजिक सम्बन्ध बहुत दूर जा पड़ता है।

शहरके लड़के अवश्य ही जल्दी सयाने हो जाते हैं; पर देहाती लड़कोमे सयाने होनेके समय उनकी अपेक्षा कई विशेषताएँ होती हैं। सबसे पहली बात तो यह है कि देहाती सब काम अपने ही बल पर करता है और उसे अपने बहुत काम स्वयं ही करने पड़ते हैं। इस प्रकार उसे स्वावलम्बनकी बहुत ही आवश्यक और महत्त्व-पूर्ण शिक्षा मिलती है। अब जब वह किसी नगरमें पहुँच जाता है, तब कुछ तो चकित और कुछ प्रसन्न होता है। वह अपने आपको एक नये संसारमे पाता है, उसमे

आकांक्षाएँ उत्पन्न होती हैं, जिनकी पूर्त्तिके प्रयत्न मे वह लगता है और तब वह बहुधा उन्नति करता हुआ बहुत ही अच्छे दरजे तक पहुँच जाता है। इस प्रकार शहरवाले बालककी अपेक्षा देहातका बालक अच्छी उन्नति कर लेता है। एक विद्वान्‌का मत है—"ज्ञान और राजनीतिके बड़े-बड़े क्षेत्रोमे प्रायः महापुरुष उत्पन्न करनेकी शक्ति नही होती। जहाँ माता-पिताकी शक्ति आप ही क्षीण होती रहती हो, वहाँके बालकोमे शक्तिका अभाव होना बहुत ही स्वाभाविक है। इसीलिये राजनीति, विज्ञान या कला आदिके जितने बड़े-बड़े परिडत हुए हैं, उनमेसे बहुत ही कम ऐसे है, जिनका जन्म किसी बहुत बड़े नगरमे हुआ हो।"

देहातमे रहनेवाले लोगोको प्रकृतिके भिन्न भिन्न अगोके निरीक्षणका बहुत अच्छा अवसर मिलता है। वे पशु-पक्षियो और कीट-पतंगो आदिके सम्बन्धमे बहुत अच्छा ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं और वनस्पतियो आदिके विषयमे बहुत-सी बातोसे परिचित हो सकते हैं। एकान्त-वासका सुख भी वे बहुत अच्छी तरह भोग सकते हैं और फलतः वे बहुत कुछ काम भी कर सकते हैं। बहुत उच्च श्रेणीका कार्य्य, विचार या मनन आदि करनेके लिये यह बात बहुत ही आवश्यक है कि मनुष्य किसी ऐसे एकान्त स्थानमे रहे, जहाँ उसे पूर्ण शान्ति मिले और जहाँ मनको विचलित या क्षुब्ध करनेवाला कोई साधन न हो और ऐसा एकान्त स्थान केवल देहातोमे ही मिल सकता है। नगरोमे तो स्वप्नमे भी उसके दर्शन नही हो सकते। एकान्त-वास कभी मनुष्यकी शिक्षा और ज्ञान-वृद्धि आदिमे बाधक नही हो सकता; बल्कि उससे इन बातोमे बहुत कुछ सहायता मिलती है। अच्छी

तरह विचार और मनन केवल एकान्तमे ही हो सकता है। एकान्तमे ही मनुष्यको सब वस्तुओके निरीक्षणका अवसर मिलता है। एकान्तमे ही वह शान्त, सन्तुष्ट और अपने आपमे लीन रहता है और एकान्तमे ही वह सत्य सिद्धान्तोका अन्वेषण कर सकता है। इसी लिये बड़े-बड़े महात्मा विद्वान् और वैज्ञानिक एकान्तवासमे ही अपना अधिकांश समय व्यतीत करते हैं और वही उन्हे स्वर्गीय सुख मिलता है। अपने उस एकान्त-वासके और उसमे मिलनेवाले स्वर्गीय सुखके सामने, वे जनपदोंके निवास और राज-सुखको भी तुच्छ और हेय समझते है। टीकेका आविष्कार करनेवाला डा० जेनर गाँवमे ही रहता था। एक बार उसके एक मित्रने उससे आग्रह किया था कि तुम मेरे साथ चल कर लण्डनमे रहो, पर उसने अपना गॉव छोड़नेसे इन्कार कर दिया था। जब उसने जेनरसे कहा कि भला हमे वह अंगूठी तो दिखलाओ, जो रूसके सम्राट्ने तुम्हे भेजी है, तब उसने उत्तर दिया—"उसे छोड़ो, आओ, चलो बागमे चले और वहॉ तितलियोकी गुनगुनाहट सुने।"

वर्ड्स्वर्थ और सूदे देहातमे ही रहते थे। सूदेकी तबीयत तो लण्डनके ब्रिटिश म्यूजियमके पुस्तकालयमे बैठे बैठे भी घबराती थी और उसे अपना गॉव याद आया करता था। सिडनी स्मिथने अपने एकान्त-वास के सम्बन्धमे एक मित्रको लिखा था—"मैं आजकल प्रायः एकान्तमे रहता हूॅ और मेरा विश्वास है कि मै इस प्रकार रह कर अपने दोष दूर करता और अपने आपको सुधारता हूँ।" उसे पशुओ आदिसे इतना प्रेम था कि उसने अपने खेतमे काठका एक बड़ा चौखटसा लगा रखा था, जिसके साथ सब तरहके जानवर—मेमनोसे लेकर बैल तक—आकर

अपना शरीर रगड़ते और खुजलाते थे। अपने प्राय. सभी सर्व-श्रेष्ठ लेख उसने देहातमे ही वैठ कर लिखे थे। कारलाइलका जन्म तो देहातमे हुआ ही था। उसका अधिकांश जीवन भी देहातमे ही वीता था। जिस समय सन् १८३३ मे, एमर्सन उससे मिलने गया था, उस समय वह ऐसे एकान्त स्थानमे रहता था, जहाॅ किरायेकी गाड़ी भी न जा सकती थी और जहाॅ पन्द्रह मीलके घेरेमे वात-चीत करनेके लिये एक पादरीके सिवा और कोई आदमी ही नही था। जी वहलानेके लिये उसके पास पुस्तकोके अतिरिक्त और कोई साधन ही नही था। गोल्डस्मिथ-का ग्राम-प्रेम उसके कई ग्रन्थोसे खूब झलकता है। वाल्टर स्काट तो सभी वातोमे पूरा पूरा देहाती था। वाल्यावस्थामे ही उसमे ग्राम-प्रेम उत्पन्न हुआ था। उसने अपने घरके चारो तरफ वहुतसे पेड अपने हाथसे लगाये थे। उसने अपने उपन्यासोमे स्काटलैण्डके गाँवोका जो सुन्दर और हृदय-ग्राही वर्णन किया है, केवल उसी वर्णनको पढ़ कर युरोप और अमेरिका आदिके वहुतसे लोग स्काटलैण्डकी शोभा देखनेके लिये जाते थे। उसकी कलममे मानो जादू भरा था। स्काटलैण्डके उन पहाड़ी स्थानोमे जहाॅ पहले कभी कोई झाॅकता भी न था, सिर्फ उसकी कलमकी कृपासे वहाॅ पहुॅचनेवाले यात्रियोके लिये वहुतसी रेले, सड़के और होटल वन गये हैं। रिचरने अपने आत्म-चरितमे जन्मभूमिका महत्त्व वतलाते हुए लिखा है कि "कोई कवि किसी वड़े शहरमे जन्म न ले और न वहाॅ पाला-पोसा जाय। यदि हो सके तो उसका जन्म और पालन किसी गाॅव, देहात या छोटे कसवेमे ही हो।" उसकी सम्मतिमे वड़े नगरोका वालकके कोमल मन पर वहुत ही वुरा प्रभाव पड़ता है, वाल्यावस्थामें ही

उसमे बहुत कुछ शिथिलता आ जाती है। वह पहलेसे ही बड़ी बड़ी चीजे देखता रहता है, जिसके कारण उसके मनमे कोई उच्चाकांक्षा नही रह जाती और प्रायः वह किसी छोटेसे गॉवमे जानेकी इच्छा करता है। शेक्सपियर, बर्न्स, काउपर और थामसन सभी देहाती थे और इसीलिये उन लोगोने ग्राम्य-जीवनके बहुत ही सुन्दर चित्र खीचे है। वर्ड्स्वर्थ तो प्रकृति देवीका बहुत ही बड़ा भक्त था। वह सदा जंगलो और पहाड़ोमे घूमा करता था। सर फिलिप सिडनी, वालर, वर्क, डिसराइली, पोप, शेन्सटन और वाइरन आदि सभी देहातोमे रहा करते थे।

यह तो हुई अँगरेजी कवियो और विद्वानों आदिकी वात। अव अपने देश भारतवर्षको लीजिए, जो सदासे कृषि-प्रधान रहा है और जहॉका ग्राम्य-जीवन संसारके प्रायः सभी देशोके ग्राम्य-जीवनसे कही अच्छा माना जाता है। ग्राम्य और प्राकृतिक शोभाका जितना अच्छा वर्णन हमारे यहाके प्राचीन कवियोने किया है, उतना अच्छा वर्णन कदाचित् ही और किसी देशके कवियोने किया हो और एकान्त-वासका जितना अधिक महत्त्व हमारे यहॉके विद्वानो और महात्माओने समझा है, उतना कदाचित् ही किसी अन्य देशके विद्वानो और महात्माओने समझा हो। वहुत प्राचीन और इतिहास-पूर्व वैदिक कालमे तो लोगोका ग्रामीण और ग्रामप्रेमी होना स्वाभाविक ही था; पर उसके उपरान्त निरन्तर उन्नति होने पर भी और बड़े वड़े नगरोके वस जाने पर भी यहॉंके महात्माओका ग्राम-प्रेम नही छूटा था। हमारे यहॉंके आदिकवि वाल्मीकि और व्यासने रामायण और महाभारतमे स्थान-स्थान पर जिस सुन्दर प्राकृतिक शोभाका वर्णन

किया है, उसी सुन्दर प्राकृतिक शोभाका वे लोग आजन्म बहुत ही सूक्ष्म दृष्टिसे निरीक्षण किया करते थे। वाल्मीकि-कृत पम्पा-सरका वर्णन पढ़कर आँखोके सामने मानो चित्र-सा खिच जाता है। महाकवि कालिदासने रघुवश, कुमारसम्भव और सबसे चढ़ कर मेघदूतमे प्राकृतिक, ग्राम्य, पर्वतीय और वन-शोभाका जैसा अच्छा वर्णन किया है, वैसा अच्छा सटीक, सूक्ष्म, मनोहर और आँखोके सामने चित्र खडा कर देनेवाला वर्णन ससारके किसी साहित्यमे कदाचित् ही मिले। कालिदासके जीवनका अधिकांश यदि देहातो, जगलो और पहाड़ोकी शोभा अच्छी तरह निरखनेमे न बीता होता, तो वे कभी इनती उच्च कोटिका वर्णन हमारे सामने उपस्थित न कर सकते। कुमारसम्भवके पहले सर्गमे हिमालयका और तीसरे सर्गमे वसन्तऋतुका जो सुन्दर और समीचीन वर्णन है, वह क्या कभी बिना सूक्ष्म दृष्टिसे निरीक्षण किये हो सकता है? रघुवशके तेरहवें सर्गमे जहाँ महाकविने पुष्पकविमान पर चलते हुए रामचन्द्र के मुँहसे सीताको नीचेके सागर, वन, पम्पासर, गोदावरी और अगस्त्य सुतीक्ष्ण, ऊर्ध्वबाहु, शरभग तथा अत्रिके आश्रम आदि, गंगा-यमुनाका संगम और सरयूनदी आदि दिखाते हुए जो वर्णन कराया है, वह कितना अद्भुत और अभूत-पूर्व है उससे कविके प्रकृति-प्रेमका परिचय मिलता है? मेघदूतमे तो मानो इस प्रकारके वर्णनका अन्त ही कर दिया है। बल्कि यह कहना चाहिए कि कालिदासने प्रकृति-देवीका भली भाँति निरीक्षण करके जो आनन्द और अनुभव प्राप्त किया था, सर्व-साधारणको वही आनन्द और अनुभव प्राप्त कराने तथा अकाश-मार्गसे जाने-वालेको नीचेके वनो, पर्वतो, नदियो और प्रदेशो आदिकी दिखाई

पड़नेवाली शोभाका वर्णन करनेके उद्देश्यसे ही मेघदूतकी रचना की थी। महाकवि माघका तो प्रकृति-निरीक्षण और वर्णन और भी बढ़-चढ़ कर है। इसके अतिरिक्त संस्कृतके प्राय जितने छोटे बड़े कवि, हैं सबको प्रकृतिसे बहुत प्रेम था, जिसका परिचय उन्होंने अपने अपने काव्योमे दिया है। इस स्थान पर कदाचित् यह बतलानेकी आवश्यकता न होगी कि प्रकृतिकी पूरी पूरी शोभा गाँवोमे रहने और जंगलो-पहाड़ोमे घूमनेवालोको ही दिखाई पड़ती हैं, बड़े-बड़े नगरोमे रहनेवालोके भाग्यमे उसके दर्शन नही होते और न कदाचित् यह कहनेकी आवश्यकता है कि प्राकृतिक शोभाका वर्णन, बिना आँखो देखे करना असम्भव नही, तो बहुत कुछ दुस्साध्य अवश्य है। हम उसे असम्भव इस लिये नही कह सकते कि कुछ प्रतिभाशाली कवि ऐसे भी हो गये हैं, जिन्होंने बिना प्राकृतिक शोभा देखे ही उसका वर्णन कर डाला है। मिलटनका जन्म लण्डनमे हुआ था और उसका अधिकांश जीवन भी वही बीता था। पर केवल पुस्तके पढ़ कर ही वह प्राकृतिक दृश्योका अच्छा वर्णन करनेमे समर्थ हो सका था। इससे भी बढ़ कर हमारे सूरदासने, जो जन्मान्ध माने जाते हैं, गोचारण आदिके सम्बन्धमे वन-शोभाका बहुत कुछ वर्णन किया है।

हिन्दी-कवियोमे चन्द वरदाईका प्रकृति-प्रेम और वर्णन बहुत बढ़ा-चढ़ा है। उसका मृगया, यात्रा, वन, उपवन, वर्षा, शरद और बसन्त आदि सभीका वर्णन बहुत ही मनोहर और सजीव है। जायसीने भी केवल देहाती होनेके कारण ही "पद्मावत" मे प्रकृतिकी शोभाका थोड़ा बहुत वर्णन किया है। उसका षट् ऋतु, दुर्ग और समुद्र आदिका वर्णन भी बुरा नही है। गोस्वामी

तुलसीदासका जन्म तो गाँवमे हुआ ही था, इसके अतिरिक्त वे मथुरा, वृन्दावन, कुरुक्षेत्र, प्रयाग, चित्रकूट पुरी आदि स्थानोमे भी भ्रमण किया करते थे, जिससे उन्हे प्रकृतिके निरीक्षणका अच्छा अवसर मिलता था। महाकवि केशवदास, पद्माकर, महाराज छत्रसाल, लाल कवि, बोधा, ठाकुर, कल्याणदास, काले, बकसी हँसराज, नवलसिंह आदि प्रसिद्ध कवियोने बुन्देल-खण्डमे ही, जिसे बहुतसे अंशमे प्रकृति-देवीका एक मन्दिर ही समझना चाहिए, जन्म लिया था। सेनापति, बिहारीलाल, मतिराम, सबलसिंह, भूषण, भिखारीदास, तोप, रसलीन आदि सभी बड़े बड़े कवियोने गाँवमे ही जन्म लिया था और इनमेसे बहुतोने अपना अधिकांश जीवन भी वही बिताया था तथा ग्रामीण शोभाने ही इन लोगोकी प्रतिभाकी स्फूर्त्ति की थी।

गॉवमे केवल प्रतिभाशाली लोग ही नही रहना पसन्द करते, बल्कि बड़े-बड़े महात्मा, धर्म्म-प्रचारक और सिद्ध पुरुष भी एकान्त-वास ही पसन्द करते हैं। महात्मा बुद्धसे लेकर शंकराचार्य्य, कबीर, नानक, गोरखनाथ दादू दयाल, राजा राममोहन राय, स्वामी दयानन्द, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी रामतीर्थ आदि सभी महापुरुषोने अपना बहुत-सा समय एकान्त-वासमे ही बिताया था और वहीं बहुत कुछ चिन्तन मनन किया था। उक्त महात्माओमेसे अनेक, समय-समय पर जंगलो और पहाड़ो की तरफ निकल जाते थे और वही परमानन्दमे लीन हो जाते थे। लोगोको उपदेश देनेमे और उन्हे सन्मार्ग पर लानेमे तो उन्हें आनन्द मिलता ही था; पर यदि यह कहा जाय कि उनका एकान्त-वास ही बहुतसे अंशोमे उन्हे इतने बड़े-बड़े

काम करनेमे समर्थ बना सका और सहायक हुआ तो कुछ अत्युक्ति न होगी ।

गॉव-देहात आदिमे रहनेसे केवल प्रतिभा आदिकी ही स्फूर्ति नही होती, बल्कि मनुष्यका शारीरिक बल भी बहुत बढ़ता है। देश और जातिकी प्रतिष्ठाकी रक्षाके लिये हट्टे-कट्टे और मजबूत आदमियोकी जरूरत होती है और ऐसे आदमी सिवा गॉव-देहातके या पहाड़ो और जगलोके और कही मिल नही सकते। कठिन शारीरिक श्रम कर सकनेके योग्य मनुष्य नगरोमे भला कहाॅ मिलेगे ? वहाॅ तो केवल दुबले-पतले, नाजुक और रोगी बाबुओके ही दर्शन होगे। सभ्य और संस्कृत जीवनके सब काम तो इन्ही गँवारो और देहातियो पर ही निर्भर करते है।

महाराज रामचन्द्रने जिस समय लंका पर चढ़ाई की थी, उस समय उनकी सहायता इन्ही जंगली और पहाड़ी लोगोने की थी और उन्हींकी सहायतासे वे लका पर विजय प्राप्त कर सके थे। जिस समय शहाबुद्दीन महम्मद गोरीने भारत पर अनेक आक्रमण किये थे, उस समय देहातियो और गॅवारोने ही उसका साथ दिया था और यहाॅ भारतमे भी देहातियो और गँवारोने ही उसका सामना भी किया था। देहातियोने ही अनेक बार मुसलमानोसे राजपूतानेके अनेक राज्यो और दुर्गोंकी रक्षा की थी। देहातियो ने शिवाजीके साथ मिल कर महाराष्ट्र साम्राज्य की तथा महाराज रणजीतसिंहके साथ मिल कर सिख-साम्राज्य की स्थापना की थी।

स्वयं बड़े-बड़े विजयी और वीर सम्राटो तथा सेना-नायको आदि ने भी देहातमे ही जन्म लिया था उन लोगो ने अपना अधिकांश प्रारम्भिक जीवन गॉवो, देहातो, पहाड़ो और जंगलोमे ही बिताया

था। छत्रपति शि ाजी, महाराज रणजीतसिंह, सम्राट् अकबर आदि देहाती ही थे। वर्त्तमान युरोपीय महायुद्धमें जितने योद्धा जूझ रहे हैं, उनमेंके लगभग तीन चतुर्थांश देहाती और गँवार ही हैं।

बात यह है कि युद्ध आदि कामोके लिये देहाती, गँवार और खेतिहर आदि ही उपयुक्त होते हैं। शहरवाले तो अपनी सभ्यताके विचारसे ही जहाँके तहाँ पड़े रह जायँगे। जिन लोगोंका सारा जीवन बढ़िया-बढ़िया सड़कों पर घूमने, कोठी, कारखाने या दूकानमे काम करने अथवा मौज-शौकमे ही बीतेगा, वे भला बीहड़ जगलो और पहाड़ोमे जाकर तलवार या बन्दूक चलानेमे क्या कर समर्थ होगे ?

ज्यों-ज्यों नागरिकता बढ़ती जाती है, त्यों-त्यो वीरता घटती जाती है। अँगरेजो और फ्रान्सीसियो आदिमे वीरताकी कमी होनेका मुख्य कारण यही है कि या तो उनमेसे अधिकाँश व्यापारी है या शौकीन। कुछ दिन पहले डा० विडो नामक एक बहुत बड़े वैज्ञानिकने ग्रेट ब्रिटेनके निवासियोंके शारीरिक सगठनके सम्बन्धमे एक जाँच की थी। जाँच करनेके उपरान्त उन्होने यह परिणाम निकाला था कि प्राचीन कालमे अँगरेज़ जातिकी प्रधानता का मुख्य कारण यह था कि उस जातिमे बहुतसे हृष्ट-पुष्ट और बलिष्ठ लोग हुआ करते थे। जिस जातिके लोग दुर्बल होते हैं, वे अपना सैनिक और साथ ही साथ व्यापारिक तथा वैज्ञानिक महत्त्व भी खो बैठते हैं। अँगरेज जातिके इस शारीरिक ह्रास या अध:पतनका मुख्य कारण उन्होने यह बतलाया था कि उसके अधिकांश लोग खेती छोड़ कर शिल्प और व्यापार आदिमे लग गये हैं और इसीलिये उनका यह अधःपतन पैतृक

होकर बढ़ता जा रहा है। उन्होने यह भी बतलाया था कि इस अधःपतनकी वृद्धिका मुख्य कारण यह है कि कल-कारखानो आदिमे काम करनेवाले लोगोको अधिक मजदूरी या तनख्वाह मिलती है, जिसके कारण वे खूब शराब और तम्बाकू पीते है, जिनसे उनकी सन्तान क्षयी या गरमी आदि रोगोसे पीड़ित होनेके योग्य हो जाती है, जिससे यह अधःपतन और बढ़ता जाता है। एक स्थल पर उन्होने कहा है—"यदि हम किसी एक जातिके सम्बन्धमे जाँच करे, तो हमे ज्ञात होगा किजो जाति अपनी शारीरिक उन्नति करती है,वही अधिक कर्म्मण्य और नैतिक दृष्टिसे उन्नत होती है।" इसके उदाहरणस्वरूप डाक्टर महाशयने पंजाबियो और बंगालियोको उपस्थित किया है। उन्होने कहा है कि पंजाबी लोग बगालियोसे जितने अधिक बलिष्ठ होते हैं, उतने ही वे उनसे अधिक साहसी भी होते हैं। ग्रेट ब्रिटेनके लिये उन्होने कहा है कि स्काटलैण्डके लोग अधिक बलिष्ठ होते हैं और वे ही सबसे अधिक जातीय सेवा भी करते हैं। वास्तवमे बात भी यही है। अंगरेजी जल और स्थल सेनामे काम करनेवाले सिपाहियो और अफसरोमेसे प्रायः आधे आयरिश ही हैं। इसी प्रकार डा० मार्गनने भी एक लेख द्वारा भलीभाँति यह प्रमाणित किया है कि देहातोकी अपेक्षा शहरोमे रहनेवालोका शारीरिक अधःपतन बहुत अधिक होता है।

सम्भव है कि इस अवसर पर किसीके मनमे यह प्रश्न उठे कि भारतवर्ष तो कृषि-प्रधान देश है; फिर यहाँके निवासियोकी इतनी अधिक दुर्दशा क्यो है ? वे क्यो इतने दुर्बल और निर्जीवसे दिखाई देते हैं ? तो इसका उत्तर यही है कि शारीरिक अधः-पतनके इसके अतिरिक्त और भी दो एक कारण हैं। सबसे

पहला कारण तो भोजनकी न्यूनता है। जिस देशके निवासियो को भरपेट भोजन न मिलता हो, वे केवल गाँवकी हवा ही खाकर हृष्ट-पुष्ट और वलिष्ट नही हो सकते। दूसरी बात यह है कि जो लोग अपनी शारीरिक शक्तियो और अगोका यथेष्ट उपयोग नही करते, उनका भी शारीरिक अधःपात हो जाता है। इस अधःपातका एक तीसरा कारण स्वास्थ्य-सम्बन्धी नियमोके ज्ञान का अभाव भी होता है। इसमे सन्देह नही कि अधिकांश भारत-वासी अवश्य दुर्वल होते हैं। पर तो भी यह मानना ही पड़ेगा कि जो भारतवासी उक्त तीनो कारणोकी कृपासे मुक्त होते है, वे शारीरिक वल, वीरता और साहस आदिमे किसी देशके वीरोसे कम नही होते। इस गिरी हुई दशामे भी जिन भारतवासियोने युरोपीय रण-क्षेत्रमे जाकर बड़े-बड़े वीरो और योद्धाओसे टक्कर ली है, वे ही हमारे उक्त कथनके स्पष्ट और जगत्प्रसिद्ध प्रमाण है। आप कह सकते कि डा० बिडोके सिद्धान्तके अनुसार कम से कम इन्ही वीर भारतवासियोको व्यापार और शिल्प आदिमे उन्नति करनी चाहिए, पर इसमे बहुतसे अंशोमे स्वतंत्रताका अभाव वाधक होता है। अस्तु।

बड़े-बड़े नगरोमे वड़े-वड़े कल-कारखाने आदि भले ही हो, पर स्वास्थ्य और शक्तिकी दृष्टिसे वड़े नगर कौड़ी कामके नही होते। नगरोमे आकर तो शारीरिक बलकी अन्त्येष्टि हो जाती है। लार्ड शेफ्ट्सबरीने एक अवसर पर कुछ युवकोको उपदेश देते हुए कहा था—"आज-कल बहुतसे लोग देहात छोड़ कर शहरोमे दौड़े चले आते है, इसका परिणाम यह हो रहा है कि ये शहर हमारे देहातकी जीवनी-शक्ति और शारीरिक बलको चूसे लेते है। एक तो शहरोकी आब-हवा यो ही

खराब होती है। दूसरे लोग वहाँ जाकर तरह तरहके दुर्व्यसनोमे फँस जाते है, जिससे उनका शारीरिक अध.पात और भी बढ़ जाता।"

आप पूछेगे कि शहरकी इतनी निन्दा तो आपने कर डाली और इतने दोप भी दिखला दिये; तब शहरोमे ऐसी क्या मिठाई है जिसके लिये लोग शहरोमे दौड़े जाते है? तो इसका उत्तर यह है कि शहरोमे कुछ गुण और कुछ विशेपता भी अवश्य है। सबसे पहली बात तो यह है कि मनुष्यकी प्रवृत्ति मिल-जुल कर रहनेको होती है। मिल-जुल कर रहनेसे बहुत कुछ लाभ भी होता है। इस प्रकार लाभ उठानेके जितने अधिक साधन शहरोमे होते हैं, उतने गाँवो और देहातोमे नही होते। विज्ञान और साहित्य आदिका केन्द्र बहुधा नगरोमे ही होता है। डा' गथ्रीका कथन है कि बड़े नगरके सामाजिक प्रभावोमे पड़ कर मनुष्य अपनी परम उन्नत अवस्थाको प्राप्त होता है। वहाँ उसकी बुद्धि खूब तीव्र होती है, वही उसकी प्रतिभाको यथेष्ट रूप से विकसित होनेका अवसर मिलता है और वही उसकी मानसिक शक्तियोकी वृद्धि होती है।" लेकिन यह बात इन डाक्टर महाशयको भी माननी पड़ी है कि नगरोमे लोगोका स्वास्थ्य अवश्य बिगड़ जाता है, वे बहुत दुर्बल हो जाते हैं और उनका चेहरा पीला पड़ जाता है।

इधर कुछ दिनोमे ससारने जहां और बहुतसी बातोमे उन्नति की है, वहाँ इस सम्बन्धमे भी उसने कम उन्नति नही की है। बड़े-बड़े नगरोके निवासियोकी पहले जितनी आयु होती थी, अब प्राय: उससे अधिक होने लगी है। अब म्यूनिसिपैलटियां आदि नगरोके स्वास्थ्य और सफाई आदि पर विशेष ध्यान देने लगी है

और यथासाध्य स्वच्छता आदिका प्रबन्ध करने लगी हैं। तो भी अभी इस सम्बन्धमे बहुत कुछ उन्नतिकी आवश्यकता है। नगरोमे स्वास्थ्यके नष्ट होनेके अनेक कारण हैं, जिनकी यदि किसी प्रकार निवृत्ति हो सके, तो लोगोका बहुत उपकार हो। पहली बात तो यह है कि नगरोमे लोगोके रहनेके लिये बहुत ही थोड़ा स्थान मिलता है और स्वास्थ्य-सम्बन्धी यह एक निश्चित नियम है कि आबादी जितनी ही घनी हो, रोग और मृत्यु-संख्याकी उतनी ही वृद्धि होती है। मनुष्य एक दूसरेके साथ जितना ही अधिक सट कर रहेंगे, उनका जीवन उतना ही कम होगा। दूसरी बात यह है कि कल-कारखानोके धूएं और बहुतसे पेशेवरोके कारण भी नगरोकी वायु दूषित रहती है, जिससे वहाँके निवासियोका स्वास्थ्य खराब होता है।

बहुतसे लोग शहरोमे रहना पसन्द करते हैं और बहुत से लोग देहातमे रहना अच्छा समझते हैं। पर बहुत अधिक सख्या ऐसे ही लोगोकी है, जो देहातमे ही रहना पसन्द करते हैं, अथवा कमसे कम जो देहातमे ही रहते है। नगरोमे रहनेवालोकी सख्या अपेक्षाकृत बहुत ही कम है। हम ऊपर कह आये है कि बड़े-बड़े विद्वान्, कवि, महात्मा आदि ऐसे हो गये है, जो शहर छोड़कर गॉव या देहातमे किसी एकान्त स्थानपर रहा करते थे। इसी प्रकार कुछ ऐसे विद्वानोके नाम भी लिये जा सकते है, जिन्हे नगर-निवास बहुत प्रिय था और जो कभी नगर छोड़ कर देहातमे जाना पसन्द ही न करते थे। प्रसिद्ध डा० जान्सन यद्यपि देहाती थे, तथापि लण्डनको छोडकर और कहीं उनका मन ही नही लगता था। इसका कारण वे यह बतलाते थे कि यहॉ मेरे बड़े-बड़े मित्र हैं, मुझे अच्छी-अच्छी पुस्तके पढ़नेको मिलती है और

मेरे मनोविनोदके यहाँ अनेक साधन हैं। सर जोशआरेनाल्डका यद्यपि देहातमे एक बहुत अच्छा मकान था, पर वे भी सदा लण्डनमे ही रहते थे। चार्ल्स लेम्बका सारा जीवन लण्डनमे ही बीता था, उसे लण्डनकी सभी बाते भली मालूम होती थी। एक बार वर्ड्स्वर्थ उसे अपने मकान पर ले गया था, जो पहाड़ पर था। उस मकानमे रहना चार्ल्स लैम्बके लिये पहाड़ हो गया। वहाँ उसे हर दम लण्डनका ही ध्यान बना रहता था।

इसी प्रकार बहुतसे ऐसे नागरिक मिलेंगे, जो देहातमे जातेही घबरा जाते हो और जिनकी वहाँ तबीयत ही न लगती हो। साथ ही ऐसे देहातियोकी भी कमी नही है, जो शहरका नाम सुनते ही घबरा जाते हो और शहरमे पैर रखते ही जिनकी अक्लखप्त हो जाती हो।

अधिकांश देहाती ऐसे ही होते हैं, जिन्हे शहरमे रहना बड़ा भारी जजाल मालूम पड़ता है। साथ ही कुछ देहाती ऐसे भी होते है, जो कभी-कभी शहरमे घूम आना पसन्द करते हैं और कुछ शहराती ऐसे भी होते है, जो अपने काम-धन्धेसे फुरसत ले कर कभी-कभी देहातमे जाकर रहना पसन्द करते हैं। लेकिन स्थायी-रूपसे रहनेके सम्बन्धमे शहरोमे ही आकर्षण-शक्ति अधिक है। देहाती तो बहुतसे खिच कर शहरमे आ जाते हैं, पर देहातमे खिच कर जानेवाले शहरातियोकी सख्या बहुत कम होती है। बात यह कि मनुष्यकी साधारण शक्तियोके विकासके लिये नगर ही अच्छा क्षेत्र होता है और वही वह अधिक धन और प्रतिष्ठा प्राप्त कर सकता है। छोटे-छोटे गाँवो और देहातोसे लोग शहरमे जाकर अच्छे कोठीवाल, महाजन, विद्वान्, वकील, बैरिस्टर, जज, डाक्टर आदि बन जाते और बहुत कुछ यश प्राप्त

करते हैं। सीधी-सी बात तो यह है कि पार्थिव विषयोंमे उन्नति करनेके लिये सबसे अच्छा स्थान नगर है और आत्मिक उन्नति करने तथा प्रकृतिकी सात्त्विकता बढ़ानेके लिये सबसे अधिक उपयुक्त स्थान देहात है। इन दोनोंमेसे एक स्थानसे दूसरे स्थान पर प्राय अपनी रुचि और प्रवृत्तिके अनुसार ही लोग आते जाते हैं।

नवाँ प्रकरण

विवाहित और अविवाहित—सहायक अर्द्धांग

जीवन-सम्बन्धी मुख्य-मुख्य बातोका उल्लेख करते समय उस सम्बन्धकी भी कुछ बाते बतला देना बहुत आवश्यक है जो पुरुष और स्त्रीमे होता है। प्रेम और विवाहके पाशमे अधिकांश लोग फँस जाते हैं। उनमेसे कुछ लोगोको तो उससे सहायता और सुख मिलता है और कुछ लोगोको केवल दु:ख और क्लेश। एक विद्वान्का कथन है—"हम लोग इसी लिये प्रेम करते हैं कि हम अमर नही हैं। हम अपने प्राण देकर प्रेमका सौदा करते हैं।" लार्ड बेथनने कहा है—"विवाह-सम्बन्धी प्रेमसे मानव-जातिकी सृष्टि होती है, मित्रोके प्रेमसे वह पूर्णताको प्राप्त होती है, पर केवल पाशविक वृत्तियोको चरितार्थ करनेके लिये जो प्रेम किया जाता है, उससे उसकी दुर्दशा और अवनति होती है।

प्राचीन आर्य्य, प्रेम और स्त्रियोका महत्त्व बहुत अच्छी तरह समझते थे, इसीलिये उन्होने सदा स्त्रियोको सन्तुष्ट और प्रसन्न रखने तथा कभी किसी प्रकार उनका निरादर न करनेके सम्बन्धमे अनेक प्रकारकी आज्ञाएँ दी थी और बहुतसे विधान किये थे। भारतकी तत्कालीन सामाजिक, आर्थिक, नैतिक तथा आत्मिक उन्नति भी बहुतसे अंशोमे केवल इसी लिये थी कि लोग स्त्रियोकी उपयोगिता, महत्त्व और मर्य्यादा आदि भली भाँति

समझते थे। पर जबसे हमलोग स्त्रियोका महत्त्व भूल गये, तभीसे हमारी बहुत कुछ अवनति हो भी चली।

समाजकी रक्षा, वृद्धि और उन्नतिके लिये विवाह कितना आवश्यक है, यह प्राय' हर एक समझदार बहुत अच्छी तरह समझ सकता है, पर बहुतसे देशोमे आजकल विवाह-बन्धन कुछ ढीला हो चला है। पाश्चात्य उन्नत देशोमे बहुत-सी स्त्रियाँ और पुरुप ऐसे हैं, जो आजन्म विवाह नही करते, सदा कुँवारे रहते है। तो भी अधिकांश लोग विवाह करते हैं, क्योकि बिना उसके मानव-जातिका कल्याण ही नही हो सकता। जिस प्रकार हमारे देशमे कुछ लोग आजन्म ब्रह्मचारी रहकर श्रेष्ठ जीवन व्यतीत करते हैं, इसी प्रकार युरोप, अमेरिका आदि देशोमे भी बहुतसे ऐसे लोग आजन्म ब्रह्मचारी ही रहते है, जो अपनी इन्द्रियोको पूर्ण-रूपसे अपने वशमे रख सकते है और विवाहकी कोई आवश्यकता नहीं समझते। ससारके बहुत बड़े-बड़े और श्रेष्ठ कार्य्य प्रायः ऐसे ही लोगोके द्वारा होते भी है। बात यह है कि अविवाहित मनुष्य ज्ञान-विज्ञान आदिके कार्य्योमे अपना बहुत अधिक समय लगा सकते हैं और उन्हे अपने परिवारके भरण पोषण आदिकी कोई चिन्ता नही होती। संसारकी बहुत-सी झंझटो आदिसे वे लोग मुक्त और पूर्ण स्वतंत्र रहते हैं, पर साथ ही वे उन अनेक साधनो—स्त्री, पुत्र, पौत्र आदि-से वंचित भी रहते हैं, जिनसे मनुष्यको जीवनमे सुख, उत्साह और बल प्राप्त होता है और आत्मा तथा मस्तिष्कको शान्ति मिलती है। डा० आर्नल्डका तो इस सम्बन्धमे यहाँ तक कथन है कि साधारण स्थितिका मनुष्य जब तक गृहस्थ न हो, तब तक वही कुछ कर ही नही सकता। साधारण लोगोके लिये यह

बात ठीक भी है। बड़े-बड़े ज्ञानी और प्रतिभाशाली तो अविवाहित रह कर ही अच्छे काम कर सकते हैं, पर साधारण लोगोंको कार्य्यमे प्रवृत्त करानेकी शक्ति केवल गृहस्थीमे ही है।

बड़े-बड़े ज्ञानियो और प्रतिभाशालियोंकी ज्ञान-पिपासा ही उनकी शेष सब कामनाओंको नष्ट कर देती है। प्राचीन आर्य्य ऋषि इसी लिये जगलोमे अकेले रहा करते थे। महात्मा बुद्धकी ज्ञान-पिपासाने ही उनसे पुत्र-कलत्र और राज्य आदि सब छुड़ा दिया था। शंकराचार्य्य केवल इसी कारण विवाह-बन्धनमे नही फँसे थे। दयानन्द केवल इसीलिये विवाहका नाम सुन कर घरसे भाग निकले थे। न्यूटन स्त्री प्रेमका नाम भी नही जानता था। हाब्सने इसीलिये विवाहका विचार छोड़ दिया था। एडमस्मिथ इसीलिये सदा कुँवारा ही रहा। चैम्फर्टने तो यहाँ तक कह डाला कि "जो आदमी समझदारीसे काम लेगा वह विवाह क्यो करेगा? मैंने केवल इसी डरसे विवाह नही किया कि मेरी बराबरीका एक लड़का भी हो जायगा।" गोस्वामी तुलसीदासजीने कहा है—

फूले फूले फिरत हैं, आज हमारो ब्याय।
तुलसी गाइ बजाइके, वेड़ी पहिनो जाय॥

गेलीलियो, डेस्कार्टस, लाक स्पिनोजा, काण्ट, ब्लैक, डाल्टन और कैवेण्डिश आदि सभी आजन्म अविवाहित रहे। कैवेण्डिश तो स्त्रियोसे यहाँ तक बचता था कि उसने अपने मकानके पिछवाड़े अपने आने जानेके लिये सिर्फ इस वास्ते एक और सीढ़ी बनवाई थी कि जिसमे उसका, घरकी मजदूरनियो और दायियोसे सामना न हो जाय! जो मजदूरनी मकानमे उसके सामनेसे भी होकर निकल जाती थी, वह बरखास्त कर दी जाती थी। उसमे झक्क

वहुत ज्यादा थी, यहाँ तक कि उस झझकको आप रोग भी कह सकते है। वह कभी अपनी तसवीर नहीं वनवाता था और अजनवी आदमीके सामने होनेसे भी झझकता था। विथलके जीवनीकारने लिखा है,—"उसने कभी प्रेम नही किया, कभी घृणा नही की, कभी आशा नही की और कभी भय नही किया।" उसमे किसी प्रकार प्रवृत्ति या कामना ही नही थी, वह विलकुल निस्पृह वल्कि एक तरहसे मुर्दादिल था। यदि वह विवाह कर लेता, तो सम्भव था कि वह कुछ और अच्छी स्थितिमे हो जाता। इसी प्रकार अनेक वड़े-वड़े इतिहासज्ञोने भी कभी विवाह नहीं किया। ह्यूम, गिवन, मेकाले, थर्लवाल, वल्क और कैलडेन आदि सदा कुँवारे ही रहे। इतिहासज्ञ होनेके लिये इस वातकी वहुत वड़ी आवश्यकता होती है कि मनुष्यका ध्यान संसारकी ओर किसी वात की तरफ न रहे। ह्यूमने प्रेम पर जो निवन्ध लिखा है, वह उतनी ही उदासीनतासे लिखा है जितनी उदासीनतासे ज्यामितीके किसी प्रश्न पर कुछ लिखा जाता है। गिवनने बीस वर्षकी अवस्थामे एक पादरीकी लड़कीसे प्रेम किया था। पर उसके पिताने जव विरोध किया, तव उसने विवाहका विचार छोड़ दिया।

जरमी बनथमने यद्यपि विवाह नही किया था, तथापि जिस स्त्री पर आरम्भमे उसका अनुराग था, उसका वह अनुराग सदा उसके हृदयमे बना रहा। वह जब वुढापेमे भी अपनी पुरानी प्रेम-कथाका स्मरण करता था, तब उसकी आंखोसे आँसुओकी झड़ियाँ लग जाती थी। साठ वर्षकी अवस्थामे जब वह अपनी प्रेमिकासे मिला, तव उसने फिर उससे प्रेम-भिक्षा की। पर उसके हृदयमे इसके प्रति अनुराग न था। पर विशेषता यह थी

कि इसकी तरह उसने भी आजन्म विवाह नही किया था। बुढ़ापेमे बेनथमका प्रेम और भी बढ़ गया था। अस्सी वर्षकी अवस्थामे उसने अपनी प्रेमिकाको जो प्रेम-पत्र लिखा था, उसे पढ़कर जी भर आता है। उस पत्रके अन्तमे उसने लिखा था—"मै भी कितना पुराना बेवकूफ हूँ कि .. " जिससे मालूम होता है कि वह स्त्री उसे सचमुच "पुराना बेवकूफ" ही समझती थी, क्योकि उसने उसे पत्रका उत्तर तक न दिया था। लेकिन इसने भी एकतरफा प्रेम खूब ही निबाहा। प्रेमिकाका ध्यान उसे सदा–दिन और रात—बना रहता था। उसकी निशानीके तौर पर इसने उसका बजाया हुआ एक बहुत पुराना और टूटा-फूटा बाजा और उसे देनेके लिये एक अँगूठी मरते दम तक अपने पास रखी। यही जरमी बेनथम राजनैतिक दर्शनका बहुत अच्छा पण्डित था।

पिट और फाक्सने भी कभी विवाह नही किया। पिटको लोग बिलकुल नीरस और सग-दिल समझते है, पर उसका हृदय कोमल और प्रेम-पूर्ण था। उसका गार्हस्थ्य जीवन बिलकुल निष्कलक था और मन भी शुद्ध तथा श्रेष्ठ था। आयर्लैण्डके साथ उसने जो कुछ बुरा-भला किया, वह उसका राजनीतिक हथकण्डा था। पिछले पृष्ठोमे बतलाया जा चुका है कि लड़कोमे मिलकर वह किस तरह लड़का हो जाता था। एक बहुत ही सुन्दर स्त्री पर एक बार उसकी तबीयत बहुत आई थी। पर यही समझ कर उसने उसका विचार छोड़ दिया कि गृहस्थीकी झझटें सार्वजनिक सेवामे बाधक होगी। अपने कर्त्तव्य और प्रतिष्ठाका इस प्रकार ध्यान रखनेके कारण वह प्रशसनीय है।

राइफल एन्जेलो आदि अच्छे-अच्छे चित्रकारोंने भी कभी विवाह नहीं किया। एन्जेलो तो कहा करता था कि चित्र-कला एक ऐसी घरवाली है जो और किसी सौतको देख ही नहीं सकती। वह यह भी कहता था कि मेरे चित्र ही मेरे बाल-बच्चे होंगे। फ्लैक्समैन नामक एक दूसरे चित्रकारका जब विवाह हो गया, तब उसने उससे कहा कि अब तुम चित्रकारीके कामसे गये। पर फ्लैक्समैनकी स्त्री बड़ी ही बुद्धिमती और सुयोग्य थी और उससे फ्लैक्समैनको बहुत अधिक सहायता मिली थी। वह विवाह करके घाटे मे नहीं, बल्कि लाभमे ही रहा। टरनर एक ही बार प्रेम करके ऐसा निराश हुआ कि फिर कभी उसने किसीसे प्रेम नहीं किया। पर एटीने बहुत-सी स्त्रियोसे प्रेम तो किया, पर विवाह किसीसे नहीं किया।

बहुतसे गवैये भी सदा कुँवारे ही रहे। हैण्डेल सदा गाने बजाने मे ही मस्त रहता था, उसे स्त्रियोकी परवा ही नहीं होती थी। बिथोलन बहुत-सी स्त्रियो पर आसक्त हुआ, पर उसे कभी किसी स्त्री ने पूछा भी नहीं। इसी प्रकार और भी बहुतसे प्रसिद्ध लोग हो गये हैं, जिन्होंने जन्म भर विवाह नहीं किया। पाश्चात्य देशोंकी आजन्म अविवाहिता रहनेवाली स्त्रियोकी संख्या तो और भी अधिक है। पुरुष शक्तिशाली होता है। उसका काम-काज, उठना-बैठना, सोचना विचारना सब अकेले ही होता है। वह भविष्यकी आशासे सन्तुष्ट रहता है। पर स्त्रीको सदा घरमे ही रहना पड़ता है, चाहे वहाँ वह सुखी रहे और चाहे दुखी। प्रेम, सेवा और दुःख-सहन आदि ही उसके भाग्यमे होता है। तथापि उसका आचार बहुत सी सुन्दरताओं और अच्छी बातोंसे युक्त होता है। पाश्चात्य

देशकी स्त्रियाँ जब एक बार किसी पुरुषसे प्रेम करके निराश हो जाती है, तब वे बहुधा किसी दूसरे पुरुषके फेरमे नहीं पड़ती; वे बहुधा ज्ञान और विद्याके सम्पादनमे ही लगी रहती है और उन की इच्छा स्वतंत्र और अविवाहित रहनेकी ही होती है। ऐसी स्त्रियोंको अपने निर्वाहके लिये तरह-तरहके काम भी सीखने और करने पड़ते हैं। ऐसी स्त्रियोमे बहुत सी विदुषियाँ होती है, जो लोकोपकारके बहुत बड़े-बड़े कार्य्य कर डालती हैं। फ्लोरेन्स नाइटिंगेल, कैथराइन स्टैनले और भगिनी दोरा आदि ऐसी देवियाँ हो गई हैं, जिनकी कीर्त्ति सारे संसारमे छाई हुई है।

अविवाहिता स्त्रियाँ रोगियोंकी सेवा-शुश्रूषा और दीन-दुखियो की सहायता करनेके लिये बहुत ही उपयुक्त होती हैं। उनमे असहायोके प्रति बहुत अधिक सहानुभूति होती है। सबसे बड़ी विशेषता उनमे यह होती है कि वे पुरुषोंकी तरह अपने कामका डङ्का नही पीटती; बल्कि बहुत ही शान्ति-पूर्वक और चुप-चाप अपना काम करती है। उन्हे न नामकी चिन्ता होती है और न प्रशंसाकी परवा। जो स्त्रियाँ किसी प्रकारके लोकोपकारी कामोमे नही लगती, वे गृहस्थीमे रह कर उसका सारा प्रबन्ध बहुत उत्तमतासे करती है और आपत्तिके समय बड़े-बड़े काम कर जाती हैं। दरिद्र परिवारोकी ऐसी स्त्रियाँ बहुत ही उत्तमता-पूर्वक गृहस्थीको सँभाले रहती हैं। धनवानोकी अपेक्षा उनका पारस्परिक व्यवहार कही अधिक उदारता और सुजनता-पूर्ण होता है। ऐसी स्त्रियोके पास यदि आधी रोटी भी हो और उनके सामने कोई ऐसा आदमी आ जाय, जिसके पास एक दाना भी न हो, तो वे अपनी आधी रोटीमेसे चौथाई रोटी उसे अवश्य दे देंगी। और मजा यह कि भविष्यमे वे कभी उससे किसी प्रकारके प्रत्युपकार

की आशा भी नही रखेगी। वे भूखो मरना पसन्द करेंगी, पर अपनी मर्यादा कदापि भंग न होने देगी। यदि अभाग्य-वश कठिनसे कठिन परिश्रम करनेपर भी उन्हे खानेको न मिले, तो वे कभी किसीके आगे हाथ न पसारेंगी। आजन्म अविवाहिता रहनेवाली स्त्रियाँ इस देशमे तो कदाचित् ही मिलेगी, पर ऐसी बाल-विधवाएँ अवश्य बहुत-सी मिलेगी, जो अपने भाई या बहिनके सारे परिवारका जन्म भर बहुत ही उत्तमता-पूर्वक सारा प्रबन्ध करती हैं और विपत्तिके समय यथासाध्य उनकी रक्षा आदिमे भी कोई बात उठा नही रखती। ऐसी स्त्रियाँ जब तक परिवारमे रहती हैं, तब तक उस परिवारके दिन बड़े ही सुखसे बीतते हैं और उनके मरते ही परिवारकी दुर्दशा फिर आरम्भ हो जाती है।

पाश्चात्य देशो मे और उनकी देखा-देखी हमारे देशमे भी कुछ स्त्रियाँ ऐसी होने लगी हैं, जो अपनी ज्ञान-शक्तिकी वृद्धि करके ससारमे पुरुषोकी तरह उन्नति करना चाहती हैं। उनकी यह आकांक्षा अवश्य ही प्रशंसनीय है, परन्तु उसकी पूर्तिका प्रयत्न ऐसा होना चाहिए, जिसमे उनके स्वास्थ्य तथा स्त्रैण गुणोका नाश न हो। यदि हृष्ट-पुष्ट और दृढ़ मनोबलवाली स्त्रियाँ ज्ञान-सम्पादनमे पुरुषोके साथ प्रतिद्वन्द्विता करें, तो कोई हानि नही है; पर साधारण स्त्रियोके लिये मानसिक श्रम और विशेषतः अधिक मानसिक श्रम बहुत ही हानिकारक होता है। और इसके परिणाम-स्वरूप मानव-जातिके शारीरिक संगठनका बहुत अधःपात होता है।

एक उच्च कुलकी युरोपियन महिलाने सारे युरोपका प्रवास करके अपनी यात्राके सम्बन्धमे दो पुस्तके लिखी थी। उन

पुस्तकोंको पढ़ कर लण्डनकी एक साधारण युवतीके मन पर इतना अधिक प्रभाव पड़ा कि जब वह लेखिका लण्डन आई, तब वह युवती जाकर उसके पैरो पर गिर पड़ी और उससे कहने लगी कि तुम मुझे अपनी दासी बनालो। इस पर उस महिलाने उत्तर दिया—"तुम समझती हो कि सारे युरोपमे प्रवास करना बड़े सौभाग्यकी बात है ; लेकिन गृहस्थीका सुख इससे भी कही कही बढ़ कर है। ख्यातिकी अपेक्षा गृहस्थीमे कही अधिक सुख मिलता है। तुम्हारे पिता हैं ; मेरे पिता नही है। तुम्हारा घर मौजूद है ; पर मैं इस लिये यात्रामे प्रवृत हुई थी कि लोगोने मुझे घरसे निकाल दिया था। तुम जिस दशामे हो, उसी दशामे सन्तुष्ट रहो ; यदि तुम मेरी अवस्था जान लोगी तो फिर उसे प्राप्त करनेकी इच्छा न करोगी।" इसपर उस युवतीकी आँखे खुल गईं और वह घर जाकर अच्छी तरह गृहस्थीका कार-बार देखने लगी। एक तो स्त्रियोके लिये गृहस्थीसे बढ़कर सुख और कहीं नही है और दूसरे यह कि यदि कोई स्त्री गृहस्थीके सुप्रबन्धके अतिरिक्त मानवजातिके उपकारके लिये कोई और बड़ा काम करना चाहती हो, तो वह गृहस्थीमे रह कर ही बड़े मजेमें काम कर सकती है।

यह तो हुई अविवाहित पुरुषो और स्त्रियोकी बात। अब विवाहित पुरुषो और स्त्रियोको लीजिए। संसार मे बहुत अधिक संख्या विवाहित पुरुषों और स्त्रियोकी ही है ; अविवाहित पुरुष और स्त्रियाँ बहुत कम होती हैं। हिन्दुओमे तो विवाह एक धार्मिक बन्धन ही है और बिना पाणि-ग्रहण तथा सन्तान-उत्पन्न किये कोई मनुष्य देव, ऋषि और पितृ-ऋणसे मुक्त

ही नही हो सकता। पर जिन जातियोमे विवाह धार्मिक नही, बल्कि केवल सामाजिक बन्धन-सा माना जाता है, उन जातियोमे कोई तो प्रेमके लिये, कोई सौन्दर्यके लिये, कोई धनके लिये और कोई सुखके लिये विवाह करता है। कुछ लोगोमे विवाह-की ओर स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है और कुछ लोगोका विवाहके लिये यो ही जी चाहता है। पर खूब ही सोच समझ कर विवाह करनेवाले लोग बहुत ही कम होते हैं। मनुष्य या स्त्रीके जीवन मे विवाह ही सबसे अधिक महत्त्व-पूर्ण घटना अथवा संस्कार है। विवाह करके हम स्वर्ग-सुख भी प्राप्त कर सकते हैं और नरक-यातना भी। पर दु:ख है कि बहुतसे लोग ऐसे महत्व-पूर्ण कामके लिये तनिक भी सोच-विचार नही करते। भारतवर्षमे तो यह सोच-विचारका काम माता-पिताके हाथमे रहता है और दूसरे देशोमे स्वयं वर और वधूके हाथमे। बहुतसे अंशोमे भारत-वर्षकी प्रथा अच्छी है; क्योकि साधारणत. बीस पचीस वर्ष तकके युवकोको संसारके ऊँच-नीच आदिका विशेष अनुभव नही होता और न बारह-पन्द्रह वर्षकी बालिकाओको ही उसका कुछ विशेष ज्ञान होता है। ऐसी दशामे यदि माता-पिता ही सब बातोका भली भाँति विचार करके यह बन्धन स्थिर कर दे, तो इसमे कोई हानि नही हैं, उलटे इससे कुछ लाभकी सम्भावना है। पर दुःख तो इस बातका है कि माता-पिता इन बातो पर तनिक भी विचार नही करते। कही केवल धनके लालचसे साठ वर्षके बूढ़ेके साथ दस वर्षकी अबोध बालिकाका विवाह करके उसका जीवन जान-बूझ कर नष्ट किया जाता है और कही केवल बहूको देखनेकी साध ही साल दो सालके लड़के-लड़कियो-का ब्याह करा देती है। इन सब दशाओमे पति-पत्नीको जितना

कष्ट होता है और उनकी जो जो दुर्दशा होती है, वह किसीसे छिपी नहीं है।

सभ्य देशोमे बहुधा युवक और युवतियाँ परस्पर प्रेम उत्पन्न करते हैं और तरह-तरहसे उस प्रेमकी परीक्षा करके तब विवाह करते है। बहुत दिनोसे उन देशोमे प्रायः यही विश्वास बराबर दृढ़ होता आया है कि प्रेम एक ऐसी चीज है, जिस पर मनुष्यका कोई अधिकार ही नही है, वह मनमे आप ही आप उत्पन्न होता है। इसलिये वे लोग उसपर अधिकार रखनेकी अपेक्षा उसके अनुसार काम करना ही अधिक उत्तम समझते हैं। विवाहको भी वे लोग बिलकुल "दैवी-गति" ही समझते हैं और इसलिये उसके सम्बन्धमे विशेष सोच-विचारकी आवश्यकता नही समझते। इसलिये उनका अधिकांश जीवन बहुत ही कष्ट-पूर्ण होता है। प्रेमके लिये कुछ दिनो तक नये-नये पात्र ढूँढ़े जाते हैं और तरह-तरहसे उनकी परीक्षाएँ होती हैं। इन सब परीक्षाओ और अन्वेषणोके उपरान्त भी पति-पत्नीमें आगे चल कर प्रायः नही बनती; खटकी ही रहती है। अन्तमे विवाह—सम्बन्ध—तोड़ दिया जाता है और दूसरेसे विवाह होता है और ये सब बातें इसीलिये होती हैं कि युवकों और युवतियोको प्रेम-पात्रोकी परीक्षा करने, बल्कि यों कहिए कि प्रेमका व्यापार करनेका चसका पहलेसे ही पड़ा होता है। इस कुप्रथाके कारण सभ्य देशोका गार्हस्थ्य जीवन जितना दुःख-पूर्ण होता है, उतना और कोई जीवन नही होता। इसीलिये मानटेन और कालेरिजका मत है कि "यदि सबसे अधिक सुख-पूर्ण विवाह-सम्बन्ध किसीका हो सकता है, तो वह केवल बहरे आदमी और अन्धी औरतका हो सकता है।" मर्द जो कुकर्म्म करेगा, वह औरत

देख न सकेगी और औरत जो गालियाँ देगी, वह मर्द सुन न सकेगा।

बहुतसे लोग सौन्दर्य्य पर मुग्ध होकर विवाह करते है। शरीर और चेहरे आदिकी सुन्दर बनावट तो अवश्य पुरुषको आकृष्ट कर लेती है, पर यदि स्त्री सुघर और समझदार हो तो उसकी ओर पुरुष और भी अधिक आकृष्ट होता है। संसारमे सौन्दर्य्य का बहुत महत्त्व है। पुरुषोकी अपेक्षा स्त्रियाँ होती भी अधिक सुन्दर है और स्त्रियोमे सौन्दर्य्यकी आकांक्षा भी और सब आकांक्षाओसे बढ़-चढ़ कर होती है। पर एकमात्र सौन्दर्य्यसे ही विवाह सुखद नही हो सकता। केवल रूप पर मोहित होकर ही पहले तो बहुतसे लोग विवाह कर लेते हैं; पर साल दो साल बाद ही स्त्रीके रूपमे किसी प्रकारकी आकर्षण-शक्ति नहीं रह जाती। उस समय लोग स्वभाव और आचार आदिका सौन्दर्य्य ढूँढ़ते हैं। युवावस्थामे केवल अपने सौन्दर्य्यके कारण पत्नी अपने पतिको उतनी अच्छी नही लगती, जितनी वह प्रौढ़ या वृद्धावस्थामे अपने सद्गुणो और सुस्वभावके कारण भली जान पड़ती है।

पुरुषोंमें सौन्दर्य्य, अपेक्षाकृत कुछ कम होता है, पर तो भी अधिकांश महापुरुष और योद्धा आदि सुन्दर ही होते आये है। मनुष्यकी आकृति आदिका औरो पर बहुत कुछ प्रभाव पड़ता है। अधिकांश महापुरुषोंका स्वरूप ही, सबसे पहले औरों के सामने उन्हे श्रद्धेय बना देता है। किसी उच्च पद तक पहुँचनेमे भी बहुधा रूप ही लोगोंका सहायक होता है; उस पद पर बना रहना उसके गुणोंपर अवलम्बित होता है। यदि उसमे

योग्यता होती है, तो वह बहुत कुछ उन्नति कर लेता है और नही तो निकाल बाहर किया जाता है।

कोरा सौन्दर्य्य किसी कामका नही होता। हाँ, यदि उसके साथ सुजनता और सुस्वभाव भी हो, तो वह अवश्य बड़े कामका है। कोरा सौन्दर्य्य केवल आँखोको ही अपनी ओर आकृष्ट कर सकता है। मन वहीं खिच कर जायगा, जहाँ शारीरिक नही, बल्कि मानसिक सौन्दर्य्य होगा और इसीलिये प्रेम-बन्धनको दृढ़ करनेके लिये मानसिक सौन्दर्य्यकी आवश्यकता होती है। जो स्त्रियाँ केवल अपने रूप पर ही भूली रहती हो, उन्हे अपना भ्रम छोड़ देना चाहिए और सबसे बढ़ कर मानसिक सौन्दर्य्यके सम्पादनके लिये प्रयत्न करना चाहिए। केवल रूपके कारण पति-पत्नीमे जिस व्यवहारकी धूम होती है, वह व्यवहार तो साल छः महीनेमे ही समाप्त हो जाता है। शेष जीवनमें तो पुरुषको जीविकाके लिये कठिन परिश्रम करना पड़ता है और स्त्रीको ऐसा प्रयत्न करना पड़ता है, जिसमे गृह-स्वामीको सच्चा गृह-सुख मिले। जिस प्रकार पुरुषको अपने निर्वाहके लिये किसी तरहका रोजगार या काम-धंधा सीखनेकी आवश्यकता होती है, उसी तरह स्त्रीको गृह-प्रबन्ध सीखनेकी आवश्यकता होती है। जो घर साफ-सुथरा होगा, जिसमे सब चीजे करीनेसे रखी होगी, जिसमे व्यर्थ कोई चीज नष्ट न होगी और जिसमे कभी किसी प्रकारका मनो-मालिन्य या कुभाव उत्पन्न न होगा उसी घरमे आकर पुरुष का चित्त प्रसन्न हो सकता है और ऐसे ही घरके दम्पति सदा सुखी भी रह सकते हैं। जिस घरमें इन बातोका अभाव होता है, वह प्रत्यक्ष नरक बन जाता है।

गृहस्थी ही स्त्रियोका संसार है और पति ही सर्वस्व। लेकिन

स्त्रीका केवल अपने पतिके व्यक्तित्वके साथ ही सम्बन्ध रहता है, उसकी योग्यता, कीर्त्ति या गुणो आदिके साथ उसका विशेष सरोकार नही होता। यदि पति वड़ा भारी महात्मा, राजनीतिज्ञ चित्रकार, कवि या लेखक हो, तो स्त्रीको इन सब बातोसे क्या मतलब? पतिके नातेसे उसे जो सुख मिलता है, वही उसके लिये सब कुछ है। इसीलिये स्त्रियोको कभी कभी बहुत दुखी होना पड़ता है। पति तो सदा अपने काममे लगा रहता है—दिन-रात व्यापार अथवा गूढ़ विचारोमे मग्न रहता है। उसे ऐसे कार्य्य करनेकी फुरसत ही नही मिलती, जिनसे स्त्रियाँ प्रसन्न होती हैं। ऐसी दशामे यदि स्त्री अधिक समझदार न हो, तो गृहस्थीमे दुःख और कभी कभी कलहका भी आरम्भ हो जाता है, क्योकि कुछ स्त्रियाँ स्वभावत. ऐसी भी होती है, जो यही चाहती है कि पति सदा हमारे अनुराग और मनोविनोदमे ही लगा रहे और किसी दूसरी बातकी ओर ध्यान न दे। ऐसी दशामे पतिको उचित है कि वह पत्नीको भी अपने साथ साथ किसी ऐसे काममे लगा ले, जिसमे उसका जी बहला रहे और पतिका काम-काज करना उसे न खटके।

कवि स्वभावतः प्रेमी और रसिक हुआ करते हैं। अधिकांश कवि ऐसे ही हुए हैं, जिनका विवाह बहुत ही बाल्यावस्थामे हुआ है। भारतवर्षमे तो भला माता-पिता ही बचपनमे अपने लड़कोका विवाह कर देते हैं और उन लड़कोमे कवि तथा मूर्ख सभी आ जाते हैं। पर पाश्चात्य देशोमे जहाँ पुरुष और स्त्रियाँ दोनो अपना विवाह करनेमे पूर्ण-रूपसे स्वतंत्र होते हैं, कवि युवक बहुत ही थोड़ी अवस्थामे अपना विवाह कर लेते है। चर्चिल का विवाह सत्रह वर्षकी अवस्थामे, शेक्सपियरका अठारह वर्षकी

अवस्थामे और शेलीका उन्नीस वर्षकी अवस्थामे हुआ था। कीट्स जब स्कूलमें पढ़ता था, तभी वह सौन्दर्य्योपासक था और सुन्दर स्त्रियोको देखनेका उसे बहुत शौक था। यहाँ तक कि वह सुन्दरियोको स्वर्गीय समझता था।

कवियोके विचार जिस ससारमे चक्कर लगाया करते हैं, वह ससार हमारे और आपके इस संसारसे बिलकुल भिन्न होता है। उनका संसार बहुत ही सुन्दर और आदर्श होता है। वे जब चाहते है, तब उस ससारका दृश्य अपनी आँखोंके सामने उपस्थित कर लेते है और जब चाहते हैं, तब उसे हटा देते है। इस ससारकी तरह उनका संसार न तो कठिन होता है और न सदा उनके सामने उपस्थित रहता है। न उसमे इतनी चिन्ताएँ होती हैं और न विपत्तियाँ। इसीलिये स्त्रियोंके सम्बन्धके उनके विचार भी बहुत ही उच्च कोटिके होते हैं। उनके हृदयमे आदर्श स्त्रीकी प्रतिमा स्थापित रहती है और उसके प्रति उनमे शुद्ध और आदर्श प्रेम होता है। डाएटेका बिएट्रिसके साथ; पेट्रार्कका लारा के साथ और टस्सोका लियोनोराके साथ जो प्रेम था, वह बहुतसे अंशोमे आदर्श था। बिएट्रिसके प्रेममे डाएटे अपनी स्त्री और बच्चोको भूल गया था। पेट्रार्क अपनी लड़कीको घरमे नहीं रखता था और टस्सो बहुत दिनों तक पागलखानेमे पड़ा रहा था।

डाएटे यदि जन्मसे प्रेमी नहीं था, तो भी कमसे कम उसके जीवनका आरम्भ प्रेमसे ही हुआ था। नौ वर्षकी अवस्थामे वह आठ वर्षकी बालिका बिएट्रिस पर सदाके लिये आसक्त हो गया। उसने कभी अपना प्रेम प्रकट नहीं किया और एक दूसरी स्त्रीके साथ विवाह भी कर लिया। चौवीस वर्षकी अवस्थामे बिएट्रिस मर गई, जिसके दुःखमे वह इतना कृश और क्षीण हो गया था

कि उसके मित्र भी उसे बड़ी ही कठिनतासे पहचान सकते थे। उस समय उसका जीवन और भविष्य मानो घोर अन्धकारमय हो गया। केवल बिएट्रिसका ध्यानही उसके जीवनका आधार रह गया। मृत्युने बिएट्रिसको संसारसे उठा लिया, डाण्टेने स्वर्ग तक उसकी आत्माका पीछा किया और उसकी आँखोसे उसने सारा विश्व देखा और उसीके प्रेमसे उत्तेजित होकर उसने अपने सबसे बड़े काव्य Divirna Comedia की रचना की। इस काव्यमे उसने बिएट्रिसको मानो देवी बना कर उसकी पूजा की है। उसका प्रेम, आदर्श और स्थायी था और इसका कारण बहुतसे अंशोमे उसका विरह ही था। यदि बिएट्रिससे उसका विवाह हो जाता, तो वह कभी इतनी सुन्दर कविता न कर सकता। अपनी विवाहिता स्त्रीके साथ उसका विशेष प्रेम नही था, क्योकि उसके लिये उसने एक पंक्ति भी नही लिखी। इसके अतिरिक्त जब डाण्टेको देश-निकाला मिला, तब उसकी स्त्री उसके साथ भी नहीं गई थी, बल्कि फ्लोरेन्समे ही रह गई थी।

पेट्रार्क और लाराकी प्रेम-कथा भी बहुत दिनो तक लोगोको स्मरण रहेगी। लाराके प्रेममें पेट्रार्क इधर उधर मारा मारा फिरता था और प्राय: एकान्तमें भी जाकर उसका ध्यान किया करता था। कभी-कभी अपनी प्रेमिकाकी दूरसे एक झलक देखनेके लिये वह उसके मकानके आस-पास भी आ निकलता था। लाराका पति पेट्रार्कके प्रेम और भावसे दुखी रहा करता था। जब चालीस वर्षकी अवस्थामे लाराका प्लेगसे देहान्त हो गया, तब पेट्रार्कने लिखा था कि वह एक ऐसा दीपक था, जो चिकनेके अभावके कारण बुझ गया। उसकी मृत्युका समाचार सुनते ही सारा संसार उसके लिये बिलकुल अन्धेरा हो गया

था। इसके बाद पेट्रार्क बीस वर्ष तक जीता रहा। उसका सारा जीवन उसीके सम्बन्धमे कविता करते बीता।

पेट्रार्ककी कविताका इटलीमे बड़ा आदर था। उसी कविताको पढ़कर टस्सो भी उसके ढंग पर चलने और कविता करने लगा। पहले वह एक स्त्री पर आसक्त हुआ, पर जब उस स्त्रीने दूसरेसे अपना विवाह कर लिया, तब उसने एक राजकुमारीकी मूर्ति अपने हृदय-मन्दिरमे स्थापित की। यह राजकुमारी एक ड्यूककी बहिन थी। उसीके प्रेममे वह कविता करने लगा। उस कवितासे यह झलकता था कि वह राजकुमारी भी उस पर कुछ कृपा रखती है, यद्यपि वास्तवमे यह बात नही थी। उसकी कुछ कविताएँ किसीने चुरा कर ड्यूकको दिखलाईं, जिससे चिढ़ कर ड्यूकने उसे एक मठमे बन्द करा दिया। किसी तरह वह वहाँसे निकल भागा और साल भर तक इधर उधर मारा-मारा फिरा। सालभर बाद उसे फिर वही आना पड़ा, जहाँ उसका हृदय रमता था। वहां पहुँच कर उसने ड्यूक और राजकुमारीसे मिलना चाहा, पर उन लोगोने उसके साथ मिलनेसे इन्कार कर दिया। इस पर वह पागल हो गया और उनको तथा उनके घरवालोको बुरा-भला कहने लगा। वह फिर पकड़ कर एक अस्पतालमे भेज दिया गया, जहाँ पागलो-की तरह सात वर्ष तक उसकी चिकित्सा होती रही। पर कुमारीका ध्यान उसके हृदयसे कभी न निकला और वह सदा उसके सम्बन्धमे कविता करता रहा।

कवि मेटासटासियो जिस गानेवाली पर आशिक था, उसके और उसके पतिके पीछे पीछे वह दिन रात घूमा करता था। उसकी प्रेमिकाने मरते समय लिख दिया था कि मेरी मृत्युके उप-रान्त मेरी सारी सम्पत्ति मेटासटासियोको मिले। पर उसने

वह सम्पत्ति नहीं ली और उसके पतिको ही दे दी। एक और कविने अपनी प्रेमिकाको अपने ऊपर अनुरक्त कर लेने पर भी केवल इसीलिये दूसरी स्त्रीसे विवाह कर लिया था कि वह विरह-दशाको सर्वोत्तम और उपयुक्त समझता था और उसी विरह-दशामे उसने बहुत अच्छी कविता भी की थी। वैलैण्डकी प्रेमिका भी उसे चाहती थी; पर वैलैण्ड दरिद्रताके कारण उससे विवाह न कर सका था। जव उसकी प्रेमिकाने दूसरेसे विवाह कर लिया, तब भी वह वरावर उसकी मुहव्बतका दम भरता रहा और वरावर कविता करता रहा। इवैल्डकी प्रतिभा तो मानो उसी समय जाग्रत् हुई थी, जव उसकी प्रेमिकाने उसे निराश करके दूसरेसे विवाह कर लिया था। गाथेका अनुराग बहुत-सी स्त्रियो पर था, पर केवल अपनी स्वतंत्रताकी रक्षाके विचारसे ही उसने किसीके साथ विवाह नही किया। इसी प्रकार और भी अनेक ऐसे कवि हो गये हैं, जिन्होने अपनी प्रेमिकाके विरहमे अच्छी अच्छी कविताएँ की है। यदि उनकी प्रेमिका उन्हे मिल जाती, तो वे कभी वैसी अच्छी कविता करनेमे समर्थ न होते।

युरोपके अन्यान्य देशोमे तो कवियो और साहित्य-सेवियोका प्रेम बहुतसे अंशोमे उच्च और आदर्श था; पर विगत शताव्दीमे फ्रान्समे प्रेमकी बड़ी ही दुर्दशा थी। उन दिनो वहाँ वड़े छोटे सभी दुराचारी हो गये थे। विवाहसे बहुत पहले स्त्री और पुरुषमे अनुचित सम्वन्ध हो जाता था, जिसे छिपानेके लिये उन्हे विवाह करना पड़ता था। उनका अधिकांश साहित्य इसी प्रकारके गन्दे प्रेमसे भरा पड़ा है।

वहाँ दुराचारिणी स्त्रियाँ ही अच्छी समझी जाती थी और उन्हींका सव जगह आदर होता था। स्त्रियाँ केवल पुरुषो

के मनोविनोदकी सामग्री समझी जाती थी। इसमे सारा दोष वहाँके तत्कालीन साहित्य और साहित्य-सेवियोंका था। क्रान्तियोसे तो समाजकी रक्षा की जा सकती है, पर स्त्रियोकी दुराचारितासे समाजकी रक्षा नही हो सकती। इससे समाजका प्रत्येक अंग दूषित हो जाता है। इस दोषसे समाजकी रक्षा साहित्य-सेवी ही कर सकते हैं। सभ्य देशोमे स्त्रियोकी उपमा बैककी हुण्डियोसे दी जाती है और कहा जाता है कि साहित्य-सेवी महाजन हैं; उन्हीकी इच्छानुसार सर्व-साधारणकी दृष्टिमे स्त्रियोका आदर-रूपी भाव घटता और बढ़ता रहता है। यदि यह बात ठीक मान ली जाय, तो कहना पड़ेगा कि विगत शताब्दीमे फ्रान्सका नैतिक दृष्टिसे बहुत अधिक अधःपतन हो गया था। कारण यही है कि उस समयके वहाँके अनेक बड़े-बड़े कवि और लेखक स्वयं दुराचारी थे। डिडेरटने, जिसने योग्यता और सद्गुण पर एक बहुत अच्छा निबन्ध लिखा है, पहले अपनी एक प्रेमिकासे विवाह किया और तब एक दूसरी रखी हुई प्रेमिकाके व्ययके निर्वाहके लिये एक बहुत ही अश्लील उपन्यास लिखा। रोशियोका बहुत-सी सुन्दरियोके साथ अनुचित सम्बन्ध था। प्रसिद्ध लेखक वाल्टेयरने कभी विवाह ही नही किया, क्योकि बिना विवाह किये और यो ही उसका काम निकलता रहता था। वह अपनी अन्तिम प्रेमिकाके साथ एक ही मकान में रहा करता था और लोगोको दिखलानेके लिये उसे अँगरेजी और इटालियन भाषा सिखलाया करता था। इस प्रकार प्रेमी और प्रेमिका दोनो एक साथ छः वर्ष तक रहे। अन्तमे प्रेमिका अचानक मर गई और प्रेमी पर मानो दुःखका पहाड़ टूट पड़ा। भला जहाँ इतने बड़े बड़े विद्वानो

और लेखकोकी यह हालत हो वहाँ समाजकी दुर्दशाका क्या पूछना है !

अँगरेज कवियोमे भी बहुतसे लोग बड़े-बड़े आशिक-मिजाज हो गये हैं। स्विफ्टका तीन स्त्रियोंके साथ बहुत ही गुप्त-रूपसे अनुचित सम्बन्ध था। पोप पहले बार एक स्त्री पर आसक्त हुआ था ; पर जब उस स्त्रीने उसका कुछ भी ध्यान न किया, तब वह युरोपकी सबसे बढ़ कर सुन्दर स्त्री लेडी माण्टेग पर आसक्त हुआ , जब पहले पहल लेडी पर उसने अपना प्रेम प्रकट किया, तब वह खिल-खिला कर हँस पड़ी। तबसे वह उससे बहुत ही घृणा करने लगा। काउपर बाल्यावस्थामे अपनी चचेरी बहन पर आसक्त हुआ था और उससे निराश होकर ही वह कविता करने लगा था। ड्राइडनने बहुत ही ठीक कहा—"प्रेम यदि मनुष्यको कवि नही तो कमसे कम तुकबन्द अवश्य बना देता है।" इसके उपरान्त वह एक और स्त्री पर आसक्त हुआ था और वह उसके पुत्र और पतिके साथ रहा करता था। पहले तो उसकी प्रेमिकाका पति मरा और तब उसकी प्रेमिका लकवे की बीमारीमे मरी। प्रेमिकाके मरनेसे वह अत्यन्त दुखी हुआ था। गोल्डस्मिथ भी एक बार एक स्त्रीके प्रेममे फँस गया था। कीट्स तो बहुत बड़ा आशिक-मिजाज था। उसे हर जगह इश्क ही सूझता था। फ्रान्सीसी कवि बेरैंजरने युवावस्थामे तो बहुत-सी स्त्रियोके साथ प्रेम किया ही था, पर वृद्धावस्थामे भी वह एक अँगरेज युवती पर आसक्त हो गया था। बुढ़ापेमे वह उसके प्रेममे बिलकुल पागल हो गया था। जब उसने अपनी प्रेम-कथा और उससे होनेवाली व्यथा अपने एक मित्रको सुनाई, तब वह उसे लेकर एक देहातमे चला गया। वहाँ वे दोनो कई सप्ताह

तक रहे। बहुत कुछ जी बहलानेके बाद तब कही जाकर बुड्ढेके कलेजेका घाव पूजा। इसीलिये एक समझदारने कहा है कि प्रेम भी चेचकके रोगसे कम नही है; यदि यह कही बुढ़ापेमें हो जाय, तो फिर आफत ही ढाता है।

हमारे यहाँ हिन्दी-साहित्यके कवियोंमे भी बहुतसे कवि रसिक और स्त्री-प्रेमी हो गये हैं। पर सच्चे प्रेमियोमे बिजावरके ठाकुर कवि (सवैयावाले) का नाम विशेष उल्लेख योग्य है। बिजावरमे एक सुनार था, जिसकी एक विवाहिता कन्या महल्ले के एक कुएँ पर पानी भरनेके लिये नित्य सन्ध्याके समय जाया करती थी। एक दिन ठाकुर उसे देखकर उस पर मोहित हो गये और तबसे वे नित्यप्रति सन्ध्या समय उसे देखनेके लिये वहाँ जाया करते थे। पर विशेषता यह थी कि वे कभी उससे एक शब्द भी न बोलते थे, क्योंकि वे जानते थे कि वह कन्या विवाहिता है और उसके साथ किसी प्रकारकी बात-चीत या छेड़-छाड़ करना उचित नही है। पर वे सौन्दर्यके उपासक थे, उसका सौन्दर्य उन्हे बहुत भला मालूम होता था और इसीलिये वे नित्य एकबार उसके दर्शनके लिये उस कुएँ पर जाया करते थे और नित्य उसके रूपकी प्रशंसामे एक नया सवैया पढ़कर उसे सुनाया करते थे। वह कन्या भी उनका सवैया सुनकर बहुत ही प्रसन्न होती थी। पहले तो कुछ दिनो तक यह क्रम इसी प्रकार चलता रहा, पर जब उस कन्याके पिताको यह बात मालूम हुई, तब उसने उसका कुएँ पर पानी भरने जाना बन्द कर दिया। तब वह कन्या भी बीमार पड़ गई और ठाकुर कवि भी। दोनोको ज्वर आने लगा। उस अवसर पर वे दोनो ही एक दूसरेको देखनेके

लिये बहुत ही व्याकुल रहा करते थे। कई दिन बाद ठाकुर कविने उठ कर नित्य उसके मकानके आस-पास चक्कर लगाना आरम्भ किया। उस समय उनके एक मित्रने उन्हे समझाया कि तुम क्यो व्यर्थ चक्कर लगाते हो, तुम्हारी प्रेमिकाको तुम्हारी कुछ खबर भी है। इस पर उन्होने उसके मकानके नीचे एक सवैया कहा था जिसका अन्तिम पद था—

"आवत हैं नित, मेरे लिये इतनो तो विशेष कै जानत हो रहे।"

तबसे उस कन्याको मालूम हो गया कि ये नित्य मुझे देखनेके लिये यहाँ भी आया करते है। तबसे वह नित्य झरोखे-खिड़की आदिसे उन्हे दर्शन देने तथा उनके दर्शन करने लगी। पर फिर भी दोनो रोगी ही रहे, रोग-मुक्त कोई न हुआ। अन्तमे उस कन्या ने अपनी मातासे कहा कि यदि तुम चाहती हो कि मै अच्छी हो जाऊँ, तो तुम मुझे कुएँ पर पानी भरनेके लिये जाने दिया करो। माताने उसकी बात मान ली और उसे कुएँ पर जानेकी आज्ञा मिल गई। तब कही जाकर दोनो अच्छे हुए और फिर नित्य एक दूसरेके दर्शन करने लगे। कुछ दिनो बाद उस कन्याकी ससुरालवालोको यह बात मालूम हुई और उनके डरसे पिताने फिर कन्याको कुएँ पर जानेसे रोक दिया और बिजावरके तत्कालीन महाराजसे इस बातकी शिकायत की। महाराजने ठाकुरको अपने दरबारमे बुला कर पूछा तो उन्होने स्पष्ट कह दिया कि महाराज मैंने उसे तनिक भी पाप-दृष्टिसे नही देखा; मेरा उस पर बहुत ही सात्त्विक और पवित्र प्रेम है। पर पिताका इन बातोसे सन्तोष नही हुआ और उसने कन्याको घरसे बाहर न निकलने दिया। तब एक दिन बहुत ही दुखी होकर ठाकुरने उसी कुएँ पर जाकर एक सवैया पढ़ा, जिसमे उन्होने जल-देवताकी प्रार्थना की और

कहा कि यदि मेरा प्रेम सच्चा और शुद्ध हो, तो आप किसी प्रकार फिर उस सुन्दरीको यहाँ बुलाइए। कहते हैं कि वह कुआँ उसी दिन सूख गया, जिसके कारण महल्लेमे बड़ी ही हलचल मची। तब फिर उस कन्याने अपने माता-पितासे कहा कि ठाकुरने आज तक मुझसे कभी एक भी बात नहीं की और न मुझे कभी छेड़ा। ऐसी दशामे यदि आप लोग चाहते हो कि कुएँमे फिरसे पानी आवे, तो मुझे वहाँ पानी भरनेके लिये जाने दीजिए। लाचार माता-पिताने इसे जानेकी आज्ञा दी, ठाकुर भी पता लगा कर वहाँ पहुँचे। उसी समय फिर कुएँमे पानी आ गया। बिजावरमे अब तक वह कुआँ भी मौजूद है और उस कन्या तथा ठाकुरका मकान भी और इस बातको वहाँके प्रायः सभी लोग जानते हैं।

प्रसिद्ध कवि आलम जब पहले ब्राह्मण थे, तब उन्होंने एक बार एक दोहेका एक चरण बनाया था, पर उसका दूसरा चरण उनसे न बन सका था। उस एक चरणको कागज पर लिख कर उन्होंने अपनी पगड़ीके पल्लेमे बाँध लिया था। एक दिन उन्होंने वह पगड़ी रँगनेको दी और उसके पल्लेमे भूलसे वह कागज भी बँधा रह गया। रँगरेजकी कन्याने वह कागज देखा और उस दोहेका दूसरा चरण भी बनाकर उस पर लिख दिया और जब पगड़ी रँगी जा चुकी, तब वह कागज भी उसीके साथ रखदिया। आलम वह कागज पढ़ कर बहुत ही विस्मित हुए और पता लगाते हुए उस रँगरेजके घर पहुँचे। वहाँ उन्हे वह लड़की मिली, जिसने दोहेका दूसरा चरण बनाया था। उस लड़कीके रूप और गुण पर वे इतने मोहित हुए कि तुरन्त मुसलमान होकर उन्होंने उसके साथ विवाह कर लिया।

इसी प्रकार और भी बहुतसे ऐसे कवि हो गये हैं जो स्त्री-प्रेमी थे। बोधाका इश्कनामा और बिहारीकी सतसईसे सिद्ध होता है कि ये दोनों ही कवि बड़े सौन्दर्य्य-प्रेमी थे। देवकी कवितासे भी यही बात सिद्ध होती है। केशव तो वृद्धावस्थामे भी नित्य उस स्थान पर जाया करते थे, जहाँ स्त्रियाँ नहाती और पानी भरती थी। उन्हे देख कर युवतियाँ "बाबा" कह कर उनकी हँसी उड़ाया करती थीं। उसी अवसर पर उन्होने यह दोहा कहा था—

केशव केसन अस करी, बैरिहु जस न कराहिं।
चन्द्रवदन मृगलोचनी, बाबा कहि कहि जाहि॥

आधुनिक कवियो और लेखकोमे भारतेन्दु बाबू हरिश्चंद्र उल्लेख योग्य हैं। आपका दो वेश्याओसे सम्बन्ध था। उर्दू भाषाके तो बहुतसे ऐसे कवि हो गये हैं, जो मद्यप भी थे और स्त्री-लोलुप भी। बंगलाके कवि माइकेल मधुसूदन दत्त एक युरोपियन युवतीके प्रेम-पाशमे इतने फँस गये थे कि उससे विवाह करनेके लिये उन्हे ईसाई हो जाना पड़ा था।

पाश्चात्य देशोंमे लोग पहले प्रेम और प्रेम-परीक्षा करते हैं और तब विवाह। लेकिन ऐसे लोगोंमे प्रायः यही देखा जाता है कि विवाह होनेसे पहले तो प्रेमी और प्रेमिकामे बहुत प्रेम होता है, पर विवाहके कुछ ही दिनो उपरान्त वह प्रेम शिथिल पड़ जाता है। पर वास्तवमे परीक्षाका समय विवाहके उपरान्त ही आता है। यदि विवाह होनेके उपरान्त अनेक प्रकारकी कठिनाइयाँ और कष्ट झेल कर भी पति और पत्नी परस्पर एक दूसरेके प्रेममे दृढ़ रहे, तो समझना चाहिए कि वे सच्चे प्रेमी है। यौवन और सुखके समय

तो सभी लोग प्रेम कर सकते हैं। सच्चे प्रेमके लिये मनमे सच्ची सहानुभूतिकी आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त पति-पत्नीके लिये यह भी आवश्यक होता है कि वे अपने मन और विचारो को अपने अधीन रखे और अपना उत्तर-दायित्व समझे, यदि एकसे कोई भूल या अपराध हो जाय, तो दूसरा उसे शान्ति-पूर्वक क्षमा कर दे और यदि एकके ऊपर विपत्ति आवे, तो दूसरा उसका कभी साथ न छोड़े। ऐसी अवस्थामे दोनोका जीवन बड़े ही सुख, बड़े ही आनन्दसे बीतेगा। दोनो ही अपने घरको स्वर्ग और सारे सुखोका केन्द्र समझेगे और सब प्रकारके कष्टो तथा आपत्तियोसे सदा रक्षित रहेगे।

काम-काजी आदमी जब दिन भरका थका-मॉदा घर आता है, तब वह सुखी और शान्त होना चाहता है और यदि घरमे सुशीला स्त्री हो, तो इसमे कोई सन्देह नही कि उसे वहॉ अवश्य सुख और शान्ति मिलती है। सुशीला स्त्रीकी पहचान यह है कि गृहस्थीका सारा प्रबन्ध बहुत ही उत्तमता-पूर्वक करे, बाल-बच्चोके पालन-पोषणका पूरा-पूरा ध्यान रखे, सास-ससुर, देव-रानी, जेठानी और ननद आदिको कभी रुष्ट या असन्तुष्ट न होने दे, यदि किसी प्रकारका कोई कष्ट आ पड़े, तो यथासाध्य चुप-चाप उसे सह ले और हर-दम अपने पतिकी सेवामे दत्तचित्त रहे। ऐसी ही स्त्रियोके कारण बहुतसे लोग अच्छे अच्छे काम कर डालते है और कभी-कभी महात्माओ तकमे गिने जानेके योग्य हो जाते हैं। पर संसारमे जहॉ ईश्वरकी और अनेक विचित्र लीलाऍ देखी जाती हैं; वहॉं यह भी देखा जाता है कि प्रायः अच्छी स्त्रीको बुरा पति मिलता है और बुरी स्त्री अच्छे पतिके गले मढ़ी जाती हैं। ऐसे बहुतसे विद्वान् और महापुरुष हो गये हैं, जो अपनी स्त्री

के लड़ाके, चिड़चिड़े या शक्की स्वभावसे सदा दुखी रहते थे और जिन्हे गृहस्थी बिलकुल जंजाल मालूम होती थी। पर साथ ही बहुतसे विद्वान् और महापुरुष ऐसे भी हो गये है, जो गृहस्थीके विचारसे बड़े ही भाग्यवान् थे और जिनकी स्त्रियॉ बहुत ही सुशीला, सुयोग्य, दक्ष और विदुषी थी। ऐसी स्त्रियोने विद्या और विज्ञान विषयक कार्योंमे अपने पतियोको बहुत अधिक सहायता दी है और यथासाध्य उनका हाथ बॅटाया है।

पर आज-कलकी सभ्यता स्त्रियोको बहुतसे अंशोमे नष्ट कर रही है। सन्त पालने कहा है कि आज-कलकी स्त्रियाँ प्राय' घर का कोई काम-धन्धा नही करती, सदा खाली रहती है, इधर-उधर घूमा करती हैं और व्यर्थ दूसरोकी निन्दा-स्तुति करती फिरती हैं। यह दशा पाश्चात्य सभ्य समाजकी भी है और भारतीय समाजकी भी। ऐसी स्त्रियाँ न तो कभी प्रेमकी पात्र हो सकती हैं और न उनसे पतियोको किसी काममे सहायता मिल सकती है। भला स्त्रियोकी यह दशा देखकर यदि कोई समझदार अविवाहित रहना ही पसन्द करे तो उसमे उसका क्या दोष है? पाश्चात्य देशोमें जहाँ विवाह करना या न करना अपने अधिकारमे होता है, बहुत से पढ़े-लिखे और कमाने-धमानेवाले लोग भी इसी लिये विवाह करके गृहस्थीकी झंझटोमे फँसनेसे डरते है। चाहे आगे चलकर वे दुराचारी ही क्यो न हो जायँ और उनके द्वारा समाज कितना ही दूषित क्यो न हो जाय, पर वे विवाहसे सदा बचनेका ही प्रयत्न करते हैं। इसी लिये भारतीय समाजमे यह प्रथा स्थापित कर दी गई है कि माता पिता ही अपनी सन्तानके गलेमे गृहस्थी का जंजाल डाल दे और सन्तान चाहे दुखी होकर और चाहे

सुखी रह कर उसका निर्वाह करे और भविष्यमें उनके द्वारा समाजमें दुराचार फैलनेकी आशंका न रह जाय। यही कारण है कि हमारा समाज उन अनेक दोषोसे रक्षित हैं, जिनसे यूरोपियन सभ्य समाज बुरी तरह दूषित और कलंकित हो रहा है।'

अब हम दम्पतिके प्रेमके सम्बन्धमे दो बातें कह कर येह प्रकरण समाप्त करते हैं। हैटर्नने कहा है कि "यदि स्त्रीमे यथेष्ट सौन्दर्य हो, तो वह पुरुषको अपने वशमे कर सकती है और यदि पुरुषके पास यथेष्ट धन हो तो वह स्त्रीको अपने वशमे कर सकता है।" पर यह बात सांसारिक अनुभवके बहुत कुछ विपरीत है। केवल धनसे स्त्रीका प्रेम सम्पादित नहीं किया जा सकता। बल्कि सच पूछिए तो जो प्रेम केवल धनके कारण होता है, वह न तो कभी सच्चा प्रेम होता है और न उसका परिणाम सुन्दर और सुखद होता है। बहुधा ऐसे प्रेमका अन्तिम परिणाम यही होता है कि पति और पत्नी दोनों दुराचारमे प्रवृत्त हो जाते हैं। सच्चे प्रेमके लिये मनमे एक दूसरेके प्रति सहानुभूतिकी आवश्यकता होती है। इसीलिये किसीने बहुत ही ठीक कहा है कि कभी-कभी कष्ट और आपत्तियोसे भी प्रेम बहुत दृढ़ हो जाता है, क्योकि उस दशामें सहानुभूतिकी विशेष आवश्यकता होती है और सहानुभूतिकी मात्रा जितनी ही अधिक होगी, प्रेम भी उतना ही अधिक होगा। दूसरी बात यह है कि प्रारम्भिक और नया प्रेम किसी कामका नहीं होता। पति और पत्नीका जितने ही अधिक दिनो तक साथ रहेगा, प्रायः उनके प्रेममे भी उतनी ही वृद्धि होगी। एक दूसरेके हृदयको अच्छी तरह पहचानने और दोनो हृदयोके एक होनेमे बहुत समय लगता

है। ज्यों-ज्यों दिन बीतते हैं, त्यों-त्यों वे दोनों एक दूसरेके गुणों और दोषोंसे परिचित होते जाते हैं और गुणोंका आदर करना तथा दोषोंको उदारता-पूर्वक क्षमा करना या सहना सीखते जाते हैं और यही परिचयकी अधिकता, सहानुभूति और सहनशीलता आदि प्रेमके प्रधान आधार हैं।

दसवाँ प्रकरण

जीवन-सन्ध्या—महात्माओंके अन्तिम विचार ।

वृद्धावस्थामे भी बहुत-सी विशेषताएँ हैं । युवावस्थामे अनेक प्रकारके सुख होते है और वृद्धावस्थामे उनकी स्मृति बनी रहती है । जिस प्रकार किसी फूलकी सबसे अन्तमे खिलनेवाली पँखड़ियाँ सबसे अधिक सुन्दर होती है, उसी प्रकार जीवनके अन्तिम दिन भी बहुत ही सुन्दर और सुख-पूर्ण हो सकते हैं । जब किसी वृक्षके फूल झड़ जाते हैं, तब उसमे फल लगते हैं और जब शरीर शिथिल होने लगता है, तब मन परिपक्व होने लगता है । कारनैरोने पचासी वर्षकी अवस्थामे कहा था—"ज्यो-ज्यो शरीर वृद्ध होता जाता है, त्यों-त्यो आत्मा पूर्णता प्राप्त करती जाती है ।" अमेरिकाके डा० चैनिंगसे, उनकी मृत्युके कुछ ही पहले, किसीने पूछा था कि जीवनकी सबसे अधिक सुख-पूर्ण अवस्था कौनसी है । उन्होने उत्तर दिया—"साठ वर्षकी" । उस समय उनकी अवस्था साठ ही वर्षकी थी ।

भारतवर्षमे जिन लोगोंकी अवस्था पचपन साठ या पैंसठ वर्षकी हो जाती है, उनकी समझकी हँसी उड़ाते हुए लोग कहा करते है कि ये तो सठिया गये है । मानो साठ वर्षकी अवस्था तक पहुँचने पर आदमीकी अक्ल मारी जाती है । साधारणतः

पाश्चात्य देशोंके लोगोंका भी यही विश्वास है कि तिरसठ वर्षकी अवस्था तक पहुँचने पर मनुष्यकी मानसिक शक्ति क्षीण होने लगती है। लेकिन फाएटेनेलने कहा था कि मेरे जीवनका सबसे अधिक सुख-पूर्ण अंश पचपनसे पचहत्तर वर्षकी अवस्थाके मध्य-का था। बफन सत्तर वर्षकी अवस्थामे उतना ही अधिक प्रसन्न रहता था, जितना कि वह अपने जीवनकी और अवस्थाओंमे रहा करता था। उसने एक स्थल पर कहा था—"जो पिछली बातें पुराने मूर्खोंको दुखी करती है वही मुझे सबसे अधिक सुखी और प्रसन्न करती है।"

एक फ्रान्सीसी नीतिज्ञने कहा है कि युवावस्थाका स्वर्ग वृद्धावस्था है और वृद्धावस्थाका स्वर्ग युवावस्था है। युवावस्थाके दिन बहुत धीरे-धीरे बीतते हैं। उस समय बरस-गाँठ मानो बहुत दूर-दूर पड़ती है और जीवनका स्वर्ग धीरे-धीरे हमारी ओर आता है। पर ज्यों-ज्यों दिन बीतते जाते हैं, त्यों-त्यों बरस-गाँठ अधिक जल्दी होने लगती है। उस समय हम अपनी गत् युवावस्थाके स्वर्ग पर दृष्टि डालते है और उस समयकी बातोंकी स्मृति बनाये रखते है। वह मनुष्य बड़ा ही भाग्यवान् है, जो युवावस्थामे अच्छे अच्छे कार्य्य करता और अच्छी अच्छी बातें कहता है और वृद्धावस्थामे उनका स्मरण करके प्रसन्न होता है।

वृद्धावस्थामे लोग तरह तरहके कामोंसे और विशेषतः प्राचीन सुन्दर ग्रन्थोंका अध्ययन करके अपना जी बहलाते हैं। प्राचीन भारतवासी वानप्रस्थ आश्रममे प्रवेश करके जगलों और पहाड़ोंकी ओर निकल जाया करते थे और वही बहुत ही शुद्धता-पूर्वक और बड़े ही सुखसे अपना जी बहलाया करते थे। आज-कल भी

वृद्ध हिन्दू या तो सब तीर्थोंकी यात्रा करने निकल जाते है, या किसी एक ही तीर्थमें रह कर अपना शेष जीवन सुख और शान्ति-पूर्वक व्यतीत करते हैं। उस अवस्थामें उनका समय गीता-पुराण आदि पढ़ने और धर्म्म-चर्चा करके आत्मिक उन्नति करनेमे ही वीतता है। पाश्चात्य देशोमे वृद्धावस्थामे लोग किसी गाँव, देहात या दूसरे निर्जन स्थानमे छोटा मोटा मकान वना कर जा रहते हैं और वही बाग-बगीचा लगा कर रहते और पुस्तकें पढ़ कर अपना समय विताते हैं। लार्ड चेस्टर फील्ड जब वृद्धावस्थामे बहरे हो गये थे, तब वे केवल पुस्तके ही पढ़ा करते थे और कहते थे कि बहरोका यही वार्त्तालाप है और इसीके द्वारा वे समाजसे सम्बन्ध रखते हैं। साठ वर्षकी अवस्थामे उन्होने अपने एक मित्रको लिखा था—"इस बार बिना प्रसन्न या दुखी हुए मैंने साल भर केवल तरकारियाँ बोई हैं। मेरा बुढ़ापा और बहरापन तो मुझे प्रसन्न नही होने देता और मेरा दर्शन-शास्त्र अथवा कदाचित् मेरा स्वभाव ही मुझे दुःखसे रक्षित रखता है। मैं बड़े मजेमे पेड़ लगाता, घूमता और किताबे पढ़ता हूँ और साथ ही उस मृत्युकी भी प्रतीक्षा करता हूँ, जिसकी न तो मुझे आकांक्षा है और न भय।"

रिचर्ड बैक्सटर जब नीरोग और स्वस्थ था, तब वह केवल उपदेश ही देता था; पुस्तके लिखनेकी ओर उसका ध्यान कभी जाता ही न था। पर जब वह बहुत रोगी होनेके कारण अपने जीवनसे बिलकुल निराश हो गया, तब उसने अन्तिम और अनन्त शान्ति पर विचार करना आरम्भ किया और उन्ही विचारोंको एकत्र करके एक बहुत ही उत्तम ग्रन्थ The Saint's Rest (सन्तोंका विश्राम)' लिख डाला। अन्धे लोग एक तो स्वभा-

वस्त. प्रसन्न रहा ही करते है, दूसरे वृद्धावस्थामे यदि वे चाहे तो और भी अधिक प्रसन्न रह सकते है। महात्मा सूरदासजी प्राय: अस्सी वर्षकी अवस्थामें भी सदा बड़े ही प्रसन्न रहते थे और आनन्द-पूर्वक पद बनाया और गाया करते थे। अँगरेजीके सुप्रसिद्ध कवि मिलटनकी दृष्टि भी वृद्धावस्थामे जाती रही थी। इसके अतिरिक्त उसे और भी अनेक शारीरिक कष्ट भोगने पड़े थे। पर उसने न तो वृद्धावस्था और नेत्र-हीनताकी परवा की और न कष्टोकी चिन्ता की। अन्धे होनेके समय वह इंगलैण्ड-का एक इतिहास लिख रहा था। पर जब वह अन्धा हो गया, तब उसने इतिहास लिखना छोड़ दिया और अपने सुप्रसिद्ध ग्रन्थ Paradise Lost की रचना कर डाली। यदि मिलटन अन्धा न हो जाता, तो बहुत सम्भव था कि अँगरेजी-साहित्य इस ग्रन्थ-रत्नसे वंचित ही रह जाता।

प्रकृतिकी योजना भी बड़ी ही विलक्षण है। जब किसी मनुष्यकी कोई एक इन्द्रिय या शक्ति नष्ट हो जाती है, तब उसके बदलेमे उसकी कोई दूसरी इन्द्रिय या शक्ति बहुत ही तीव्र और बलवती हो जाती हैं। जब आँखोकी ज्योति नष्ट हो जाती है, तब मधुर शब्दोको सुननेके लिये श्रवण-शक्ति बहुत बढ़ जाती है; साथ ही स्पर्श करके ज्ञान प्राप्त करनेकी शक्ति भी बढ़ जाती है। मानो हर एक उँगली आंख हो जाती है। यहाँ तक कि मुँह भी आँख बन जाता है और चारो ओर देखने तथा पदार्थों का अनुभव करने लग जाता है। मनुष्यमें साहस आ जाता है और उसकी वृत्ति बहुत अधिक प्रसन्न हो जाती है, इस प्रकार उसकी आँखोवाली त्रुटिकी पूर्त्ति होती है। अन्धा होते

ही आदमी प्रायः मिलनसार और खुश-मिजाज हो जाता है। पर बहरेपनका प्रभाव इसके बिलकुल विपरीत होता है।

प्रसिद्ध रूसी कवि कोजलर केवल अन्धा ही नही हो गया था, बल्कि उसके दोनो पैरोमे लकवा भी मार गया था। पर इससे उसका काव्य-प्रेम और भी बढ़ गया था। यूलर अन्धा होने पर बहुत ही हँस-मुख हो गया था और उसकी स्मरण-शक्ति इतनी प्रबल हो गई थी कि उसने सारा महाकाव्य Æneid जबानी याद कर लिया था। यही नही, बल्कि उसे यहाँ तक स्मरण था कि कौनसे पेजका आरम्भ किस शब्दसे और अन्त किस शब्दसे होता है। गेलीलियो भी मरनेसे कुछ दिन पहले अन्धा हो गया था, पर तो भी उसने अपना मानसिक परिश्रम कभी नही छोड़ा। डा० टकर जब छासठ वर्षकी अवस्थामे अन्धा हो गया, तब उसकी लड़की उसे किताबे पढ़ कर सुनाया करती थी। अपने पिताको ग्रीक भाषाकी पुस्तके सुनाने के लिये ही उसने वह भाषा भी सीखी थी। डा० टकरने अपने लिये लिखनेकी एक कलका भी आविष्कार किया था और उस कलके द्वारा उसका लिखा हुआ लेख उसकी लड़की बहुत अच्छी तरह पढ़ लेती थी और साधारण लिपिमे उसकी नकल कर लेती थी। एतिहासिक बाते जानने और इतिहासज्ञ बननेके लिये दृष्टिका होना बहुत ही आवश्यक होता है, क्योकि उसमे बहुत अधिक ग्रन्थोका अध्ययन करना पड़ता है, पर प्रसिद्ध इतिहासज्ञ थियरीने अन्धे होनेके बाद बहुतसे अच्छे-अच्छे ग्रन्थ लिखवाये थे और प्रेस्काटने स्वयं, अन्धोके लिये बनी हुई एक प्रकारकी कलम और लिखनेके सन्दूकके द्वारा, कई ग्रन्थ लिखे थे। हेनरिच हेन मरनेसे प्रायः आठ वर्ष पहले बिलकुल अन्धा हो गया था और उसके सर्व-श्रेष्ठ

ग्रन्थ उसी समयके लिखे हुए हैं। डिसराइली जब अन्धा हो गया था, तब उसने साहित्य-सेवा-सम्बन्धी अपने बहुतसे अधूरे विचार अपनी कन्याकी सहायता लेकर पूरे किये थे।

लेकिन सबसे अधिक विलक्षण अन्धा प्रसिद्ध यात्री लफ्टिनेण्ट हालमैन था। पचीस वर्षकी अवस्थामे ही उसकी आँखे जाती रही थी, जिसके कारण उसे अपनी नौकरी छोड़नी पड़ी थी। उस मनुष्यके हृदयमे बहुत बड़ी-बड़ी आकांक्षाएँ और ऊँचे ऊँचे हौसले थे, इस लिये दृष्टिके नष्ट हो जानेसे वह अवश्य ही परम दुखी हुआ होगा। पर तो भी वह निराश नही हुआ और अपनी नवीन अवस्थाके अनुकूल ही अच्छी तरह रहनेके लिये वह तैयार हो गया। उसके मनमे देशाटनकी बहुत प्रबल इच्छा थी; पर अब तो वह अन्धा हो गया था। तो भी उसने साहस करके भ्रमण आरम्भ ही कर दिया। यद्यपि वह एक अक्षर भी फ्रान्सीसी भाषा नही जानता था, तथापि उसने पहले-पहल फ्रान्समे प्रवेश किया। लण्डनमे तो वह अपने पास एक नौकर भी रखता था; पर यात्राके लिये वह घरसे बिलकुल अकेला ही निकला था और अकेले ही उसने सारे युरोप, एशिया, अफ्रिका अमेरिका, और आस्ट्रेलियाकी यात्रा की थी। वह केवल भ्रमण ही नही करता था, बल्कि साथ ही साथ अपना भ्रमण-वृतान्त भी लिखता जाता था। उस वृत्तान्तके छः खण्ड तो उसने अपने जीवन कालमे ही प्रकाशित करा दिये थे और आगेके खण्डोकी हस्त-लिखित प्रति भी तैयार की थी। पर इसी बीचमे वह मर गया। अपने नैतिक साहस, कर्म्मण्यता, आत्मनिर्भरता और अदम्य उत्साह आदिके कारण वह अन्धा भी अपने ढगका एक ही हो गया है।

बहरोंके साथ लोगोंकी उतनी सहानुभूति नहीं होती, जितनी अन्धोंके साथ होती है। पर यदि सच पूछिए तो अन्धे होनेकी अपेक्षा बहरा होना और भी बुरा है। अन्धे आदमी तो प्रायः आनन्दित रहते हैं और उनका चित्त बहुधा प्रसन्न रहता है, पर बहरे प्रायः चिड़चिड़े होते और सदा दुखी रहते हैं। इसका मुख्य कारण यही है कि वे वार्त्तालापके आनन्दसे वंचित हो जाते हैं और सामाजिक सम्बन्धका सबसे अधिक आनन्द केवल वार्त्तालापमे ही आता है। मानो वे एक ऐसे भोजमे बैठते हैं, जिसमे वे सम्मिलित नही हो सकते। लोगोको तो वे अच्छी तरह हँसते-बोलते देखते हैं, पर वे स्वय हँस-बोल नही सकते। सर विलियम वाइल्डने एक स्थान पर लिखा है—"जहाँ चार आदमी बैठे हो, वहाँ एक कुछ बहरेका नाक-मुँह बनाना और अन्धेका मुसकराना देखने लायक होता है। पर जो लोग अधिक समझदार होते हैं, वे पूरे बहरे होने पर भी दूसरोकी बातोका केवल कुछ अंश सुननेके कारण ही कभी दुखी नही होते।"

प्रसिद्ध गवैये बीथोवनको तीस वर्षकी अवस्थामे ही कम सुनाई पड़ने लगा था। जब वह ऊँचा सुनने लगा, तब उसने लोगोसे मिलना-जुलना कम कर दिया। किसी गवैयेके लिये बहरा होना कितना बुरा है, इसके यहाँ बतलानेकी कोई आवश्यकता नही; क्योंकि जो कुछ मुँहसे कहा जाता है, वह जब तक अपने आपको सुनाई न दे, तब तक उसका कुछ आनन्द ही नही आता और विशेषतः गाने-बजानेके काममे तो यह जाननेके लिये कानकी और भी अधिक आवश्यकता होती है कि कही हमने बेसुरा तो नही गाया बजाया। अपने बहरेपनके कारण बीथोवन इतना दुखी हुआ कि अन्तमे उसने आत्मघात करना

निश्चय कर लिया। पर बहुत कुछ समझ-बूझ कर उसने अपने उद्विग्न चित्तको शान्त किया और तब धैर्य्य तथा साहस करके दूसरा कार्य्य आरम्भ किया। उस समय उसने बहुत अच्छे अच्छे गीत और पद बनाये और तीन बहुत ही उत्तम नाटक लिखे।

कहा जाता है कि युवावस्थामे मानसिक शक्तिमे वृद्धि करनेका गुण बना रहता है और मन पर नये विचार अंकित हो सकते हैं, लेकिन वृद्धावस्थामे भी जान्सन और जैम्स वाटने नई भाषाएँ सीखी थी और नये विचार ग्रहण किये थे। बरजेलियस बहुत अधिक वृद्ध हो जाने पर भी अपनी वैज्ञानिक यंत्र-शालामे बराबर काम किया करता था। बल्कि वृद्धावस्थामे तो मनुष्य और भी अधिक दयालु, सुशील और समझदार हो जाता है।

किसी मनुष्यके बहुत अधिक वर्षों तक जीवित रहनेसे ही यह नही कहा जा सकता कि उसने इतना अधिक जीवन व्यतीत किया है। कुछ लोग बीस ही वर्षमे इतना जीवन व्यतीत करते है जितना और लोग एक शताब्दीमे भी नही व्यतीत करते। मनुष्य जो कुछ कार्य्य करता अथवा अनुभव प्राप्त करता है, उसी-से उसके जीवनकी अधिकता या न्यूनताका अनुमान होना चाहिए। अधिक कार्य करना और अधिक अनुभव प्राप्त करना ही अधिक जीवन व्यतीत करना है। कोई तो विवाह करके दुखी होता है और कष्ट पाता है और कोई अविवाहित रहनेके कारण दुखी रहता है। लेकिन अविवाहित रहनेके कारण दुखी होने-वाला मनुष्य यह नहीं सोचता कि यदि मुझे विवाहसे होनेवाले सुख नही मिले हैं, तो साथ ही उससे होनेवाले दुखोका अनुभव भी तो नही हुआ है।

जो अपने आगे सन्तान होनेका सुख नहीं देखता, वह उनकी अकाल मृत्युका दुःख भी तो नही भोगता। वारवर्टनका जब लड़का मरा, तब उसने कहा था कि मेरी आधी जान निकल गई और उसी दिनसे उनकी शक्तियाँ क्षीण होने लगी। वर्थ अपने पुत्रकी मृत्युके कारण इतना दुखी हुआ था कि वह अधिक समय तक जीवित ही न रह सका।

कष्ट या चिन्ताके कारण हम अपने जीवनसे बहुत कुछ विरक्त हो जाते है। लोगोंने दुःखकी आवश्यकताका अनुभव किया है और जब वे साधारणत. उसका अनुभव नही कर सके हैं, तब उन्होने उसे उत्पन्न किया है। बहुतसे लेखकोंने अपने ग्रन्थोंमे "दु.ख-देव" का आराधन और आवाहन किया है। यहाँ तक कि 'महात्मा लूथर भी' जो सदा प्रसन्न रहा करता था, अन्तिम अवस्थामे अपने जीवनसे निराश हो गया था। युवावस्थामे मरना बड़े ही दुःखकी बात है; पर बहुत अधिक दिनो तक जीवित रह कर अपने सभी सम्बन्धियोको अपनी आँखो मरते देखना भी तो कुछ कम दु खकी बात नही है। ऐसे दीर्घ जीवनसे अल्प जीवन ही कही अच्छा है।

ससारमे बहुतसे लोग ऐसे होते हैं, जो थोड़े दिनो तक बहुत ही सुख-पूर्वक जीवन व्यतीत करके मजेमे चल बसते हैं। इसी प्रकार आनन्द वृत्तिवाले कुछ ऐसे लोग भी होते है, जो कभी वृद्ध होना जानते ही नही, वे सदा अपनी प्रसन्न वृत्तिके कारण लड़के ही बने रहते हैं। गरमी, बरसात और जाड़ा सभी मौसिम आप आपको अच्छे हैं। सभीमे कुछ न कुछ गुण, कुछ-न-कुछ सौन्दर्य होता है। प्रकृति सदा अपना स्वरूप बदल कर नया स्वरूप धारण करती रहती है, और उसके प्रत्येक स्वरूपमे कुछ-न-कुछ

विशेषता, कुछ न कुछ गुण होता है। वृद्धावस्थामे जो आनन्द या दु ख होता है, वह युवा या मध्यम अवस्थाके आनन्द या दु.ख की मानो तल-छट मात्र है। सिडनी स्मिथ प्राय: बड़े ही आनन्दसे वेलरका निम्न लिखित पद्य कहा करता था—

The soui's dark cottage, batter'd and decay'd,
lens ın new lıght through chınks that tıme has made-

सिडनी स्मिथ स्वयं सदा प्रसन्न रहता था। यद्यपि अनेक अवसरो पर उसे बहुत कष्ट सहने पड़े थे और वह प्राय' रोगी रहा करता था, तथापि वह अपने आपको वहुत भाग्यवान् समझता और सदा प्रसन्न रहता था। जिस समय उसे गठिया, दमा और हड्डियोमे वहुत सख्त दर्द था, उस समय भी वह बहुत प्रसन्न रहता था और अपने इन रोगोके सम्बन्धमे मित्रोंको हास्य-पूर्ण पत्र भेजा करता था। साथ ही यह भी लिखा करता था कि मैं मजेमे हूँ।

मरते दम तक उससे मजाक नही छूटा। विलियम टाइटलर नामक एक प्रसिद्ध इतिहासज्ञने भी वहुत ही सुख और शान्ति-पूर्वक दीर्घ जीवन व्यतीत किया था। उसने अपने मित्रोंके लिये भी सुखी और शान्त रहनेका एक बहुत अच्छा नुसखा तैयार किया था, उस नुसखेमे "थोड़ा पर अच्छा भोजन, संगीत और अच्छा विवेक" था। काउण्ट नेसेलरोडसे जब किसीने पूछा कि आप वृद्धावस्थामे भी इतने शक्ति सम्पन्न क्यो है, तो उन्होने उत्तर दिया कि संगीत और फूलोके कारण।

वृद्धावस्थामे जब यूलरकी आँखे जाती रही थी, तब वह अपने नाती-पोतेके साथ हँस-खेल कर सुख-पूर्वक अपना समय विताया करता था; राविन्सन भी अपने पोतेको देख कर वहुत प्रसन्न

होता था। वह उस नन्हेसे बालकको बढ़ते हुए और विशेषतः उसके अनेक स्वाभाविक ज्ञानोंको देखकर बहुत ही आनन्दित होता था। वह बड़े ही कौतुकसे देखा करता था कि जब वह अबोध शिशु इधर उधर लुढ़कता फिरता था, तब ईश्वर किस प्रकार गुप्त-रूपसे उसकी रक्षा किया करता था। एडिनबराका एक प्रोफेसर डा० ब्लैक मरते दम तक शान्त, धीर और प्रसन्न था। इकहत्तर वर्षकी अवस्थामे जब वह मरने लगा, तब वह एक कुरसी पर बैठा हुआ था। उस समय उसके हाथमे दूधका क़टोरा था। पर उस कटोरेमेसे एक बूँद दूध भी उसके घुटने पर नहीं गिरा। प्रसिद्ध इतिहासज्ञ डा० हेनरीने भी बहुत ही शान्ति-पूर्वक अपने प्राण त्यागे थे। मरनेसे कुछ दिन पहले उन्होने अपने एक मित्र सर हेरी मानक्रेफको यह लिख कर मिलनेके लिये तुरन्त बुलाया था कि इस सप्ताह मै मरूँगा। जब सर हेरी उनके मकान पर पहुँचे, तब उन्होने देखा कि डा० हेनरी एक कुरसी पर बैठे हुए बाते कर रहे है। पर उनकी चेष्टा-से विदित होता था कि अब ये न बचेगे। इसके दो एक दिन बाद एक दिन घोड़ेकी टापोकी आहट सुनाई दी। डा० हेनरीने अपनी स्त्रीसे पूछा कि यह कौन है। उन्होने खिड़कीमेसे झाँक कर देखा और कहा कि वह दुष्ट पादरी आ रहा है। इस पादरीके सम्बन्धमे यह प्रसिद्ध था कि जिस मरणोन्मुख रोगीके यहाँ वह जाता था, वहाँसे वह फिर कभी टलता न था। डा० हेनरीने कहा कि उसे यहाँ मत आने दो। पर इतनेमे ही वह दरवाजे तक पहुँच गया। डाक्टरने अपनी स्त्रीको इशारा कर दिया और स्वयं इस प्रकार वे आँखे बन्द करके पड़ गये कि मानो सो रहे हैं। सर हेरी और श्रीमती हेनरीने इशारोसे पादरीको

समझा दिया कि डाक्टर महाशयकी अभी आँख लगी है, इस लिये जरा भी न बोलना। वह पादरी वहुत देर तक वैठा रहा और कई बार उसने कुछ वोलना भी चाहा। पर लोगोंने उसे इशारेसे मना कर दिया। थोड़ी ही देर वाद इशारेसे उसे वहाँसे हटा भी दिया। जव वह अपने घोड़े पर सवार होकर दूर निकल गया और टापोंकी आहट वन्द हो गई, तव डाक्टर महाशय खिल-खिला कर हँस पड़े। उसी रातको शान्ति-पूर्वक उनका शरीर छूट गया।

कुछ लोग ऐसे भी होते हैं, ज्यों-ज्यों मृत्यु समीप आती जाती है त्यों-त्यों जिनकी उन्नति करनेकी कामना वरावर वढ़ती जाती है। निकोलस पाउसिन नामक चित्रकारकी वृद्धावस्थामे यही दशा थी। ज्यों-ज्यों दिन वीतते थे त्यों-त्यों सर्व-प्रथम चित्रकार वननेकी उसकी इच्छा वढ़ती जाती थी। गेन्सवोरोने पचास वर्ष तक चित्रकारी करनेके उपरान्त कहा था कि अव मानो मैंने चित्रकारी सीखना आरम्भ किया है। अव आप ही सोचिए कि ऐसा आदमी "आरम्भ" करके कितनी तत्परतासे काम "सीखेगा।" रैन वृद्धावस्थामे प्रतिवर्ष अपनी सवसे वड़ी कृति, सन्तपालका गिरजा देखने जाया करता था और उसे देख कर वह वहुत प्रसन्न होता था।

कोशकार पिटर बेलकी मृत्यु भी वड़ी ही विलक्षण हुई। वह सवेरे उठ कर प्रूफ देखने लगा और उसी दशामें मर गया। इसी तरह और भी कई ऐसे लोग हो गये हैं, जो रास्ता चलते हुए अथवा भोजन करते हुए गिर पड़े और तुरन्त मर गये हैं। इस प्रकारकी अचानक मृत्युसे न तो मरनेवालेको विशेष कष्ट होता है और न उसके साथियों-सम्वन्धियोंको। हाँ, उन लोगोंको इस

बातका अवश्य दुःख हो सकता है कि मरनेवाला, रोगी नही हुआ और हम उसकी चिकित्सा और सेवाशुश्रूषा नही कर सके। अन्त समयसे दो एक दिन पहले तक बराबर अच्छी तरह अपना काम करते रहनेवाले तो और भी बहुतसे लोग हो गये हैं।

यदि रोगोसे बहुत अधिक कष्ट पानेवाले लोग उन कष्टोसे बचनेके लिये मर जानेकी कामना करें, तो इसमे आश्चर्य्यकी कोई बात नही है। पीड़ा, काम करनेकी शक्ति न होना, आशाओका धीरे-धीरे नष्ट हो जाना, प्रसन्नताका ह्रास, बढ़ती हुई वृद्धावस्था और निश्चयात्मक मृत्युका ज्ञान आदि बाते ऐसी है, जिनके कारण लोग यही चाहते है कि किसी प्रकार जीवनका अन्त हो जाय और संसारकी झंझटोसे छुटकारा मिले। विलियम हटनने अपनी जीवनीमें लिखा है—"मृत्यु ज्यो-ज्यो समीप आती है, त्यो-त्यो भय कम होता जाता है। स्वस्थ दशामे ही मृत्युका भय होता है, रुग्णावस्थामे नहीं। उस समय संसारमे न तो कोई आकर्षण या मनोहारिणी शक्ति रह जाती है और न भविष्यका किसी प्रकारका भय।"

युवक जिस समय किसी प्रकारकी उन्नति करनेके प्रयासमे लगा हो, उस समय उसका मरना बहुत ही बुरा होता है। उसके मनमे बहुत अच्छी-अच्छी आशाएँ होती हैं, उसके मित्र उसे उत्साहित करते हैं और वह सदा जीवित ही रहना चाहता है। एक विद्वान् युवावस्थामे ही जब कि वह एक कलामे बहुत उन्नति करनेके प्रयत्नमे लगा हुआ था, अचानक बहुत बीमार पड़ गया। उसके भाईने उसे ढारस दिलाया कि तुम घबराओ मत, जल्दी अच्छे हो जाओगे। उसने उत्तर दिया कि "नही, इस प्रकार बीमार

होकर और मृत्युके मुख तक पहुँच कर बचना बहुत ही कठिन वल्कि असम्भव है। यह सीखनेमें बहुत समय लगता है कि मनुष्यको किस प्रकार अपना जीवन व्यतीत करना चाहिए और किस प्रकार काम करना चाहिए।" अन्तमे वह विद्वान् नही बचा और तेतालीस वर्षकी अवस्थामे ही मर गया। उसकी अनेक बड़ी-बड़ी आशाओंका भी उसके साथ ही अन्त हो गया।

लेकिन बुड्ढोंकी बात दूसरी है। बुड्ढे प्रायः अपने सब काम कर चुकते हैं, उनका जीवन सुख-पूर्ण नही, वल्कि बहुतसे अंशोंमे बोझ होता है। एक वृद्ध महात्माने मरते समय कहा था कि मुझे ऐसा जान पड़ता है कि मानो मै देहातमे घूमने जा रहा हूँ। बैक्सटरने कहा है कि मरना मानो एक दुःखदायी साथी का साथ छोड़ना अथवा काटनेवाला जूता उतारना है। एक और विद्वान् ने भी वृद्धावस्थामे मरते समय यही बात कही थी और कहा था कि मैं इस मरनेसे बहुत ही प्रसन्न हूं। प्रसिद्ध रूसी लेखक निकोलस सोगोलने मरते समय कहा था कि "यदि लोग जानते कि मरना कितना सुखदायक है, तो वे कभी मरनेसे इतना न डरते।" इसके अतिरिक्त कुछ लोग ऐसे भी हो गये हैं, जो सदा अनेक रोगोंसे पीड़ित रहते थे और जो वास्तवमे अवश्य ही मृत्युके आकांक्षी होंगे। पर कठिन पीड़ाके समय भी वे बहुत ही प्रसन्न रहते थे; मानो वे मृत्युकी प्रतीक्षा ही प्रसन्नता-पूर्वक करते थे।

प्रायः लोग मृत्युसे नही डरते। बहुतसे लोग युद्ध-क्षेत्रमे प्रसन्नता-पूर्वक प्राण देते हैं और जान-बूझ कर बड़े ही उत्साहसे ऐसे स्थान पर पहुँच जाते हैं, जहाँ उनके जीवित बचनेकी बहुत ही कम सम्भावना होती है। बहुतसे लोग शिकार खेलनेके

समय अपनी जान जोखिममे डाल देते है। बहुतसे लोग दूसरोके प्राण बचानेके लिये जलती हुई आग या लहराते हुए समुद्रमे कूद पड़ते है। बहुतसे लोग कर्त्तव्य-पालनके सामने अपने प्राणो-को कुछ नही समझते। लार्ड बेकनने कहा है—"मरना भी उतना ही स्वाभाविक और अनिवार्य्य है, जितना की जन्म लेना। जब आदमीको कोई चोट लगती है, उस समय तुरन्त ही उसे प्रायः कोई पीड़ा नही जान पडती। ठीक इसी ताजी चोटकी-सी दशा उस मृत्युकी भी है, जो किसी प्रयासमे दत्तचित्त रहनेके समय होती है। इसलिये यदि मनुष्य किसी शुभ कार्यमे लीन रहे, तो मृत्युका कोई भय न होगा" सर बेंजिमिन बारडीने बहुतसे लोगोको जन्म लेते और मरते देखा था। उनका कथन है कि मैंने केवल दो आदमियोको मरते समय भयभीत होते देखा, पर उन दोनो आदमियोके शरीरसे बहुत अधिक रक्त बह रहा था। इससे सिद्ध होता है कि निरन्तर रक्त बहनेके कारण जो मृत्यु होती है, वह बहुत ही कष्टदायक और भयानक होती है।

प्रकृतिने हमारे शरीरमे प्राण डालनेका तो केवल एक मार्ग बनाया है, पर शरीरसे प्राणके निकलनेके सैकड़ा साधन बनाये हैं। वह हमे जीवन-प्रदान करती है और उसकी रक्षाके साधन हमारे अधिकारमे कर देती है। बीच-बीचमे ऐसी घटनाएँ हो जाती हैं, जो उन साधनोको हमारे अधिकारसे छीने लेती हैं और तब हमारी मृत्यु हो जाती है। एक यूनानी कविके सिर पर एक गिद्धने एक कछुआ गिरा दिया, जिससे उस कविकी मृत्यु हो गई। सुप्रसिद्ध वीर हेक्टरकी आकृतिका एक युवक था। उस युवकको देखनेके लिये इतने लोग टूट पड़े कि उन्हींकी भीड़मे वह कुचला जाकर मर गया। प्रसिद्ध विजयी विलियमकी मृत्यु

एक गरम कोयले से हो गई थी। तृतीय विलियमकी मृत्यु घोड़ेके भड़कनेसे हुई थी। सर रावर्ट पील रास्तेमे एक पत्थरकी ठोकर लगनेसे मर गये थे। मोलियर रग-मंच पर अभिनय करता हुआ मर गया था। एण्ड्र मारवेलकी एक सभामे वैठे-वैठे मृत्यु हो गई थी। एक यात्री जो सहस्रो दुर्घटनाओसे वच गया था, अचानक अपनी ही बन्दूककी गोली लगनेके कारण मर गया था। एक वहादुर कमाण्डर जिसने तीन वार पृथ्वीकी परिक्रमा की थी, एक नाव पर वैठ कर छोटी-सी नदी पार करनेके समय मर गया था। वड़े-वड़े समुद्री तूफानोसे वचनेवाला एक कप्तान जहाज परसे एक छोटी नावके द्वारा किनारे पर जानेके समय मर गया था। नेपोलियनके साथ अनेक युद्धोमे वहुत ही वीरता-पूर्वक लड़नेवाला और सैकड़ो वार वाल-बाल बचनेवाला एक सैनिक अपनी भतीजीके साथ सतरंज खेलनेके समय कुरसी परसे पीछेकी ओर गिर पड़ा और मर गया था। समुद्र पार करके लंका पर विजय प्राप्त करनेवाले रामचन्द्रकी मृत्यु छोटी-सी नदी सरजूमे नहाते समय डूब जानेके कारण हुई थी। महाभारतके युद्धमे अर्जुनके रथ पर सबसे आगे वैठनेवाले श्रीकृष्णकी मृत्यु एक वहेलिएके तीरसे हुई थी। सगमरमरके फर्श पर पैर फिसल जानेके कारण हुमायूँ मर गया था। और सवसे वढ़कर दक्षिणके नाजुक-दिमाग मुसलमान वादशाह दानाशाहकी मृत्यु एक घूसको देखनेसे हो गई थी।

इसी प्रकार बहुतसे लोग नाव या जहाजके डूव जाने, मकानके गिरने, सॉपके काटने, शेरके फाड़ने और आगके लगनेसे मर जाते हैं। किसीको कोई गोलीसे मार देता है और कोई जहर खिला कर किसीके प्राण ले लेता है। कोई रास्ता चलते

मर जाता है और कोई एक बार सोनेके वाद जागता ही नही, सोयेका सोया रह जाता है। वहुतसे लोग अचानक जरासे रोग या पीड़ासे मर जाते हैं। वहुतसे लोग ऐसे भी होते है, जो रोगके कारण मृतप्राय हो जाते है। घरवाले समझ लेते हैं कि ये मर गये, पर थोड़े ही समयमे वे मौतके मुँहसे भी वच निकलते है। वहुतसे लोग आपको ऐसे भी मिलेगे, जो यह कहेगे कि हम यमराजके दरबार तक पहुँच गये थे, पर उन्होने यह कह कर हमे वापस कर दिया कि अभी तुम्हारा समय नही है, तुम भूलसे लाये गये हो। विन्स्लो नामक एक डैनिश चिकित्सकके दो वार जीवित ही गाड़ दिये जानेकी नौवत आ गई थी। इसी लिये उन्होने "निश्चित मृत्युके चिह्न" नामक एक पुस्तक लिखी थी। और भी वहुतसे ऐसे लोग हो गये हैं, जिनके विषयमे लोगोने समझ लिया था कि अव इनमे जान नही है और जो कई-कई दिनके वाद होशमे आये थे। फ्रान्समे पहले जव कोई आदमी मरता था, तव वह नियमानुसार चौवीस घण्टेके अन्दर गाड़ दिया जाता था। सन् १८२६ मे वहाँके एक गाँवमे एक पादरीको वाज देते समय अचानक गश आ गया। सन्ध्या तक जव उसके जीवित होनेका कोई लक्षण दिखाई न दिया, तव उसे गाड़नेका सारा प्रवन्ध किया गया, यहाँ तक कि शव रखनेके लिये सन्दूक भी वन गया। उसे दफन करनेके लिये लोग ले जाना ही चाहते थे कि इतनेमे आधी रातके समय उसका एक मित्र दूरसे उसकी मृत्युका समाचार सुनकर उसका मुँह देखनेके लिये आया। उस मित्रकी आवाज सुन कर पादरीने आँखे खोल दी। पीछे उसी पादरीने फ्रान्सकी सिनेट सभामे प्रार्थना-पत्र भेज कर शवको गाड़नेकी मुद्दत वढ़वाई थी।

बहुतसे लोगोंके प्राण रण-क्षेत्रमे विजय प्राप्त करते ही निकल गये हैं। एक मरणोन्मुख वीरने मृत्यु-शय्यासे उठ कर प्राण दिये थे। सर हम्फ्री गिलबर्टने अपने जहाजके साथ डूबते समय कहा था—"स्वर्ग समुद्रके रास्ते भी उतना ही समीप है, जितना स्थल-मार्गसे है।" एडमिरल ब्लैक विजय प्राप्त करके लौटनेके समय दूरसे इंगलैण्डके दर्शन करते ही मर गया था। जेनरल उल्फ जब क्वाबेकमें लड़ रहे थे, तब किसीने कहा कि "देखो, वे लोग कैसे भाग रहे हैं।" जनरलने पूछा—"कौन।' उत्तर मिला "शत्रु"। जनरलने कहा—"तब तो मैं बड़े सुखसे मरूँगा।" यह कहते ही वे गिर पड़े और मर गये। स्पेक नामक एक डच कमाण्डरने केवल इसी लिये अपने जहाजको बारूदसे उड़ा दिया था कि जिसमे वह शत्रु बेलजियनोके हाथ न पड़ने पावे। गदरके समय दिल्लीमे एक लेफ्टिनेएटने विद्रोहियोके गोले-बारूदमे आग लगा दी थी, जिसके कारण स्वयं उसकी मृत्यु हो गई थी। इस प्रकार उसने शत्रु से अपने देश-वासियोकी रक्षा की थी। युद्ध-क्षेत्रकी तरह बहुतसे लोग अपने सिद्धान्तोकी रक्षा या उद्देश्योके सम्बन्धमे भी विजय प्राप्त करते ही मर गये हैं; अथवा सिद्धान्तो की रक्षा या उद्देश्योकी पूर्त्तिके लिये जिन्होने बहुत ही प्रसन्नता-पूर्वक अपने प्राण दे दिये हैं। बहुतसे लोगोकी मृत्यु विज्ञान-सम्बन्धी अन्वेषण करते समय ही हुई है। म० रेटजियस जब मरने लगे थे, तब उन्होने स्वयं अपने शरीरकी जीवन-शक्तिके नष्ट होनेका निरीक्षण किया था। मरते समय उन्होने कहा था—"अब पैरोमे प्राण नही रहे, अब पेटके भीतरी भागोने अपना काम छोड़ दिया। अन्त समय बड़ा ही कठिन है, पर तो भी उसके मनोरंजक होनेमे सन्देह नही।" इसी प्रकार किसीने भूगर्भ-शास्त्र

सम्बन्धी परीक्षाएँ करते हुए और किसीने दर्शन-शास्त्र पर विचार करते हुए अपने प्राण दिये है और उनमेसे बहुतोने हँसते हुए और विनोद-पूर्ण बाते कहते हुए भी प्राण छोड़े है। भारत वर्षमे ऐसे बहुतसे लोग हो गये हैं, जिन्होने अपने यश और कीर्त्ति आदिकी रक्षाके लिये बड़ी ही प्रसन्नतासे प्राण दिये हैं। अपने गुरु वसिष्टकी गौकी रक्षा करनेके लिये राजा दिलीपने बहुत ही प्रसन्नता-पूर्वक अपने आपको सिहके सामने डाल दिया था। जीमूतवाहनने सर्पोंकी रक्षा करनेके लिये गरुड़को अपना शरीर दे दिया था। मृच्छकटिक नाटकमे चारुदत्तने एक स्थान पर कहा है—

"न भीतो मरणादस्मि केवलं दूंषितं यशः।
विशुद्धस्य हि मे मृत्युः पुत्रजन्मसमः किल" ॥

जब धर्म्मराज श्येन पक्षीका रूप धारण करके कबूतरके पीछे उड़े, तब वह कबूतर राजा शिविकी शरणमे गया। तब राजाने उसकी रक्षाके लिये अपने शरीरका मांस काट कर उस श्येनको दिया था। वृत्रासुरको मारनेके लिये जब दधीचिकी हड्डियोके वज्रकी आवश्यकता हुई थी, तब देवताओके प्रार्थना करने पर ऋषिने बड़े आनन्दसे अपना शरीर त्याग दिया था। जब इन्द्र ने छल-पूर्वक दानशूर राजा कर्णसे उनके जन्मजात कवच-कुण्डल माँगे थे, तब कर्णने अपनी कीर्त्तिको कलंकित करनेकी अपेक्षा मर जाना ही अधिक उत्तम समझा था। गुरु गोविन्दसिहके छोटे-छोटे बालको (जोरावरसिंह और फतेहसिह) ने सूबा सरहिन्दके लाख लालच देने और डराने-धमकाने पर भी मुसलमान होना स्वीकार नही किया, बल्कि जीतेजी दीवारमे चुने जाना ही अधिक उत्तम समझा। कृष्णकुमारीने अपने पिताकी आज्ञासे

सहर्ष विष पान कर लिया था। पद्मिनी अपने पतिव्रतकी रक्षाके लिये हजारो स्त्रियोको साथ लेकर जल मरी थी।

मृत्युकी उपमा निद्रासे दी जा सकती है। यदि उसमे कष्ट देनेवाली कोई वात है, तो वह केवल यही कि मरनेके समय श्वास-क्रिया धीरे-धीरे वन्द होती जाती है और कुछ समयके उपरान्त वह विल्कुल ही वन्द हो जाती है। मृत्युका बहुत कुछ काम पहले तो रोग ही कर लेता है और तब उसके उपरान्त जो मृत्यु होती है, वह अधिक कष्टदायक नही होती। यद्यपि मरनेवालेकी आकृतिसे वहुत कुछ कष्ट और पीड़ाके चिन्ह प्रकट होते है, पर वास्तवमे मरनेसे कुछ पहले ही सव प्रकारके कष्टोका अन्त हो जाता है। हाथ-पैर आदिमे उस समय जो ऐठन होती है, उसका मरनेवालेको कोई ज्ञान नही होता; अत' वह उसके लिये कष्ट-दायक भी नही होती। उसके ज्ञात न होनेका मुख्य कारण यह है कि उसे बोध करनेकी शक्ति पहले ही नष्ट हो जाती है। वास्तव-मे हमारी आत्मा या जीवन-शक्ति बड़ी ही सरलतासे हमारे शरीर-से पृथक् होती है। स्पेन्सरने कहा है कि परिश्रमके उपरान्त निद्रा, तूफानवाले समुद्रके उपरान्त वन्दर, युद्धके उपरान्त शान्ति और जीवनके उपरान्त मृत्यु बहुत ही सुखदायक होती है। जिस समय मनुष्य मरने लगता है, उस समय वह एक बार अपने पूर्ण जीवन पर पूरी दृष्टि डालता है और मन अपने आपको पहलेकी अपेक्षा अधिक श्रेष्ठ दशामे पाता है। मृत्युके समय मनुष्य मानो अपने गत जीवनका एक विलक्षण सिहावलोकन करता है, पर उस समयका ज्ञान कुछ हलका होता है। शरीर-शास्त्रज्ञोका मत है कि मनकी उस समय प्रायः वैसी ही स्थिति होती है, जैसी कि स्वप्नके समय होती है।

गाथे प्रातःकाल उठकर बाल-सूर्य्यकी शोभा निरखनेके लिये बाहर जाना चाहता था कि इतनेमे मौतने उसे आ दबाया। वह पड़ गया और बोला—"यह तो और भी अधिक प्रकाश है।" शिलर बहुत दिनो तक रोगी रहनेके उपरान्त जब मरने लगा, तब उसके एक मित्रने पूछा—"इस समय तुम्हे क्या मालूम होता है?" उसने उत्तर दिया—"शान्ति! शान्ति!!" थोड़ी देर बाद उसने फिर कहा—"मुझे बहुत-सी चीजे अब और भी अधिक स्पष्ट दिखाई देती हैं।" कीट्सको भी मरनेके समय अपनी दशा अधिक उत्तम जान पड़ती थी और उसे ऐसा मालूम होता था कि मेरे शरीर पर एक प्रकारके बहुत सुन्दर और चमकीले फूल लग रहे है। हम्बल्टको मरते समय बहुत ही सुन्दर किरणें दिखाई पड़ती थीं। फिशेका लड़का जब अन्त समयमे उसके पास औषध लेकर पहुँचा, तब उसने कहा—"मुझे अब इसकी जरूरत नही है। मैं आगेसे अच्छा हूँ।" रिचरने मरते समय कहा था—"अब विश्रामका समय आ गया है।" जान्सन ने मरनेके समय लोगोको श्रेष्ठ जीवन व्यतीत करनेका उपदेश दिया था। सर वाल्टर स्काटने अपने दामादको उपदेश दिया था कि सदा धार्म्मिकता और उत्तमता-पूर्वक जीवन व्यतीत करो, इन्ही बातोसे तुम्हे मरते समय सबसे अधिक सुख और शान्ति मिलेगी। सर वाल्टर रेलेसे उसके घातकने अंतमे कहा कि सिर पूरबकी तरफ करके लेट जाओ। उसने उत्तर दिया—"सिर चाहे कही हो, हृदय ठीक रहना चाहिए।"

प्लेटो बयासी वर्षकी अवस्थामे मरनेके समय लिख रहा था। ल्यूकन और रोसकामन मरते समय कुछ पद्य पढ़ रहे थे। हरडरके प्राण भी लिखते समय ही निकले थे। डेन्मार्कके राजा

द्वितीय फ्रेडरिकने मरते समय डाक्टरसे कहा था—"नाड़ीको जाने दो, ईश्वर अवश्य हम लोगो पर दया करेगा।" वाटने मरते समय कहा था—"मैं मरनेके लिये ईश्वरीय आज्ञाकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ।" डा० काम्ब मरनेके समय बहुत ही प्रसन्न था। एक डेनिश कविने मरनेके समय अपने पुत्रसे आत्माके अमरत्वके सम्बन्धमे एक ग्रीक पद्य पढ़नेके लिये कहा था।

एथेन्सके प्रसिद्ध वीर पेरिक्लीसने मरनेके समय कहा था कि मै अपने लिये सबसे अधिक आदरकी यही बात समझता हूँ कि मेरे द्वारा कभी मेरे किसी देशवासीकी हत्या नही हुई। डेन्मार्कका राजा पंचम फ्रेडरिक भी मरते समय इसी लिये प्रसन्न था कि उसके द्वारा कभी किसीके प्राण नही गये। नेलसनने कहा था कि ईश्वरको धन्यवाद है कि मै अपना कर्त्तव्य कर चुका। स्वीडनके राजा गस्टेवस एडलफसने कहा था कि मैंने जर्मन-जाति की स्वतंत्रता और धर्म्मको अपने खूनकी मोहरसे बन्द कर दिया है। युद्ध-क्षेत्रमे सर फिलिप सिडनी मरनेके समय पानी पीना चाहते थे। पर उन्होने देखा कि पासहीके एक मरते हुए सिपाहीकी नजर उनके पानी पर लगी हुई थी। उन्होने चट पानी उसे दे दिया और कहा—"तुम्हे इसकी अधिक आवश्यता है।" सर जानमूर इतने अधिक घायल हो गये थे कि उनके बचनेकी कोई आशा नही थी। इस लिये उन्होने डाक्टरोसे कहा था—"तुम मेरी कोई सेवा नही कर सकते; उन सिपाहियोके पास जाओ, तुम जिनके काम आ सकते हो। मैं तुम्हारे साध्यके बाहर हूँ।" इसी प्रकार और भी अनेक राजनीतिज्ञो और देश-सेवको आदिने मरनेके समय समाधान और सन्तोष प्रकट किया है। पर इस बातका ध्यान रखना चाहिए कि मरनेके

समय केवल उन्ही लोगोको सुख और समाधान होता है, जो अपने जीवनमे सदा अच्छे अच्छे कार्य्य करते हैं। पापियो और अत्याचारियोको मरनेके समय कभी सुख या समाधान नही हो सकता, क्योकि अपने गत जीवनके सिहावलोकनमे उन्हे कोई सुखदायक या समाधानकारक बात दिखलाई ही नही देती। सन्त बारथोलोम्यूके दिन फ्रान्सके राजा चौदहवें चार्ल्सने अपनी जिन प्रजाओंको आज्ञा देकर मरवा डाला था, उनका कराहना उसे मृत्यु-शय्या पर भी सुनाई देता था। राजा चौदहवें लुईने अपने देशसे बहुतसे ह्यूगेनाट्सको अनेक प्रकारके कष्ट दिये थे और उनमेसे बहुतोको मरवा डाला था। उसके भयसे बहुतसे लोग जर्मनी, हालैण्ड, इगलैण्ड और यहाँ तक कि दक्षिण अफ्रिका चले गये थे। भाई एक देशमे था, तो बहन दूसरे देश मे; माता एक देशमे थी, तो पुत्र दूसरे देशमे। अतः चौदहवे लुईको भी मरनेके समय ही कष्ट हुआ था।

सन् १६२० मे एक बड़े राजनीतिज्ञकी माताके मरनेके समय कवि और उपदेशक चार्ल्स फिज-जाफरीने जो कुछ कहा था, उसका आशय देकर हम यह अन्तिम प्रकरण समाप्त करते हैं। उसने कहा था—

मनुष्यका जीवन एक पुस्तकके समान है। उसका जन्म मुख-पृष्ठ है, विलाप पाठकोंके प्रति प्रार्थना है, शैशव और बाल्यावस्था प्राक्-कथन और विषय-सूची है, जीवन और कार्य्य विषय है, अपराध और दोष उसकी भूले हैं और पश्चात्ताप उनका संशोधन है। उनमे भी कुछ किताबें बड़ी होती हैं और कुछ छोटी। किसीकी जिल्द बढ़िया होती है, किसीकी सादी। किसीका विषय उत्तम होता है और किसीका निकृष्ट। पर सबके

अन्तिम पृष्ठ पर एक ही शब्द—"इति" होता है। किसी मनुष्य का जीवन दीर्घ होता है, किसीका अल्प; किसीका दृढ़ होता है किसीका निर्बल, किसीका अच्छा होता है, किसीका बुरा, किसीका पवित्र और किसीका अपवित्र; पर मृत्यु उन सबकी "इति" करनेके लिये आती है, क्योंकि सब मनुष्योंका अन्तिम परिणाम यही है।"

समाप्त